अमरीका-दिग्दर्शन

सत्यदेव

अमरीका-दिग्दर्शन

लेखक—

स्वामी सत्यदेव परिव्राजक

रचयिता

"शिक्षा का आदर्श", "कैलाश-यात्रा", "सत्य-निबन्धावली",
"अमरीका-भ्रमण", "मनुष्य के अधिकार",
"राजर्षिभीष्म", इत्यादि

——:o:——

The United States of America is the largest Nation in the world, in population, area, and wealth, whose people speak one language and enjoy the privilege of self government.

—F. J. Haskin.

प्रकाशक

साहित्योदय-कार्यालय

प्रयाग

तृतीयावृत्ति २००० } सं० १९७८ { मूल्य ।)

प्रकाशक,
भवानीप्रसाद गुप्त
साहित्योदय-कार्यालय
प्रयाग।

मुद्रक—
बा० विश्वम्भरनाथ भार्गव,
स्टैंडर्ड प्रेस, प्रयाग।

भूमिका

कौन मनुष्य ऐसा है जो दोष रहित हो। कौन ऐसी जाति है जिसमें निर्बलताये नहीं हैं। निर्दोष और पूर्ण तो केवल परमात्मा ही हैं। विकास सिद्धान्त के अनुसार सब का उद्देश्य उसी पूर्ण पुरुष की ओर जाने का है। इस दौड़ में कोई मनुष्य आगे है कोई मनुष्य पीछे; कोई जाति पीछे है कोई आगे। जो पीछे है, उसका कर्त्तव्य है कि अपने से आगे बढ़ी हुई जाति के गुणों से लाभ उठावे; उन्नतिशील जाति ने जो जो उद्योग और परिश्रम किये हैं उन को अपने अनुकूल बना उनका यथायोग्य उपयोग करे। मनुष्य दूसरों के सङ्ग से ही अपने गुण दोष जान सकता है; जातियां भी पारस्परिक सम्बन्ध द्वारा ही उन्नत पथ अनुगामिनी हो सकती हैं। अमरीका इस समय भारतवर्ष से बहुत आगे है। भारतवासियों को इस समय अमरीका की उन्नति के मर्म का जानना अत्यावश्यक है। मैं अमरीका में साढ़े पांच वर्ष के क़रीब रहा हूं। मैंने जो कुछ वहां देखा भाला है, उसका आनन्द तो पाठकों को 'अमरीका-दिग्दर्शन' पढ़ने से ही मिलेगा। परन्तु उसका स्वाद मात्र मैं निम्नलिखित कविता द्वारा पाठकों को चखाता हूं। मैं कवि नहीं हूं; मुझे कविता करना नहीं आता। यह मैं जो अमरीका सम्बन्धी भजन लिखता हूं, यह केवल अपने अनुभवों का सारांश समझाने के लिये है—

भजन

—०—

१—जिस देश में गया था, हूं हाल अब सुनाता।
ज़रा ध्यान धर के सुनना, जो 'देव' यह बताता॥

२—हरएक मर्द औरत, जिसको था मैंने देखा।
वह देश हित नशे में, फूला न था समाता॥

३—चाहे जान तन से जावे, पर देश पै फिदा हैं।
छोटे बड़ों में सब में, हुब्बे वतन था पाता॥

४—उनकी है एक भाषा, और एक राष्ट्र उनका।
अच्छे साहित्य द्वारा, उसका है यश बढ़ाता॥

५—झण्डा है जो मुल्क का, उसके हैं वे उपासक।
सब कोई उसके सन्मुख, सिर अपना है झुकाता॥

६—ख़तरे में जब मुल्क हो, और कोई आवे दुश्मन।
क्या मर्द हो क्या औरत, झण्डे के नीचे आता॥

७—उनका यही धर्म है, उनका यही मज़हब है।
इस देश हित के कारण, वह उच्च है कहाता॥

८—आपस में चाहे कितने, मज़हबी फसाद होवें।
पर देश हित के सन्मुख, सब कुछ है भूल जाता॥

९—इस एक गुण के कारण, जाति में एकता है।
कैसा हो भारी दुश्मन, उसका भी दिल दहलाता॥

१०—तालीम तो वहां पर, सबको मुफ़्त है मिलती।
कैसा ही हो अभागा, वह भी इल्म को पाता॥

११—तादाद में करोड़ों, अख़बारों की खपत है।
हर कोई उनको पढ़कर, दिल अपना है बहलाता॥

१२—इज़्ज़त वे औरतों की, करते हैं सच्चे दिल से।
उनको है जो सताता, भारी सज़ा को पाता॥

१३—कोई न दीख पड़ता, भिखमङ्गा उस मुल्क में।
मज़दूर छः रुपये, है रोज़ के कमाता॥

१४—उनके यहां की चीज़ें, हर एक मुल्क जातीं।
खिच खिच के धन जहां से, उनके यहाँ है आता॥

१५—न्यूयार्क, बोस्टन में, देखी बड़ी दुकानें।
करोड़ों का माल जिनमें, आसानी से समाता॥

१६—चालीस मंज़िलों के, बनते हैं घर वहां पर।
बिजली की रोशनी से, हर एक जग मगाता॥

१७—न ऊंच नीच जानें, न छूत छात मानें।
सब के हक़ूक़ बराबर, सब की है एक माता॥

१८—भारत को गर उठाना, चाहते हो दिल से अब तुम।
तो एक भाषा कर दो, तज ऊंच नीच नाता॥

१६—विनती यही है करता, कर जोड़ 'देव' तुम से।
अब छूत छात छोड़ो, भारत है सब की माता॥

पाठक, बस यही भजन, 'अमरीका-दिग्दर्शन' की भूमिका समझिये। इस पुस्तक में छपे बहुत से लेख सरस्वती में निकल चुके हैं, उनके लिये मैं सरस्वती प्रकाशक बाबू चिंतामणि घोषजी को जितना धन्यवाद दूं, वह थोड़ा है। 'मर्य्यादा' के सम्पादक पंडित कृष्णाकान्त मालवीयजी को भी मैं धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता, जिन्होंने मुझे मेरे मर्य्यादा में छपे लेखों को छापने की आज्ञा दी।

प्रथम संस्करण की भूमिका के अनुसार इतना कथन करने के बाद इस नवीन संस्करण के विषय में कुछ निवेदन करता

हूं। इस पुस्तक की कई महीनों से मांग थी और दिन प्रति-दिन मांग बढ़ रही थी, इसलिए कागज की महंगी की कुछ परवाह न कर मैंने इसके नवीन संस्करण का प्रबन्ध किया। प्रेस अपना न होने से जो कुछ कठिनाइयां मुझे सहनी पड़ी हैं, और जिस प्रकार के कुटिल और कायर मनुष्यों से वास्ता पड़ा है उसको मैं ही जानता हूं। ईश्वर का बड़ा धन्यवाद है कि इस पुस्तक को इस दशा में मैं आप भाइयों के सन्मुख रख सका हूं। यह आधी एक प्रेस में छपी है और आधी दूसरे में; और भूमिका तीसरे प्रेस में छपी है। इतने में ही आप मेरी दिक़्क़तों को थोड़ा बहुत अनुभव कर लेंगे। मैंने इस संस्करण को अपनी शक्ति अनुसार सुन्दर बनाने का यत्न किया था, किन्तु मुझे जैसी सफलता प्राप्त हुई है उसका फैसला पाठक महाशय स्वयं कर सकते हैं।

प्रयाग
६ अगस्त १९१६

विनीत-
सत्यदेव परिव्राजक।

विषय-सूची

विद्वद्वर

पण्डित महावीर प्रसाद जी

द्विवेदी के करकमलों में

समर्पित।

अमरीका-दिग्दर्शन ।

शिकागो में मेरी प्रथम रात्रि

दूसरी जून १९०६ का दिन मेरे जीवन में एक बहुत बड़ा परिवर्तन डालने वाला था। भारतवर्ष की प्राचीन नगरी काशी में साधारण वृत्ति पर विद्याभ्यास करते हुये, संसारिक व्यवहारों से अनभिज्ञ मेरे जैसे पुरुष का अमरीका के प्रसिद्ध शिकागो नगरमें बिना किसी प्रकारकी जान पहिचान के प्रवेश करना, वास्तवमें एक आश्चर्य्य-जनक बात थी। मेरे पास कोई परिचय-दायक पत्र भी किसी मित्रके नामका न था, यहां तक कि मैं इसके पूर्व कभी अपने जीवनमें किसी होटलमें नहीं गया था। कांटे और छुरीसे किस प्रकार लोग खाना खाते हैं? कैसे किसीके साथ यहां बात चीत करते हैं?–इत्यादि बातोसे मैं बिलकुल ही अनजान था।

प्रातःकाल १० बजे मैं वैंकोबरसे शिकागो पहुंचा। वैंकोबरसे शिकागो २८०० मीलके क़रीब है। जब गाड़ी स्टेशन

पर पहुंची और "शिकागो" यह ध्वनि मेरे कानमें आई, तब मैंने जाना कि स्टेशन आगया। सब लोग जो गाड़ियोंमें थे, बाहर निकले और चल दिये। मैंने कहा—"मैं कहां जाऊँ?" सबसे पीछे मैं अपना ट्रङ्क सँभाल गाड़ीसे नीचे उतरा। जब टिकट देकर बाहर आखड़ा हुआ तब एक गाड़ीवालेने मुझसे पूछा कि कहां जाना होगा? कहां बतलाता? किसी जगहका नाम भी नहीं जानता था, जहां जाकर ठहर सकता। सोचते सोचते Y. M. C. A. (यंग-मेन्स-क्रिश्चियन-एसोसिएशन) का नाम स्मरण आया। अहा! ईसाइयोंकी क़दर बाहर आकर मालूम होती है! ये सभायें क्या ही अच्छी हैं। यहां पर नवयुवक देशकी-जातिकी-सेवा करना सीखते हैं; कोई परदेशी आवे तो उसकी सहायता करते हैं, और एक हमारे देशकी धार्मिक सभायें हैं जिनका समय आपसके शास्त्रार्थ और एक दूसरेकी मानहानिमें व्यतीत होता है। तभी तो यह दुर्दशा है।

गाड़ीमें बैठे बैठे मैं लोगोंको इधर उधर देखता था। सब साफ़ सुथरे थे। नये बूट, नये सूट, बाल सँवारे हुए, क्या स्त्री, क्या पुरुष, सभी इधर उधर जारहे थे। चार दिनके लगातार सफरसे मेरे कपड़े काले होगये थे। ख़ासकर पतलून तो बहुत ही मैली होगयी थी। मेरे सारे वस्त्र बड़े सन्दूकमें, जो माल गाड़ीमें रक्खा गया था, थे; और नया सूट न होने से मैं कपड़े बदल नहीं सकता था। मैं बार बार अपने कपड़ोंकी ओर देखता और अपना मुकाबला सड़क पर जाते हुए लोगोंके साथ करता था। इतनेमें गाड़ी Y. M. C. A के पास आगई। गाड़ीवानने दरवाज़ा खोला। एक लड़का फौरन असबाब उठानेके लिये आगे बढ़ा; परन्तु जब उसने मेरे मैले कपड़े और चार दिनकी डाढ़ी देखी तब ठहर गया। मैंने

उसके चेहरे पर मुस्कराहट पाई। मैंने अपना ट्रङ्क उठाया और उस बड़ी अट्ट लिकामें गया। दूसरी मंज़िल पर एसोसिएशनका दफ़्तर था। जब मैं अन्दर गया, एक नवयुवक मुझे मंत्री महाशयके पास लेगया; जो बड़ी नम्रतासे मेरे साथ पेश आये। उन्होंने मुझे किसी होटलमें जानेकी सम्मति दी। मैं चाहता था किसी जापानी विद्यार्थीका पता लग जाय तो अति उत्तम हो। एसोसिएशन के मंत्री ने कई जगह टेलीफोन किया, परन्तु कुछ पता न मिला। मुझे महाबोधी सोसाइटीका पता मालूम था, सो मैंने वहां जाकर किसी जापानी विद्यार्थी-का स्थान जाननेका निश्चय किया। अपना ट्रङ्क Y. M. C. A. में रख, मैं इस सोसाइटीकी तलाशमें निकला।

सड़क पर अजीब दृश्य था। स्त्रियां, पुरुष इधर उधर भागेसे जा रहे थे। साफ सुथरे, प्रसन्नबदन, अपने अपने कार्यों में ऐसे लगे हुए थे जैसे मधुमक्षिकायें। किसीको आलसियोंकी भांति जाते हुए न देखा। सभी फुरतीले थे। क्या बुड्ढे, क्या युवा, क्या बालक, क्या बालिकायें, सभी काल चक्रकी भांति घूमते थे। एक ओर छोटे छोटे बालक "डेलीन्यूज़" "रेकार्ड हेरल्ड" नामक दैनिक पत्र बेचते फिरते थे। बिजलीकी गाड़ियां खचाखच भरी हुईं इधरसे उधर, उधरसे इधर, चल रहीं थीं। घोड़े गाड़ियां, छकड़े, माल असबाबसे लदे हुए दिखाई देते थे। दूसरी ओर बड़े बड़े लोहेके खम्भों पर, सड़कसे ४० गज़ ऊँचे आकाशमें एक और सड़क थी, जिस पर दूसरी बिजलीकी गाड़ियां (Elevator Cars) गड़गड़ शब्द करती हुई इधर उधर भाग रही थीं।

मार्गमें मुझे सबसे पहिले मेसानिक टेम्पल (Masonic Temple की ऊँची इमारत मिली। यह २२ मंज़िला मकान

है ! आकाशसे बातें करता है । ख्याल हुआ विज्ञान क्या नहीं कर सकता ?

सोसाइटीके मकानका पता मैंने पुलिसके एक सिपाहीसे दरयाफ़ किया और शीघ्रतासे उस ओर रवाना हुआ । परन्तु शिकागो संसारके बड़े शहरोंमें तीसरे दरजेका है । इसकी गलियां ५० मील लम्बी हैं ; एक तो २७ मील है, इसलिए मुझे उस मकान पर पहुंचनेमें २ घण्टेके करीब लग गये । रास्तेका दृश्य, मेरे लिए बहुत ही मनमोहक था । जब मैं मारशल फील्ड (Marshal Field) की आलीशान दूकानके पास पहुंचा तब उसे देखकर मैं विस्मयान्वित होगया । कितनी भारी दूकान ! क़रोड़ों रुपयेका सामान !! अनेक प्रकारकी वस्तु विक्रीके लिए मौजूद थी । चित्त चाहता था कि इसके अन्दर जाकर अच्छी तरह देखूं. परन्तु समय नहीं था, और मुझे चिन्ता रातकी रहनेकी थी ।

डीयरबारन गलीमें महाबोधी सोसाइटीका आफ़िस था । उस अट्टालिकाके पास पहुंचा तो मालूम हुआ कि आफ़िस १०वीं मञ्जिल पर है । मकानोंके ऊपर जानेके लिये क्या ही अच्छा प्रबन्ध किया हुआ है । एक जङ्गलेदार कोठरी रहती है । उसमें कोई दस आदमी खड़े हो सकते हैं । वह बड़े बड़े रस्सोंसे बंधी होती है । कोठरी क्या उसे एक प्रकारका खटोला कहना चाहिये । उसका सम्बन्ध प्रत्येक मञ्जिलके साथ होता है । इसके भीतर खड़े होकर जिस मञ्जिल पर जाना हो नौकरसे कह दो । वह उसी मञ्जिल पर पहूंचा कर दरवाज़ा खोल देता है । बस आप अपने कमरेमें चले जाइये । प्रत्येक इमारतमें इस प्रकारके तीन चार स्थान ऊपर नीचे

जाने आनेके लिये होते हैं। थोड़ा समय और अधिक लाभ, यह नियम प्रत्येक स्थानमें देखा जाता है।

मकानके ऊपर पहुंच कर दरयाफ़्त करने पर मालूम हुआ कि महाबोधी सोसाइटी ने अपना दफ़्तर बदल लिया है। एक मेम साहबाने बड़े प्रेमसे मुझे नये आफिसका पता लिख कर दिया। मैंने उसे तलाश करनेका विचार किया, परन्तु ११ बजेसे ३ बजे तक लगातार घूमनेसे मैं थक गया था। यही नहीं, बल्कि वेंकोबरसे शिकागो तक चार दिन मैंने केवल मुट्ठी भर चनोंसे ही निर्वाह किया था। यद्यपि प्रत्येक रेल-गाड़ीके साथ भोजनकी गाड़ी (Dining Car) रहती है जहां मुसाफिर समयानुकूल भोजन पाते हैं; परन्तु मेरे लिये यह प्रबन्ध न होनेके तुल्य था। जन्मसे मांस मदिरासे घृणा होनेके कारण मुझे चार दिन निराहार रहना पड़ा और शिकागो में पहुंच कर भी कहीं कुछ प्रबन्ध न कर सका; तिस पर भी चार घण्टे लगातार शहरमें घूमना। इससे शरीर-रूपी गाड़ी धीमी चलने लगी; तो भी महाबोधी सोसाइटीकी तलाश करना ज़रूर था। तदर्थ मैं रवाना हुआ।

रास्तेमें जाते हुए कई एक स्थानों पर मैंने छोटे छोटे होट-लोंके नोटिस और नामके बोर्ड देखे। दिलमें आया कि क्यों न इनमेंसे किसीमें एक रात ठहर जाऊँ और दूसरे दिन शिकागो-विश्वविद्यालयमें जाकर किसी जापानी विद्यार्थीका पता मालूम करूं। एक पथिकाश्रमके ऊपर गया। जाकर प्रबन्धकर्त्तासे सब हाल पूछा। उसने मेरा नाम लिख लिया और मुझे एक कमरेमें जानेका इशारा किया। न जाने उस समय मेरे मनमें क्या आ गया, मैंने समझा कि शायद कुछ दालमें काला है। मैं सीढ़ियोंसे नीचे उतर कर गलीमें आ

गया। पीछेसे मालूम हुआ कि वह धूर्त्तोंका अड्डा था, जो मुसाफिरोंको रातको टिकाते हैं और सोते हुएकी जेबसे सब कुछ निकाल सफाई कर देते हैं। सबेरे प्रबन्धकर्त्ता अपना किराया लेता है। शामतका मारा बेचारा मुसाफिर चुपचाप सब सहता है और लाचार वहांसे चल देता है।

ख़ैर मैं एक घण्टे बाद महाबोधी सोसाइटीमें पहुंचा। वहां जो महाशय कार्यालयमें काम करते थे उन्होंने बड़े प्रेमसे मेरी राम कहानी सुनी; मेरे साथ चलकर किसी अच्छे होटलमें मेरे लिये प्रबन्ध करनेको वे उद्यत होगये। उनके साथ बिजलीकी गाड़ी पर बैठ मैं थामसन होटलमें गया। रास्तेमें डाकखानेकी जङ्गी इमारत देखनेमें आई।

थामसन होटलके प्रबन्धकर्त्ताने मेरे मैले कपड़े देख और पीछे परदेशी जान कमरा देनेसे इनकार किया। इसलिये वहांसे मैं और मेरा साथी निराश होकर दूसरे होटलमें गये। वहां रहनेके लिये किसी प्रकार प्रबन्ध हो गया; केवल दो रात ठहरनेके लिये ६ रुपये देने पड़े। वह महाशय जो महाबोधी सोसाइटीसे मेरे साथ आये थे, मेरा प्रबन्ध करके चले गये। मैं एक नौकरके साथ खटोले (एलिवेटर) में बैठ चौथी छत पर पहुंचा। नौकरने मुझे एक अच्छे सजे हुए कमरेमें ले जाकर कहा-"लीजिये महाशय, यह कमरा आपके लिये है"। यह कह कर वह चला गया।

नौकरके जाने पर मैंने दरवाज़ेको अन्दरसे लगा दिया। मैंने परमात्माका धन्यवाद किया कि रातको रहनेके लिये स्थान तो मिला। परन्तु चिन्ता यह लग रही थी कि कपड़ोंका प्रबन्ध कैसे होगा? कपड़े सब काले हो रहे थे। साबुन पास था। विचार किया कि शायद कल असबाब न मिल सके, इससे

कपड़े अवश्य धोने चाहियें। कमरेके अन्दर गरम और ठंढे पानीके दो नल थे। वहां मैंने सब कपड़े धोये। इस काममें रातके १० बज गये। फिर हजामत बनाई। तब इस बातकी चिन्ता दूर हुई कि बाज़ारमें मैले कपड़ोंसे कैसे जाना होगा? अन्तको थका हारा भूखाही लेट रहा। सुन्दर सुथरे बिछौने पर लेटते ही निद्रा देवीने मुझे अपना लिया।



शिकागो का रविवार

शिकागो संसारके प्रसिद्ध नगरों में से एक है जगद्विख्यात धनी जान-डी-राकफेलर स्थापित विश्वविद्यालय यहीं पर है। अमरीका के बड़े बड़े कारखाने, पुतली घर यहीं पर हैं। इन कारखानों में हरएक क़ौमके लोग काम करते हैं। इतने बड़े प्रसिद्ध नगरके लोग अपने अवकाशका समय कैसे काटते हैं? वे अपना दिल कैसे बहलाते हैं? उस नगरीमें देखने लायक क्या कुछ है? पाठकोंके विनोदार्थ इन प्रश्नों का उत्तर हम इस लेख में देते हैं। आइये आपको 'शिकागो की सैर करा', इसके अजीब अजीब दृश्य दिखावें, और आपको बतलावें कि इस प्रसिद्ध नगरी में कौन कौन स्थान दर्शनीय हैं। साथ ही हम इस नगर के निवासियों के रहन सहन का ब्योरा भी देते जायंगे, जिसमें आपको अमरीका के इस प्रान्त वालों की जीवनचर्य्या के विषय में भी कुछ ज्ञान हो जाय। इस काम के लिये हमने रविवार का दिन चुना है। उसी की महिमा हम इस लेख में वर्णन करेंगे। इससे हमारा अभीष्ट भी सिद्ध हो जायगा और आपको यह भी मालूम हो जायगा कि शिकागो के निवासी रविवार की छुट्टी किस तरह मनाते हैं।

रविवार छुट्टी का दिन है। भारतवर्ष में छोटे छोटे बच्चे, जो स्कूलों में पढ़ते हैं, वे भी यह बात जानते हैं। एशिया और अफ़्रीका में जहां जहां ईसाई लोगों का राज्य है सब कहीं स्कूलों और

दफ़्तरों में रविवार को छुट्टी रहती है। परन्तु रविवार की छुट्टी किस तरह माननी चाहिये, यह बात ईसाई-धर्म्मावलम्बियों के बीच रहे बिना अच्छी तरह नहीं अनुभव की जा सकती। रविवार की छुट्टी मनाने के लिये शिकागो में कैसे कैसे स्थान बनाये गये हैं और किस प्रकार यहां वाले जीवन का आनन्द लूटते हैं, इसका संक्षिप्त हाल सुनिये।

ईसाई-धर्म्म में रविवार को काम करना मना है। इसलिये सब दुकानें, पुस्तकालय, कारखाने आदि इस दिन बन्द रहते हैं। क्या निर्धन क्या धनवान, क्या नौकर क्या स्वामी, क्या बालक क्या वृद्ध, क्या स्त्री क्या पुरुष सबके लिए आज छुट्टी है। १०½ या ११ बजे, नियत समय पर, प्रातःकाल, प्रायः सब लोग अपने अपने गिरजाघरों में जाते हुये दिखाई देते हैं। वहां ईश्वराधना के बाद घर लौटकर भोजन करते हैं। फिर कुछ देर आराम करके सैर को निकलते हैं।

शिकागो बहुत बड़ा शहर है। संसार के बड़े शहरों में इसका तीसरा नम्बर है। यहां एक "फ़ील्ड म्यूज़ियम" अर्थात् अजायब घर है। यह मिशिगन झील के किनारे, शिकागो-विश्वविद्यालय से थोड़ी ही दूर पर, है। रविवार को सवेरे नौ बजे से शाम के पांच बजे तक, सब को यहां मुफ़्त सैर करने की आज्ञा है। इसलिये इस दिन यहां बड़ी भीड़ रहती है। आठ नौ बरस के बालक, बालिकायें ऐसे ही स्थानों से अपनी विद्या का आरम्भ करते हैं। क्योंकि यहां पर संसार की उन सब अद्भुत वस्तुओं का संग्रह है, जो शिकागो के प्रसिद्ध सांसारिक मेले (World's Fair) में इकट्ठी की गई थीं। यहां यह बात यथाक्रम दिखलाई गई है कि पृथ्वी के ऊपर प्राणियों का जीवन, प्राकृतिक नियमों के अनुसार, किस

प्रकार वर्त्तमान अवस्था को पहुंचा है। भू-गर्भविद्या-सम्बन्धी पदार्थों को भिन्न भिन्न कमरों में दरजे बदरजे रखकर उनका क्रम-विकास अच्छी तरह बतलाया गया है। यहां यह स्पष्ट मालूम हो जाता है कि उत्तरी अमरीका के हिरन किस प्रकार भिन्न भिन्न चारों ऋतुओं में अपना रङ्ग बदलते हैं। किस प्रकार प्रकृति-माता बर्फ के दिनों में उनको भोजन देती हैं। उत्तरीय ध्रुव में रहनेवाले रीछों के बर्फ के भीतर बने हुये घर क्या ही अच्छी तरह दिखाये गये हैं। यहां यह बात प्रत्यक्ष मालूम हो जाती है कि अमरीका के प्राचीन निवासी (Red Indians) किन देवी-देवताओं की पूजा करते थे, कैसे घरों में रहा करते थे, किस प्रकार किन चीज़ों की मदद से पहनने के वस्त्र बनाते थे। उनकी नौकायें, उनके खाने पीने का सामान, उनके देवालय, उनके युद्ध के शस्त्र—सब चीज़ें बहुत ही अच्छी तरह दिखाई गई हैं सब से अधिक सक्षम प्राणी ही संसार में बाकी रहते हैं, इस सिद्धान्त की पुष्टि इन दृश्यों को देखते ही हो जाती है। जब हमने इन चीज़ों को देखा तब तत्काल हमें यह ख्याल हो आया कि क्या भारतवासियों का नाम, उनकी चीज़ें, उनका इतिहास आदि सब कुछ नष्ट होकर किसी दिन लन्दनके अंग्रेज़ी अजायबघर (British Museum) में ही तो न रह जायगा ?

इस अजायबघर के मध्य में महात्मा कोलम्बस की दीर्घ-काय मूर्त्ति (Statue) विराजमान है। इस जिनोआ-निवासी को देखकर दर्शक के मन में भांति भांति के विचार उत्पन्न होने लगते हैं और एक अद्भुत दृश्य आंखों के सामने घूम जाता है। पुरानी अमरीका और आजकी अमरीका में कितना अन्तर है ? वे यहां के प्राचीन-निवासी कहां गये ? पिछली

तीन शताब्दियों में यहां की भूमि का कैसा रूप बदला है! कहां योरप? कहां अमरीका! हज़ारों कोस का अन्तर! भारतवर्ष की तलाश में एक पुरुष भूल से इधर आ निकलता है। उसका आना क्या है, यमराज के आने का संदेशा है! हज़ारों वर्षों से रहनेवाले, स्वतन्त्रता से विचरनेवाले, क्या पशु, क्या पक्षी, क्या मनुष्य सभी तीन ही शताब्दियों के अन्दर स्वाहा हो जाते हे! करोड़ों भैंसे अमरीका के जङ्गलों में न जाने कब से, आनन्द-पूर्वक विचरते थे पर आज उनका नामोनिशान तक नहीं मिलता। उन सब जीवों ने क्या अपराध किया था? क्यों एक दूर देश में वसनेवाली जाति, जिसका कोई अधिकार इस देश पर नहीं था, आकर यहां के असली रहनेवालों को नष्ट करने का कारण हुई? क्या यही ईश्वरीय न्याय है? नास्तिकता से भरे हुये ऐसे ही प्रश्न यहां दर्शक के मन में उठते हैं। तत्काल एक आवाज़ कान में आती है—"प्रकृति का यह अटल सिद्धान्त है कि सब से अधिक सक्षम—सबसे अधिक योग्य—ही का दुनियां में गुज़ारा है"। यदि तुम अपना अस्तित्व चाहते हो तो अपने पास पड़ोस वालों की बराबरी के बन जाओ। वही जाति अपना नाम संसार में स्थिर रख सकती है जो इस नियम के अनुकूल चलती है।

इस अजायबघर में वनस्पति-विद्या रसायन-विद्या जन्तु-विद्या, नर-शरीर-विद्या आदि भिन्न २ विद्याओं के सम्बन्ध की सामग्री भी विद्यमान है। "एक पन्थ दो काज"—छुट्टी का दिन है, सैर भी कीजिये और कुछ सीखिये भी। उन्नति के कैसे अच्छे मौक़े यहां के निवासियों को दिये जाते हैं। बालकपन से ही खेल के बहाने यहां वाले इतनी वाक़फ़ियत हासिल

कर लेते हैं जो हमारे देश में दस बरस स्कूल में पढ़ने से भी नहीं होती।

अजायबघर से बाहर निकलकर देखिए, झील के किनारे किनारे, सड़क बनी है। बेंचें रखी हुई हैं। वहां स्त्री, पुरुष, बालक आनन्द से बैठे हैं और हँस खेल रहे हैं। उनके चेहरों को देखिए—"स्वतन्त्रता" उनके माथे पर जगमगा रही है। नवयुवक अपनी प्रियतमाओं के साथ इधर से उधर, उधर से इधर, घूमते और वार्तालाप करते हुए क्या ही भले मालूम होते हैं। मिशिगन झील भी उनके इन प्रेम के भावों को देख कर प्रसन्न मालूम होती है। वह अपने स्वच्छ शीतल पवन के झोकों से उन्हें आशीर्वाद सा दे रही है। जल की तरंगे छोटे छोटे बालकों को देखकर, उनसे मिलने के लिए, बड़े आह्लाद से आगे बढ़ती हैं; परन्तु तत्काल ही यह सोच कर कि शायद कुछ बेअदबी न हुई हो पीछे हट जाती हैं। इस समय भगवान् सूर्य्य अपने दिन के कार्य को पूर्ण कर पश्चिम की ओर गमन करते हैं।

इस अजायब घर के सिवा और भी बहुत से स्थान शिकागो निवासियों को रविवार मनाने के लिए हैं। कितने ही उद्यान (Parks) ऐसे हैं जहां "पियानो" बाजे तथा मन बहलाने के और अनेक सामान रखे रहते हैं। वहां आकर लोग बैठते हैं; संगीत सुनते हैं; और आनन्द-मग्न होकर घर जाते हैं।

यहां एक उद्यान है जिसका नाम हम्बोल्ड पार्क है। इसमें नहर के ढंग के जल के बड़े बड़े और कुण्ड हैं। उनमें जल भरा रहता है। छोटी छोटी नावें पानी पर तैरा करती हैं। ये नावें खेल के लिए हैं। ग्रीष्म-काल में यहां नावों की दौड़ होती है। रविवार के दिन इन उद्यानों का दृश्य बहुत ही मनो-

दूर हो जाता है। नवयुवक नौकायें खेते हुए हंसते, खेलते, गाते, जीवन का आनन्द लेते हैं। एक एक नौका पर प्रायः एक नवयुवक और एक युवती स्त्री होती है। वे सहाध्यायी मित्र, अथवा पति-पत्नी होते हैं। इस तरह की संगति इस देश में बुरी नहीं मानी जाती और न हम लोगों के देश की तरह ऐसे बुरे भाव ही इन लोगों में उत्पन्न होते हैं। स्त्रियों की बड़ी प्रतिष्ठा है। कोई बहुत ही पतित पुरुष होगा जो उनके साथ नीच व्यवहार करेगा। ऐसे पुरुष के लिये कानून में बड़े भारी दण्ड का विधान है। प्रायः सभी उद्यानों में ऐसे जल कुण्ड हैं। जो स्थान जिसके निकट हो वह वहीं आकर रविवार को आनन्द मनाता है।

कोई शायद पूछे कि क्या और रोज़ वहां जाना मना है? ऐसा नहीं है। परन्तु कारण यह है कि अधिकांश लोगों को सिवा रविवार के और रोज़ छुट्टी ही नहीं मिलती; इसलिये रविवार को ही इन उद्यानों में लोग एकत्रित होते हैं। रोज़ सिर्फ कहां कहीं टेनिस खेलते हुए स्त्री-पुरुष दिखाई देते हैं। यह बात ग्रीष्मऋतु की है। जाड़ों में जब इन कुण्डों का पानी जम जाता है तब वहां पर लोग "स्केटिंग" (Skating) करते हैं। स्केटिंग एक प्रकार का खेल है। हर साल दिसम्बर में स्केटिंग का समय होता है। बेहद जाड़ा पड़ता है, पर बालक बालिकायें इन स्थानों में नाचती हुई दिखाई देती हैं।

लिङ्कन-उद्यान भी बहुत प्रसिद्ध है। इसमें अमरीका के विख्यात योद्धा वीर-वर ग्राण्ड की मूर्ति है। अश्वारूढ़ ग्राण्ड, इस देश के इतिहास के ज्ञाता को एक भयङ्कर युद्ध का स्मरण कराते हैं। यह युद्ध गुलामों के व्यापार को बन्द कराने के लिये आपस में हुआ था। अमरीका के उत्तर के लोग चाहते थे कि

गुलामों का व्यापार बन्द हो जाय। उनका सिद्धान्त था—"स्वतन्त्रता की दृष्टि में सब आदमी बराबर हैं"—जीवन और स्वतन्त्रता के स्वाभाविक नियमों में सबका हक़ एकसा है। वे नहीं चाहते थे कि अमरीका जैसे स्वतन्त्र देश में मनुष्य भेड़-बकरियों की तरह बिकें। इस सत्य सिद्धान्त की रक्षा के लिये एक लोमहर्षण युद्ध उत्तर और दक्षिण निवासियों में हुआ, और परिणाम में सत्य की जय हुई। शूर-वीर ग्राण्ट इस युद्ध में उत्तर वालों की ओर से सेनापति थे। वे काले हबशियों को वैसा ही चाहते थे जैसा कि गोरे चमड़े वाले अमेरिका के निवासियों को। इस महात्मा का स्मारक चिन्ह दर्शक को एक नया जीवन प्रदान करता है। वह उसे सूचना देता है कि किसी मनुष्य को दूसरे पर शासन करने का अधिकार नहीं है। सब मनुष्य इस विषय में बराबर हैं। समाज एक यन्त्र की भांति है; मनुष्य-समुदाय उसके पुरज़े हैं। अपनी अपनी योग्यतानुसार सब समाज के सेवक हैं। किसी से घृणा मत करो, क्या काला, क्या गोरा, सब एक ही पिता के पुत्र हैं।

इस उद्यान के एक भाग में भिन्न भिन्न प्रकार के पौधे रखे हुए हैं। जो वृक्ष जिस तापमान में जी सकता है उस के अनुसार वहां उसे उष्णता पहुंचाई गई है और उसकी रक्षा की गई है। उष्ण देशों के अनेक वृक्ष यहां देखने में आते हैं। दर्शक को वनस्पति-विद्या-सम्बन्धी बहुत सी बातें यहां मालूम हो जाती हैं।

उद्यानों के सिवा बहुत से और भी स्थान लोगों के बैठने, उठने, हँसने, खेलने के लिये हैं। शिकागो बहुत बड़ा नगर है। इससे नगर निवासियों के आराम और शुद्ध पवन की प्राप्ति के लिये, बीच बीच गलियों में, "बुलावार्ड्ज़" (Boulavards)

नामक बिहार-स्थल हैं। यहांकी गलियां अपने देशोंकी जैसी नहीं हैं। गलियाँ क्या एक बाज़ार हैं। पत्थरके मकानोंके आगे, दोनों किनारों पर, पाँच फीट के क़रीब रास्ता, सड़कसे ऊँचा, लोगों के चलने के लिये बना हुआ है। बीच की सड़क गाड़ी, घोड़े, मोटर आदिके लिये है। खुले मकानों और चौड़ी सड़कोंके कोने पर भी, हवा साफ रखने और गरीब आदमियों के मनोरञ्जन तथा लाभ के लिये थोड़ी थोड़ी दूर पर विहार-वाटिकायें हैं, जहाँ बैठने के लिये बेंचें रखी रहती हैं। काम से थके हुए स्त्री-पुरुष रोज सायङ्काल में यहां दिखाई देते हैं। क्योंकि और स्थानों में गाने, बजाने और जल-विहार आदि के लिये थोड़ा बहुत खर्च करना पड़ता है, जो थोड़ी आमदनी के लोग नहीं कर सकते। उनके लिये ऐसे स्थानों, उद्यानों और अजायबघरों में घूमने की स्वतन्त्रता है। यत्न यह किया गया है कि सब को इस स्वतन्त्र देश में आनन्द प्राप्त करने का अवसर मिले। यहाँ जो धन व्यय किया जाता है वह, शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की उन्नति के लिये, किया जाता है

यह तो हुई दिन की बात, अब रात की सुनिये। यहां बहुत से नाटक-घर प्रदर्शनियाँ और समाज हैं, जहां अपनी अपनी रुचि के अनुसार लोग रात को जाते हैं। शिकागो में लोग अक्सर रात को भी गिरजों में जाते हैं। रात को भी वहां उपदेश, गायन और हरिकीर्तन होता है। यहां एक जगह "ह्वाइट सिटी" (White City) श्वेत-नगर है। बहुत से लोग वहाँ जाते हैं। इस जगह को "श्वेत-नगर" इसलिए कहते हैं कि यहां बिजली की शुभ्र रोशनी होती है, जिससे रात को भी दिन ही सा रहता है। इसके विशाल द्वार पर बड़े मोटे मोटे बिजली के प्रकाश के अक्षरों में "दि ह्वाइट सिटी"

(The White City) लिखा हुआ है। बिजली की महिमा यहां खूब ही देखने को मिलती है। स्थान स्थान पर प्रकाश मय रङ्ग-बरङ्गे अक्षर-चित्र बने हुए हैं, जो मिनट मिनट में रंग बदलते हैं। इस श्वेत-नगर के भीतर अनेक मनोरञ्जक स्थान हैं; कहीं पर गाना हो रहा है; कहीं बड़े बड़े "हालों" में नाच हो रहा है; "सरकस" का तमाशा है। दुनियां भर के तमाशा करने वाले यहां लाये जाते हैं। गरमीके दिनों में वे, तीन ही चार मास में, हज़ारों रुपये कमा लेते हैं। यह स्थान एक कम्पनी का है। उसके नौकर सारी दुनियां में तमाशा करनेवालों को लाने के लिये घूमा करते हैं। भारतवर्ष के यदि दो तीन अच्छे अच्छे पहलवान, किसी देशी कम्पनी के साथ, अमरीका में आवें तो हज़ारों रुपये कमाकर ले जायं। हमारे देश में अभी लोगों ने रुपया पैदा करने का ढङ्ग नहीं सीखा। एक साधारण मनुष्य इङ्गलिस्तान से आकर, हिन्दुस्तान में विज्ञापनों द्वारा प्रसिद्धि प्राप्त करके, लाखों बटोर कर ले जाता है, परन्तु हमारे स्वदेशी कारीगर, पहलवान, बाज़ीगर आदि कभी इस ओर आने का साहस नहीं करते। अमरीका में कुश्ती का शौक़ बढ़ रहा है। यदि इस समय कोई पहलवान थोड़ा सा रुपया ख़र्च करके इधर आवें और किसी अच्छी कम्पनी की मारफत कुश्ती हो, तो लाखों रुपये के वारे न्यारे हो जायं।

इस श्वेत-नगर में रविवार को बड़ा भारी मेला होता है। गाड़ियां स्त्री-पुरुषों से लदी हुई जाती हैं। हज़ारों दर्शक इकट्ठे होते हैं। रात के ८ बजे से ११ या १२ बजे तक मेला रहता है। यह स्थान केवल गरमियों में खुलता है; क्योंकि जाड़ों में शीत के कारण यहां कोई नहीं आता। शीत ऋतु के लिये

नगर के भीतर और अनेक स्थान हैं जहां और ही तरह के मनोरञ्जक खेल होते हैं।

रविवार का दिन इस नगरी में लोग इसी तरह व्यतीत करते हैं। अब यहां वालों की जीवन-चर्य्या का मिलान यदि हम भारतवर्ष से करते हैं तो कितना बड़ा अन्तर पाते हैं। उन तमाशों या नाटकों की बात जाने दीजिये जिनको हमारे बहुत से पाठक शायद अच्छा न समझें, पर और ऐसे कितने मनोरञ्जक या शिक्षाप्रद खेल तमाशे हैं जिनका हमारे स्वदेशी भाइयों को शौक़ है? वे अपने अवकाश को, अपनी छुट्टियों को, किस तरह बिताते हैं? भङ्ग पीकर, ताश खेलकर, पतङ्ग उड़ाकर और व्यर्थ के बकवाद में लिप्त रह कर, वक़्त की वे क़ीमत ही नहीं जानते। यद्यपि कुछ पढ़े लिखे लोग ऐसे हैं जो इन बुराइयों से बचे हुए हैं, परन्तु वे तीस करोड़ की जन-संख्या में दाल में नमक के बराबर भी नहीं। आधी संख्या हमारे देश में मूर्खा स्त्रियों की है जिनको बाहर निकलने की आज्ञा ही नहीं! जहां के निवासी सैंकड़े पीछे आठ से भी कम साक्षर हैं। उन्हें दुर्व्यसनों में डूबने से भगवान ही बचावे।

पाठक, यह शिकागो के एक दिन का दृश्य आपकी भेंट किया गया। आशा है कि आप इससे लाभ उठाने का यत्न करेंगे। सोचिये तो सही, हमारे देश के करोड़ों निर्धन किस तरह जीवन जञ्जाल काट रहे हैं? जिन्हें हम नीच जाति के समझते हैं उन्हें किस घृणा की दृष्टि से हम देखते हैं? उनके सुख की हम कितनी परवा करते हैं? अपने घर, अपने नगर, अपनी दिन चर्य्या आदि का अन्य देशों से मुकाबिला कीजिये और देखिये कि इस समय हमारा कर्त्तव्य क्या है? यह रविवार का दृश्य आपको इसलिये नहीं दिखाया गया कि इसे

देखकर आप भूल जाइये। नहीं; इससे आप कुछ सीखिये। यह दृश्य एक महान् उद्देश्य को सामने रख कर दिखाया गया है। कृपा करके, विचार तो कीजिये कि वह महान् उद्देश्य क्या है?

बिजली की रेलगाड़ी ।

(Electric Railway)

अमरीका में आज कल इस बात का यत्न हो रहा है कि किस प्रकार बिजली से रेलगाड़ी चलाने का प्रबन्ध किया जाय। बिजली से चलनेवाली ट्राम आदि साधारण गाड़ियां तो, हमारे देश-बन्धुओं ने कलकत्ता, मदरास आदि बड़े बड़े शहरों में भी देखी होंगी; परन्तु यह शायद उन्होंने न सुना हो, कि अमरीका-निवासी भाफ से चलनेवाली रेलगाड़ी के स्थान पर अब बिजली की रेलगाड़ी चलाने की चिन्ता में हैं। वे चाहते हैं कि किस प्रकार खर्च थोड़ा और लाभ अधिक हो। उनके रहने और व्यापार-व्यवहार आदि का ढंग हमारे देश का सा नहीं है। हमारे देश में यदि पिता लकड़ी या बांस की पुरानी तकड़ी से सौदा तोलता था, तो उसका लड़का भी उस तकड़ी का पिण्ड नहीं छोड़ता। जिन करघों से सैकड़ों वर्ष पहिले जुलाहे कपड़े बुनते थे, आज भी भारतवर्ष के जुलाहोंके हाथ में वही देखे जाते हैं। कभी किसी के मनमें आगे बढ़कर कदम मारने का हौसला ही नहीं होता।

समय ही रुपया है (Time is money) इसी नियम पर अमरीका-निवासी चल रहे हैं। इनका मूल मन्त्र है—किस प्रकार थोड़ा समय लगे और काम अधिक हो। इनके कार-खानों में जाइये; आप सब कहीं इसी नियम की सर्व-व्याप-

कता पाइयेगा। हमारे देश में आराकश, एक भारी लकड़ी चीरने में सारा दिन लगा देते हैं; पर कभी उनके मन में यह नहीं आता कि हम क्या थोड़ा समय ख़र्च करके इस काम के करने का तरीक़ा नहीं निकाल सकते? अमरीका निवासी भाफ की रेलगाड़ी से जो फी घण्टा ५० मील से अधिक जाती ये हैं। वे कहते हैं कि यह चाल बड़ी सुस्त है। वेंकोवर से शिकागो २७०० मील है; उसे तै करने में तीन दिन लग जाते हैं इससे वे चाहते हैं, कौन सा उपाय हो, जो दो दन लगें? एक दिन की बचत हो।

पाठक शायद यह कहें कि ऐसी क्या आफत आई है! क्यों अमरीका वालों में यह धुन समाई है? ऐसी जल्दी काहे की है? भाई अमरीका हिन्दुस्तान नहीं। वहां उन्नति, उन्नति की ही ध्वनि सब कहीं सुन पड़ती है। सभ्य संसार में बिना उन्नति के काम नहीं चल सकता—"तातस्य कूपोऽयमिति ब्रुवाणाः" ने ही भारत को मटियामेट कर दिया!

भला बिजली की रेलगाड़ी से लाभ क्या? एक बड़ा भारी लाभ तो बिजली की रेलगाड़ी का तत्काल ठहर जाना है। भाफ से चलने वाली रेलगाड़ी को ठहराने के लिये समय चाहिये। हमारे देश में लोगों ने बहुधा रेलों की टक्करें सुनी होंगी। उनसे लाखों रुपये की हानि और सैकड़ों की जानें जाती हैं। ऐसी टक्करों को बिजली की गाड़ी कम कर देगी। भाफ की रेलगाड़ी में किराया अधिक लगता है, बिजली की गाड़ी में किराये की किफायत होती; थोड़े ही खर्च से लम्बे २ सफर हो सकेंगे। थोड़ी तौफीक वालों को भी दूर २ के स्थान देखने का अवसर मिलेगा। समय थोड़ा लगेगा। भाफ की रेलगाड़ी में बहुत समय लगता है। बिजली की गाड़ी इस

दिक्कत को दूर करेगी। भाफ की गाड़ी को तो अपने खाने पीने ही में बहुत समय लग जाता है। बड़े बड़े स्टेशनों पर केवल कोयला पानी के लिये देर तक ठहरना पड़ता है। बिजली की गाड़ी को खाना पीना दरकार न होगा। बिना खाने के ही वह बराबर काम देगी। इसके सिवा भाफ के एञ्जिन को घुमाने फिराने की ज़रूरत रहती है। उसका मुंह, बिना एक चक्कर पर लाये नहीं घूमता। बिजली की गाड़ी के लिये दोनों रास्ते खुले रहेंगे। जिधर जिस समय चाहो, चलाओ जब चाहो इधर से उधर घुमाओ; उसे कुछ उज़्र न होगा। इस आज्ञावाहक गुण के होने से बिजली सर्व-प्रिय होरही है। भाफ के एञ्जिनराम, ग्रीष्म ऋतु में, अपने ऊपर रहने वालों का नाकोंदम कर देते हैं। बिजली की गाड़ी पर काम करने वालों को यह दुख न भोगना पड़ेगा। भाफ की गाड़ी मुसाफिरों पर कोयला फेंक फेंक कर उनकी अप्रतिष्ठा करती है; सारे वस्त्र काले कर देती है, बिजली की गाड़ी मुसाफ़िरों से कभी ऐसी गुस्ताख़ी न करेगी। वह बड़े प्रेम, बड़ी नम्रता से उनकी सेवा करती है; और जब मुसाफ़िर चलने लगते हैं तब मानों सीटी के द्वारा निवेदन करती है—"महाशय, फिर भी कभी दर्शन दीजियेगा।"

भारत की रेलों में तीन या चार दरजे गाड़ियों के होते हैं, अमरीका में उस तरह के कोई दरजे नहीं। यहां भेदभाव ही नहीं। किसी गाड़ी के अन्दर घुसो, साफ़ सुथरे गद्दे आराम-कुरसियों पर पड़े हैं। एक एक मुसाफ़िर के लिये एक एक कुरसी है, जिस पर वह रात को सो भी सकता है। गाड़ी की तरफ़, एक छोटे कमरे में, दो नल ठंढे और गरम पानी के रहते हैं। पास ही एक शीशा दीवार में लगा रहता

है। साबुन की चकी रक्खी रहती है। एक धुला हुआ साफ़ अँगोछा लटका करता है। सब तरह का आराम गाड़ी में रहता है। एक ख़ास गाड़ी खाने पीने के लिये रहती है, जहां मुसाफ़िर समयानुकूल भोजन पाते हैं। अब अपने यहां का हाल देखिये। भेड़ बकरी की तरह, आदमी गाड़ियों में भरे जाते हैं। उनको दम लेना भी कठिन हो जाता है। पीने के पानी के लिये हर स्टेशन पर चिल्लाना पड़ता है। पहिले और दूसरे दरजे के सिवा तीसरे और ड्योढ़े में सारी रात जागते गुज़रती है। किसी को कुछ तकलीफ़ हो, कोई पूछने वाला नहीं है। स्त्रियों की जो दुर्दशा होती है वह लिखने योग्य नहीं। इन सब दुर्दशाओं के होने पर भी भारतवासियों के ध्यान में कभी यह बात नहीं आती कि ये दिक़तें कैसे दूर हो सकती है। अमरीका की गाड़ियों में इतना आराम है, तिस पर भी लोग "उन्नति, उन्नति" की पुकार मचा रहे हैं। पर भारत के रामचन्द्र और कृष्ण की सन्तान कभी सोचती तक नहीं, कि हम कैसे इन दुखों को दूर कर सकते हैं। यदि भारतवर्ष के धनाढ्य पुरुषों की एक कम्पनी कोई लाइन खोलने के लिये उद्यत हो जाय, और लाइन बनाकर अपने भाइयों के आ... का सब प्रबंध करदे तो और कम्पनियों के छक्के छूट जाँय, और झकमार कर वे अपने कुप्रबन्धों को दूर कर दें। रेलगाड़ियों के मालिक और अफ़सर जानते हैं कि इनके लिये कोई और लाइन तो है ही नहीं; रोने चिल्लाने दो, आख़िर जायँगे तो हमारी ही लाइन से न ? बस यही कारण है कि हमारी दुर्दशा पर कोई ध्यान नहीं देता। पर अमरीका में एक नहीं अनेक कम्पनियाँ हैं, और प्रत्येक की कोशिश यही रहती है कि किसी न किसी प्रकार हमारी लाइन पर अधिक मुसाफ़िर आवें, इसलिये

मुसाफ़िरों के आराम का भरपूर प्रबन्ध किया जाता है। इन्हीं कम्पनियों की आपस की इस प्रकार की चढ़ाऊपरी का यह फल है जो यहां की एक कम्पनी बिजली की गाड़ी बनाने का विचार कर रही है। भारतवासी अप्रतिष्ठा सहते हैं; स्टेशनों पर गालियां खाते हैं; खाने पीने की तकलीफ़ उठाते हैं सारी रात जागते व्यतीत करते हैं; गरमियों में क़ैदियों की तरह गाड़ियों के भीतर बन्द रहते हैं; तिस पर भी यह नहीं सोचते कि क्या हम इन दिक़्क़तों को दूर नहीं कर सकते? सचमुच सब कष्ट दूर हो सकते हैं; अमरीका की जैसी सुन्दर गाड़ियां बन सकती हैं; प्रबन्ध अच्छा हो सकता है; सब तरह के आराम मिल सकते हैं; बिजली की गाड़ियां भी बन सकती हैं, हां व्यवसाय, परिश्रम, मेल और पूंजी चाहिये।

अमरीका के खेतों पर मेरे कुछ दिन।

जून का महीना आ गया। सालभर की पढ़ाई खतम होगई। विद्यालय के विद्यार्थियों को अब तीन साढ़े तीन महीने की छुट्टी रहेगी। हरएक छात्र ने छुट्टियां बिताने का प्रबन्ध पहले ही से कर रक्खा है। जिन्हें योरप की सैर को जाना है उन्होंने अग्निबोट कम्पनियों से सब बातें तै करली हैं। जापान की ओर जानेवाले जापानी भाषा सीख रहे हैं। जो दूसरे साल के खर्च के लिए रुपया कमाना चाहते हैं उन्होंने बड़े बड़े कारख़ानों से पहले ही पत्र-व्यवहार कर लिया है। मतलब यह कि सभी ने अपनी अपनी आवश्यकताओं के मुताबिक जोड़ तोड़ लगा रक्खी है।

इन बीच में मैं भी अमरीकन बन गया। पहले एक कम्पनी के ग्राहक बढ़ाने का काम करने का विचार किया, और उसके लिए लिखा पढ़ी भी की, पर पीछे से इरादा बदल गया। सोचा कि किसी खेत पर चल कर काम करना चाहिए। इसमें एक पन्थ दो काज हैं। बहुत दिनों से यह जानने की अभिलाषा लग रही थी कि अमरीकन किसानों की चाल ढाल देखें; उनकी खेती के वैज्ञानिक तरीक़े जानें। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए एक अमरीकन दोस्त को पत्र लिखा। मेरे मित्र आइयोवा (Iowa) रियासत के एक कालेज में अध्यापक हैं। उनकी मेरी जान पहचान शिकागो-विश्व-विद्यालय में ही हुई थी। मित्र का सम्बन्ध बड़े बड़े जमींदारों से है। उनके पिता भी जमींदार हैं।

मित्र से परिचय-दायक पत्र लेकर मैं वरमिलियन नामक नगर में पहुंचा। वरमिलियन एक छोटा सा क़स्बा है। दक्षिण डकोटा रियासत में है। यह शिकागो से पांच सौ मील पश्चिम की ओर है। यहां के एक बड़े ज़मींदार मिस्टर एल्वी एन्ड्रियूज़ के नाम मेरे दोस्त ने मुझे पत्र दिया था। मित्र से यह भी मुझे पता लग गया था कि ज़मींदार महाशय मिशेगन कालेज़ के ग्रेजुएट हैं; कानून में भी आपने एल० एल० बी० की पदवी प्राप्त की है; इसलिये मैं समझता था कि श्रीमान् बड़े ही फूंक फूंक कर चलने वाले होंगे।

जिस समय गाड़ी वरमिलियन पहुंची, दो पहर थी। धूप ऐसी कड़ाकेदार थी कि मुझे अपना प्यारा देश याद आ गया। जब मैं एल्वी महाशय के घर पर पहुंचा तब वे कहीं बाहर गये थे। उनकी वृद्धा माता ने मुझे प्रेम से बिठलाया और ठहरने के लिये कमरा दिखला दिया।

कमरे में अपना बेग रख कर मैं दरवाज़े के बाहर बरामदे में कुरसी पर आ बैठा! हवा बहुत धीरे धीरे चल रही थी। इसलिये मैं पसीने से तर हो गया। वृद्धा ने मुझे एक पंखी लाकर दी और मेरे पास कुरसी पर बैठ कर कपड़ा सीने लगी। थोड़ी देर तक हम लोग चुप रहे। वृद्धा ने पूछा—

"एल्वी कहता था कि एक हिन्दू हमारे खेत पर काम करने आवेगा। क्या आप ही खेत पर काम करने के विचार से आये हैं?"

मैं (बड़े अदब से)—"हां, मैं इसी लिए आया हूं।"

उसने कुछ मिनट मुझे ध्यान से देख कर कहा—"अमरीकन खेत का कठिन काम आप ऐसे शरीर का पुरुष कैसे कर सकेगा?"

मैं—"आप ऐसा न समझिये कि मैं बिलकुल ही कमज़ोर हूं। इसमें शक नहीं कि मेरा शरीर अमरीकन मज़दूरों का सा नहीं है; परन्तु मेरा साहस उन्हीं का सा है।"

वृद्धा हँसकर बोली—"अच्छा इसकी परीक्षा होजायगी।"

वह फिर अपने काम में लग गई। मैं कुरसी पर बैठा सोचता रहा कि बुढ़िया कहीं रङ्ग में भङ्ग न डाल दे कि मेरा यहां आना ही वृथा होजाय।

रात को मिस्टर एल्बी आ गये। मुझ से बड़ी अच्छी तरह पेश आये। साढ़े चार रुपया रोज़ के काम पर उन्होंने मुझे रखना स्वीकार किया। दूसरे ही दिन मैं उनके खेत पर गया।

वर्मिलियन से आठ दस मील पर वरबैंक नाम का एक बहुत छोटा सा गांव है। वह रेल की सड़क पर है। एल्बी महाशय की चार सौ एकड़ भूमि यहीं पर है। मुझे यहीं काम करना था।

मैं जिस समय खेत पर पहुंचा, सब लोग गिरजे गये थे। केवल एक मज़दूर खेत पर था। यहां पर यह बतला देना चाहिये कि जैसे हमारे यहां बड़े बड़े ज़मींदार एक प्रबन्धकर्ता रखते हैं वैसे ही मिस्टर एल्बी के खेत पर भी एक मैनेजर, मिस्टर हालवे अपनी घर-गृहस्थी के साथ रहता था। इसके एक दरजन लड़के लड़कियां थीं। शाम को ये सब लोग गिरजे से लौटे।

धीरे धीरे भोजन का समय आया। हम लोग मेज़ के चारों ओर कुरसियों पर बैठे। उस समय मेरी अजीब हालत थी। भला कहां शिकागो यूनिवर्सिटी की विशाल भोजनशाला का स्वच्छ और सभ्यजनोचित भोजन, और कहां यहां का रूखा सूखा मोटा भद्दा खाना! यद्यपि विश्व-विद्यालय में भी मुझे

मांस खाने वालों के पास बैठ कर भोजन करना पड़ता था, तथापि कभी ऐसी घृणा उत्पन्न न हुई थी। जिनको तमाम दिन खेत पर काम करना पड़े, भला वे ज़रा से गोश्त पर कैसे गुज़ारा कर सकते हैं। यहां मांस के इतने बड़े बड़े टुकड़े उन को खाने को दिये गये थे कि देखने ही से तबियत ख़राब होती थी। रसोईघर बिलकुल ही पास था। मारे दुर्गन्ध के मैं तो बेचैन सा हो गया। सोचा कि यहां इनके साथ रह कर खेत पर काम कैसे हो सकेगा? परोसने वाली स्त्री जब मुझे मांस देने लगी तब मैंने सिर हिला दिया।

स्त्री—(आश्चर्य्य से "क्या आप मांस नहीं खाते?"

मैं—"नहीं. मैं मांस नहीं खाता।"

मैनेजर हाल्वे, जो मेरे सामने बैठा था, बोला—"तो आप से यहां का काम न हो सकेगा।" खैर मैं चुप रहा।

हाल्वे आयरिश हैं। इनके पिता आयरलैण्ड से अमरीका आये थे। आपकी उम्र पचास वर्ष से ऊपर है, मगर देखने में पैंतीस वर्ष के मालूम होते हैं। क़द सम्भोला कोई साढ़े पांच फ़ीट होगा। अधिकांश अमरीकनों की तरह चेहरा बिलकुल सफ़ाचट नहीं है, बल्कि मोटी मोटी मूंछे हैं; हां, दाढ़ी साफ़ है। स्वभाव के साधु होने पर भी अक्खड़पन कूट कूट कर भरा है। इनकी स्त्री द्वितीय विवाहिता है। बड़ी स्थूल, चलना-फिरना कठिन, पर आखिर किसान की स्त्री है; दिन भर काम में लगी रहती है। स्वभाव इसका भी बड़ा नेक है। जब से उसे मालूम हो गया कि मांस से मुझे घृणा है और मैं अण्डा-भोजी भी नहीं हूं, तब से वह मेरे लिये अलग भोजन बना दिया करती थी। मैं उसको "माता" कह कर पुकारता था।

अभी तक मेरा नाम यहां कोई न जानता था। भोजन के बाद और लोगों के साथ जब मैं भी घुड़शाला में गया तब वहां एक नौ-जवान मज़दूर ने मुझसे दिल्लगी के तौर पर कहा—"कहो तो, जानी भोजन का मज़ा आया ?"

मैंने हंस दिया। फिर यह मुझसे पूछने लगा—"तुम्हारा नाम क्या है ?"

मैं—"मेरा नाम जानी (Johny) ही ठीक होगा।"

बस सारे खेत वाले मुझे "जानी" ही कह कर पुकारने लगे। यदि फिर मैं उस खेत पर कभी काम करने जाऊं तो सब लोग "जानी ही कह कर बुलावेंगे, असली नाम "देव" कह कर कोई भी न पुकारेगा।

इस खेत पर इन दिनों केवल पांच आदमी काम करते थे—हाल्वे, उसका लड़का, तथा तीन जन और। मेरे आने से छः जने हो गये। फ़सल का समय न होने से इतने ही आदमी काफ़ी थे। यदि किसी दिन अधिक काम हो जाता तो हाल्वे की दो लड़कियां हाथ बटा लेती थीं। उनको आदमियों से कुछ कम मज़दूरी मिलती थी।

अस्तबल में हर एक आदमी अपनी अपनी जोड़ी को चारा डालने और पानी पिलाने लगा। मैं चुपचाप खड़ा देखता रहा। क्योंकि अभी मैंने खेत के काम वाले कपड़े भी नहीं ख़रीदे थे। घोड़ों की तृप्ति कर उन लोगों ने सूअरों को मकई के भुट्टे डाले। पांच चार बैल भी एक तरफ़ बंधे थे। उनको भी दाना डाला गया।

हाल्वे, मेरे पास खड़ा, सूअरों को मकई डाल रहा था। मैंने उससे पूछा—"इतने सूअर आपने क्यों पाल रक्खे हैं ?"

हाल्वे (हंसकर) "इन्ही के लिए तो यह सब खेती है।

इनको खिला पिला कर मोटा करते हैं, तब बेंच डालते हैं।"

मैं—"और ये बैल आप लोग क्या करते हैं?"

हाल्वे—"अभी पांच चार रोज हुए एक सौ बैल हमलोगों ने सुसिटी के बाज़ार में बेचे थे। ये चारों भी बेच डाले जायँगे।"

उस समय मेरे दिल पर बड़ी चोट लगी। मैंने शिकागो का बूचड़खाना अपनी आंखों से देखा था। हज़ारों सूअर, भेड़ और बैल वहां पर मैंने बूचड़खाने के बाहर बंधे देखे थे। "यही लोग पशुओं को यहां से पाल पाल कर वहां मारने को भेजते हैं और अपने दाम खरे करते हैं। यह क्या माया है? "स्वार्थ! खुद्गर्जी" !! अमरीका में लाखों एकड़ भूमि सिर्फ़ पशुओं के निमित्त है। जमींदार लोगों की अधिकांश आमदनी इसी व्यापार से है। मकई जितनी पैदा होती है उसका दसवां भाग मनुष्य अपने खानेमें लाते होंगे, बाकी सब सूअरों भेड़ों और बैलों के खाने में आती है। जब ये पशु खूब मोटे ताज़े हो जाते हैं तब सभ्यताभिमानी मनुष्य उनको मार कर खा जाते हैं। अमरीका का करोड़ों रुपये का व्यापार इस से होता है। इन पशुओं की क़ीमत इनके वजन के अनुसार लगती है। इसीलिए हाल्वे इनको मकई खाने को देते थे।

* * * * *

अमरीका में घोड़ों से खेती होती है। प्रातःकाल सात बजे अपनी अपनी गोड़ने की कल, जिसके आगे दो घोड़े रहते हैं, लेकर मज़दूर अपने अपने काम पर पधारे। मैं इस काम को बिलकुल न जानता था, इसलिए खोदने का काम

मुझे दिया गया। ग्यारह बजे के क़रीब मैं मकई के खेतमें खड़ा काम कर रहा था कि किसी ने पीछे से मेरी पीठ पर हाथ रक्खा। मैंने घूम कर देखा तो जमींदार महाशय किसानों के कपड़े पहिने हाथमें कुदाली लिए खड़ें हैं। मैं बड़ा हैरान हुआ। अव्वल तो बी० ए० फिर एल० एल० बी०, तिस पर भी छै सौ एकड़ भूमि का मालिक, मेरी तरह काम करने के लिये तैयार खड़ा है। धन्य! अमेरिका, धन्य! अपने ऐसे ही परिश्रमी सुपुत्रों की बदौलत आज तू उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर विराजमान है परन्तु जिस देश के शिक्षित और धनवान् मनुष्य शारीरिक परिश्रम से बेतरह नाक भौं सिकोड़ते हैं वह देश क्यों न अधोगति को प्राप्त हो? क्यों न वह दुख-दरिद्र का लीलास्थल बना रहे? जब मेरी उनकी चार आंखें हुईं तब वे हंस कर बोले—"क्यों कैसा कठिन काम है?"

मैं (मुसकिराकर)—सभी काम आरम्भ में कठिन होते हैं। पीछे से अभ्यास हो जाने पर आसान हो जाते हैं।"

एल्बी—'शाबास! ऐसे ख़याल वाले आदमी के लिए दुनियां में कोई भी काम मुश्किल नहीं हैं।"

मैं चुप रहा। फिर एल्बी बोले—"आप यदि आलू के खेत में काम करें तो बहुत अच्छा हो। यह मकई तो प्रायः पशुओं के खाने में आती है इसलिये इसकी अच्छी बुरी की चन्दां परवा नहीं। ख़ासकर इस समय जब दूसरी खेतियों में आदमियों की सख़्त ज़रूरत है।"

मैं—"जैसी आज्ञा। मुझे तो काम करना है।"

हम दोनों आलू के खेत में पहुंचे। जमींदार महाशय ने इस साल १२० एकड़ भूमि में आलू बोये थे। आलू की फ़सल के अच्छे होने की इस साल कम आशा थी। पहिले तो

भूमि ही में घास-फूस बहुत उगा था, आक और सूरजमुखी बहुत थे, जिनके उखाड़ने के लिए दो आदमी बराबर दरकार थे। दूसरे आलू की फ़सल में इस साल कीड़ा लग गया था। बाज़ बाज़ जगह तो इन मूज़ियों ने ज़मीन सफ़ाचट कर दी थी। मैंने एल्वी महाशय से पूछा—"क्या इन कीड़ों के दूर करने का कोई उपाय नहीं।"

एल्वी—"है क्यों नहीं ? कल ही देखो दो आदमी लगाकर सारे खेत में पेरिस ग्रीन (Paris Green) छिड़कवा दूंगा। मैं दूसरे दूसरे कामों में लगा रहा, इसलिये यह सब ग़फ़लत हुई।"

पेरिसग्रीन एक प्रकार का विष है। एक बड़ी डब्बेदार गाड़ी को पानी से भर कर उसमें इस विष को घोल देते हैं। विष के पीछे ऐसी कल लगी रहती है कि जब उस पर बैठा हुआ आदमी घोड़ों को हाँकता है तब फुहारे की तरह विष मिश्रित पानी दोनों ओर की कतारों पर पड़ जाता है। पौधे बिलकुल भीग जाते हैं और कीड़े प्रायः मर जाते हैं। बाज बाज दफे चार चार कतारों पर एक ही बार पानी छिड़कते जाते हैं। उस कलकी नली को बढ़ा घटा कर ऐसा करते हैं। मुझे दो चार दिन यह भी काम करना पड़ा था।

बारह बजे भोजन के लिये छुट्टी हुई। एक बजे से फ़िर मैं खेत में काम करने चला गया।

आलू के खेत में दो जने और गोड़ने की कल चला रहे थे। इस कल के आगे दो घोड़े लगे रहते हैं और एक आदमी चलाने वाला होता है। यह कल खेत की क्यारियों में दोनों ओर पौधों की जड़ों में मिट्टी खोद खोद कर डालती जाती है; इससे खेती शीघ्र फूलती फ़लती है। वर्षा से मिट्टी दब जाती

है और धूप से सख़्त हो जाती है, इसलिये फ़सल के पकने तक पांच चार बार सारे खेत को गोड़ना ज़रूरी है। यह मशीन बहुत क़ीमती नहीं है। चालीस पचास रुपये में अच्छी काम लायक़ मिल सकती है।

"जानी!"—भोजन करके मैं बरामदेमें खड़ा था कि किसी ने पीछे से पुकारा। मैंने घूम कर देखा तो हाल्वे का लड़का थोड़ी दूर पर खड़ा मुझे बुला रहा है। मैंने पास जाकर पूछा "क्यों क्या है?"

लड़का—"पापा (पिता) कहते हैं कि आज आप हम लोगों के साथ जौ के खेत पर काम करने चलें।"

मैं--"बहुत अच्छा।"

मैंने हाल्वे से गेहूं और जौ काटने वाली कल को चलता हुई देखने की इच्छा कई बार प्रकट की थी। आज इसी लिये उसने मुझे बुलाया था। जब मैं खेत पर पहुंचा तब हाल्वे मशीन चला रहे थे। इस मशीन को अंग्रेज़ी में बाइंडर (Binder) कहते हैं। इसके चलाने के लिये चार, छै, आठ, दस घोड़े, जैसी मशीन हो, दरकार होते हैं। बड़े बड़े खेतोंपर पच्चीस पच्चीस, तीस तीस घोड़े इस मशीन को चलाते हैं। हाल्वी के खेत पर जो मशीन थी उसमें घोड़े पीछे रहते थे और काटने वाली कल आगे। नहीं तो प्रायः घोड़े मशीनों के आगे ही जोते जाते हैं। इस मशीन से तीन काम होते हैं-- काटना, बाँधना और फेंकना। जौ को काट कर उसके पूले बना और रस्सी से बाँध कर यह मशीन फेकती जाती थी। हम तीन जने (मैं तथा दो लड़के और) उन पूलों को उठा, उनके सिरे मिला कर खड़ा करते जाते थे। इस तरह पाँच

छे पूले एकट्ठे इस प्रकार खड़े किये जाते थे कि धूप से जौ जल्द सूख जायँ, और यदि पानी बरसे तो उनके ऊपर से बह जाय।

अकसर ज़मींदार अनाज के सूखते ही उसको भूसी से अलग करने के लिये मड़नई की कल (Thrashing Machine) का उपयोग करते हैं। इस मसीन से गेहूं या जौ अलग होकर डब्बेदार गाड़ियों में गिरते जाते हैं। भूसा फल के ज़ोर से उड़ उड़ कर दूर गिरता जाता है। उस का एक बड़ा ऊंचा टीला सा बनता जाता है। पास के एक खेत पर एक दिन मैं गेहूं की मड़नई देखने गया था। एल्बी का विचार शीघ्र मड़-नई करने का नहीं था, इस लिए जौ के सूखने पर उन पूलों के बड़े बड़े कुप्प बना दिये गये।

इस खेत पर सौ एकड़ भूमि में ओट (Oats) बोये गये थे। जब वे पक गये तब इसी मशीन से वे भी काटे गये। उनके भी बड़े बड़े कुप्प बना दिये गये। यह मशीन बिलकुल जड़ तक फ़सल नहीं काटती; आठ से दस इञ्च तक डंठल रह जाते हैं। परन्तु इससे कोई हानि नहीं, उलटा फ़ायदा है। जब भूमि पर नये सिरे से हल चलाया जाता है तब ये डंठल खाद का काम देते हैं। पश्चिमी अमरीका में बहुत से ज़मीं-दार ऊपर ही ऊपर से फ़सल काटते हैं। बाक़ी खाद के लिये रहने देते हैं। यहां भी जब ओट कट चुके, और उनके पूलों के बड़े ऊंचे कुप्प बना दिये गये, तब हल का काम आरम्भ हो गया। हल वाली कल को अंग्रेजी में प्लाविंग् मशीन (Ploughing Machine) कहते हैं। इसके आगे भी छै, आठ, दस, ज़रूरत के मुताबिक घोड़े रहते हैं। पशुओं के लिये यह बड़ा कठिन काम है। आठ से दस इञ्च सख़्त ज़मीन को

खोद खोद कर फेंकने में उन्हें बड़ी मेहनत पड़ती है। जैसा मैंने बतलाया वे सब कटे हुए डण्ठल इस मिट्टी के नीचे दब कर खाद बन जाते हैं।

यही खाद काफ़ी नहीं होती। खाद डालने के लिये एक जुदा कल है। उसको अंग्रेजी में मैन्युर स्प्रेडर (Manure Spreader) कहते हैं। यह भी एक डब्बेदार गाड़ी की तरह की कल है। पहिले इसको खाद से भर लेते हैं। फिर खेत में ले जाकर पीछे की कल खोल देते हैं। ज्यों ज्यों गाड़ी के घोड़े चलते जाते हैं त्यों त्यों खाद गिरता जाता है।

* * * * * *

आज सख़्त बारिश थी। खेत पर नहीं जाना था। छुट्टी है, गप्पें उड़ने लगी। मैं, हाल्वे, दो लड़के, हाल्वे की तीन लड़कियाँ और उनकी माता, बैठक में कुरसियों पर बैठे थे। हाल्वे की बड़ी लड़की, जिसका नाम एल्सी था, पियानो के स्टूल पर बैठी थी।

मैंने गांव में किसी से सुना था कि मिस्टर एल्वी मजदूरों से काम तो ले लेते हैं पर मज़दूरी देने में आगा पीछा करते हैं। अपना सन्देह दूर करने के लिए मैंने हाल्वे से कहा—"क्यों जी, क्या सचमुच एल्वी मज़दूरी देने में देर लगाया करते हैं?"

मेरे सवाल करने का लहज़ा ऐसा था कि "माता" मेरे दिल का भाव समझ गई। उन्हों ने दिल्लगी के तौर पर कहा—"अभी तक तो किसी को मज़दूरी नहीं मिली। छै मास से हम लोग यहां हैं। सिर्फ़ पन्द्रह रुपये मिले हैं। आप को उम्मेद नहीं, इस साल कुछ मिले।"

मैं—"वाह-यह कैसे हो सकता है? मैं कालेज कैसे जाऊंगा?"

इस पर सब लोग हँस पड़े। हाल्वे ने कहा—"घबराइये नहीं। इस मुल्क में मज़दूरों की रक्षा गवर्नमेंट अच्छी तरह करती है। आपको यदि एल्वी मज़दूरी न दे तो आप उसका असबाब नीलाम करवा सकते हैं।"

इस पर एल्सी (बड़ी लड़की) ने हँसकर मुझे सम्बोधन करके, कहा—"अच्छा यदि एल्वी आप को मज़दूरी न दे, तो आप उस की कौन सी चीज़ लेना पसन्द करेंगे।"

मैं--"उसके अस्तबल में जो अन्धी घोड़ी बंधी है, मैं तो उसी पर चढ़कर रफूचक्कर हो जाउंगा।" इस पर मारे हंसी के सब लोग लोट पोट हो गये।

इस तरह बहुत प्रकार की बात चीत होती रही। मैंने हाल्वे से कहा कि आप कोई दिल्लगी की बात सुनावें। हाल्वे ने कहा, दिल्लगी क्या, एक सच्ची बात सुनाता हूं--

"जब पिछली बार हम लोग बैल बेचने सुसिटी गये, तब लोगों से सुना कि यहां पूर्व से पादरी लोग व्याख्यान देने आये हुये हैं। एक लेक्चर उस रोज़ भी तीसरे पहर होने वाला था। मैं भी सुनने गया। एक नौजवान पादरी खड़ा लेक्चर दे रहा था। अपने लेक्चर में उसने अपने पादरी हो जाने का कारण बतलाया। कहने लगा कि मैं किसान हूं। एक दिन दोपहर को खेत में खड़ा काम कर रहा था कि मुझे आकाश में कुछ शब्द सुनाई दिया। मैंने जो आंख उठाकर देखा तो एक फ़रिश्ता खड़ा पाया। उसके हाथ में एक तख़्ती थी। उस तख़्ती पर मोटे अक्षरों में "पी० सी०" (P. C.) लिखा हुआ था। कुछ देर में फरिश्ता लोप हो गया। मैं

सोचने लगा कि यह क्या ? आखिर मैंने समझा कि फ़रिश्ता कह गया है (Preach Christ) ईसा के सिद्धान्तों का प्रचार कर, बस मैंने उस दिन से अपना काम छोड़ ईसाई धर्म का प्रचार करना आरम्भ किया। यह सुन कर, श्रोता गणों में एक बुड्ढा जो कोने में बैठा था, उठा और कहने लगा--"महाशय, आपने भूल की"। व्याख्यानदाता (हैरान होकर)--"क्या" ?

बूढ़ा--"फ़रिश्ते ने आप से कहा था 'Plough Corn-अर्थात् मकई बोओ'। आपने उलटा समझा ?"

जितने आदमी वहां बैठे थे, सभी क़हक़हा मार कर हंस पड़े। व्याख्यानदाता पर मानों घड़ों पानी पड़ गया। पाठकों को बतलाने की जरूरत नहीं की बुड्ढे के और पादरी साहब के कहे हुये शब्दों के प्रथमाक्षर एक ही हैं। दोनों ने उनके दो भिन्न भिन्न अर्थ किये। हम लोग इस प्रकार बहुत देर तक बातें करते रहे।

आज तमाम दिन पानी बरसता रहा। शाम को भोजन के बाद सब लोग फिर बैठक में इकट्ठे हुए। एल्बी भी दोपहर की गाड़ी से आगये थे। एल्सी पिआनो बजाने में कुशल थी। गाना बजाना आरम्भ हुआ। एक अजीब दृश्य था--स्वामी, सेवक सब एक समान--कोई भेद-भाव नहीं। अपने देश में देखो। नौकर तो पशु से भी बदतर समझा जाता है। ज़मींदार लोग किसानों को अपने साथ कुरसी पर बिठलाना हतकइज्ज़त समझते हैं। पाठक, यदि आपके यहां कोई नौकर हो तो आप उस को शिक्षा दें; उसके अन्दर आत्म-सम्मान का माद्दा उत्पन्न करें; यही सच्ची देश सेवा समझिए।

पल्सी पिआनो बजाती थी और गाती भी थी। उसके साथ उसकी दो बहनें और भाई भी गाते थे। अधिकांश भजन प्रेम और खीष्ट-धर्म्म सम्बन्धी थे। दो घन्टे तक हम लोगों ने गाने का आनन्द लूटा। अन्त में, हाल्वे के कहने पर, एक छोटी लड़की ने, जिसकी उम्र आठ बरस की थी, एक भजन गाया। उसके कुछ पद मैं नीचे लिखता हूं—

There are many flags in many lands,
There are flags of every hue.
But there is no flag in any land,
Like our own red, white and blue.

CHORUS.

Then hurrah for the flag,
Our country's flag, its stripes aud white stars.

VERSE.

I know where the prettiest colors are,
And I'm sure if I only knew.
How to get them here I would make a flag.
Of glorious red, white and blue.

* * * * *

VERSE.

We should always love the stars and stripes,
And we mean to be ever true,
To this land af ours and the dear old flag,
The red, the white and blue.

न जाने क्यों, इस भजन को सुनकर मुझे बेचैनी सी हुई। मैं झट से उठ कर, सब से आज्ञा ले, अपने कमरे में चला

गया। आंखों से टप टप आँसू गिर रहे थे। अकेला अंधेरे कमरे में बैठा जो कुछ सोच रहा था उन भावों को लिखने की शक्ति इस लेखनी में कहां!

* * * * *

घास के खेत में काम करना कठिन है। वर्षा के बाद मच्छरों की बहुतायत हो गई है। इस समय, दोपहर को, हवा भी बन्द है। दोनों हाथों से या तो काम करें या मच्छर हटावें। इधर से हाथ हटाओ तो उधर काटते हैं। मतलब यह कि काम करने वालों का आज नाक में दम था।

हम दो आदमी भाग्यशाली थे—एक तो मैं और दूसरा मेरा साथी। हमारा काम घास की मेंड़ बांध कर उसके बुर्ज बनाना था। इसलिये हम दोनों ज़मीन से कई फुट ऊंचे रहते थे, और ज्यों ज्यों घास आती जाती थी, त्यों त्यों ऊंचे होते जाते थे। इससे मच्छरों से बहुत कुछ रक्षा होती थी।

घास के बुर्ज बनाने के लिये जो मशीन रहती है उसके लिए आदमी दरकार होते हैं। एक आदमी कटी हुई घास को इकट्ठा करता जाता है—हाथ से नहीं मशीन से। दो जने दूसरी मशीनों से उस कटी हुई घास को लाकर एक बड़ी मशीन के दांतों के आगे रखते जाते हैं। ये दांत लकड़ी के डेढ़ डेढ़ गज़ लम्बे होते हैं। जब काफ़ी घास उन दांतों में अट जाती है, तब एक आदमी दूसरी तरफ़ से घोड़े को हांक देता है। घास उन दांतों पर ऊपर उठती हुई चली जाती है। ज़मीन से कोई पांच गज ऊंचे आकर ये दांत पीछे को ओर दुलक पड़ते हैं। घोड़े को रोक लेते हैं। सारी घास पीछे गिर जाती है। घोड़े को वापिस हांक लेते हैं। इस तरह मशीन घास को पीछे की ओर फेंकती जाती है। वहां दो

आदमी गिरी हुई घास को इकट्ठा कर उसकी मेंड़ बांधने और बुर्ज बनाने में लगे रहते हैं। तात्पर्य्य यह कि घास को इकट्ठा कर इस तरीक़े से रखते हैं जिससे वर्षा का पानी पड़ने से वह सड़ न जाय।

अभी दो ही घंटा मुझे काम करते हुआ था कि एक लड़के ने मुझे आकर कहा कि एल्वी बुलाते हैं। बुर्ज से उतर कर मैं एल्वी के पास चला गया। एल्वी दूसरे खेत में एक और काम में मशगूल थे। जब मैं वहाँ पहुंचा तब मुझे मकई भरने में मदद देने का काम मिला। यहां एक दूसरी ही कल चल रही थी। इसको अंग्रेज़ी में "कार्न शेलर" (Corn Sheller) कहते हैं। इसका काम मकई के भुट्टों से दानों को अलग करना है। बारह घोड़े इस कल को चला रहे थे। एक आदमी मकई के भुट्टे एक बड़े नल में डालता जाता था। अंड़ियां अलग हो जाती थीं और दाने दूसरे नली से डब्बे-दार गाड़ी में गिरते जाते थे।

इस खेत पर काम करने का यह मेरा आखिरी दिन था।

दूसरे दिन अपनी मज़दूरी ले मैंने सब से "गुड बाई" कही और दूसरी धुन में किसी और जगह चला गया।

पाठक, आप यदि ऊब न गये हों तो मैं दो चार बातें आप से और करलूं। मैंने इस लेख में कोशिश यही की है कि आप को अमरीकन-कृषि-सम्बंधी बातें सुनाऊं। मने सब बातें सच सच आपको सुना दी हैं, कोई बात छिपा नहीं रक्खी। सम्भव है कि आपको इस लेख के पाठ से अधिक रस न आया हो। यदि ऐसा हुआ हो तो मुझे खेद है।

एक बात और है। मैंने जो इस लेख में कहीं कहीं मांस की बातें लिखी हैं उनसे मेरा अभिप्राय केवल अपना हाल

ठीक ठीक लिखने का है मेरा यह मतलब हरगिज़ नहीं है कि वैष्णव-विचार के विद्यार्थी अमरीका न आवें। आख़िर मुझे खाने को मिलता ही रहा, और अमरीकावाले सिर्फ़ मांस ही थोड़े खाते हैं। शाक तरकारी सब जगह मिल जाती है। इससे केवल आप यह देख सकेंगे कि निर्धन भारतीय विद्यार्थी को अमरीका आकर कितना आत्म त्याग करना पड़ता है। जापानी विद्यार्थी के लिए ऐसी कठिनाइयां नहीं हैं। वे जहां जाय वहां उनको चावल, मांस और मछली मिल सकती है।

इस लिखने से एक अभिप्राय और भी है। आज कल विदेशयात्रा का दरवाजा खुला हुआ है। सैकड़ों विद्यार्थी अन्य देशों में जाकर अपना तन, मन, धन लगा कर विद्योपार्जन करते हैं। परन्तु जब वे स्वदेश लौटते हैं तब आप उनसे प्रायश्चित्त करने को कहते हैं। भला जो लोग अमीर हैं वे तो आप के डर से काशी के किसी महामहोपाध्यायजी को बुलाते हैं; आप को खुश करने के लिये दो तीन सौ ब्राह्मणों की तो पेट पूजा कराते हैं; तिस पर भी किसी न किसी बिरादरी वाले की मूर्खता से उन बेचारों को फ़जीहत ही होती है। परन्तु यदि आप किसी मेरे समान विद्यार्थी को जिसने सब के साथ बैठ कर खाया है—यद्यपि मांस नहीं खाया—वापिस आने पर, प्रायश्चित करने को कहें तो वह बेचारा बे मौत ही मरा। न तो उस गरीब के पास इतना रुपया ही है जो शास्त्री महाराज की अगवानी कर सकें; न ब्राह्मणों की दक्षिणा के लिए धन ही है; तो मेरे सदृश लोग तो आप के विचार में अशुद्ध ही रहे; मर मर के अमरीका पहुँचे; वहाँ जाकर सैकड़ों कष्ट उठा कर कुछ सीखा। वह भी किस लिए? अपने पेट की खातिर नहीं, उसका पालन तो अच्छी तरह स्वदेश

ही हो सकता था, बल्कि आप की और आप के सन्तानों की भलाई के लिए। जब सीख साख कर वापस आये तब आप ने यह पाखण्ड खड़ा किया,—"अशुद्ध हो, अशुद्ध हो" और शुद्ध करने का ठेका दिया है उन लोगों को जिनका अपना निज का जीवन भी शुद्ध नहीं है। पाठक, मैं आप से हाथ जोड़ कर पूछता हूं कि क्या यही न्याय है ? क्या इन्हीं बातों से देश का उद्धार होगा ?

परमात्मा हमारा सब का पिता है। उसी की आज्ञा पालन करने के लिये हम लोग देश-विदेश घूमते हैं और मातृभूमि की सेवा के लिये कमर कसे हैं। केवल परमात्मा की आज्ञा-उलङ्घन करने से हम लोग अशुद्ध हो सकते हैं, और उसी की उपासना करने से शुद्ध भी हो सकते हैं। मनुष्य की क्या मजाल है जो हमको अशुद्ध से शुद्ध कर सके। जो आप ही मलिन है वह किसी को शुद्ध क्या करेगा। इसलिये हे भारतीय युवको ! यदि किसी उच्च उद्देश को सामने रख कर आप ने परदेश-गमन किया है और वहां जाकर उसी के लिए सब कष्ट सहन करते रहे हो, तो परमात्मा के निकट आप शुद्ध हैं। निर्भय होकर स्वदेश को लौटो और अपने उद्देश की पूर्ति करो।

जनेवा झील की सैर

प्रातःकालीन कामों से फारिग़ हो, कपड़े पहन, मैं तैयार ही हुआ था कि मेरे साथी ने दरवाज़ा खटखटाया। "आप आ गये"—यह कहकर मैंने झट से दरवाज़ा खोल दिया।

मेरे साथी ने मुसकराकर पूछा—"कहिये आप तय्यार हैं?"

मैं—"बस तय्यार ही हुआ था कि आप आ गये।"

साथी—"अच्छा अब चलिए।"

मेरे साथी का नाम मार्कस है। वह बहुत ही हंसमुख, खुश-मिज़ाज, नौजवान है। लम्बा, चौड़ा, हाथ पैर गठीले, चेहरा साफ़, दाढ़ी मूछ सफ़ाचट, उम्र कोई चौबीस बरस। आप जब उसे देखेंगे उसके चेहरे पर मुसकराहट पायेंगे। यों तो अमरीका-निवासी स्वभाव ही से हंसमुख होते हैं, और हंसी दिल्लगी बहुत पसन्द करते हैं; परन्तु मार्कस में यह विशेष गुण है कि उससे मिलते ही आप का चेहरा खिल उठेगा। आप कैसे ही उदास क्यों न हों सब उदासी भूल जायंगे। मार्कस के पूर्वज स्वीडन से अमरीका आये थे, इसी लिए शरीर से आप बलिष्ठ हैं।

शिकागो-विश्वविद्यालय से आध मील दूर, जेक्सन बाग़ की दूसरी ओर, "एलिवेटर" नामक गाड़ियों की सड़क है। बात चीत करते हुए हम उसके स्टेशन पर पहुंचे। इन गाड़ियों पर चढ़ने वाले चाहे आध मील जायं, चाहे बीस मील, किराया ढाई आने ही देना पड़ता है। अपना किराया

देकर हम ऊपर प्लेटफ़ार्म पर चले गये। प्लेटफ़ार्म पर कई तरह की छोटी छोटी कलें रखी हुई थीं, जो सौदा बेच रही थीं। यदि आप को तम्बाकू की ज़रूरत है तो एक पैसा कल के मुंह में डाल दो और नीचे वाले लोहे के डण्डे को दबा दो, आप को तम्बाकू मिल जायगी। उसी तरह बहुत सी चीज़ों के लिये जुदा जुदा छेद थे, जहां पैसा डालने से वह चीज़ मिलती थी। बिना पैसा डाले नहीं मिल सकती थी। भारत-वासियों के लिये यह एक अचम्भे की बात होगी।

गड़गड़ करती हुई गाड़ी आ पहुंची। हम लोगों को जगह न मिलने के कारण खड़े रहना पड़ा। इस समय भीड़ होने का कारण यह था कि लोग सवेरे, आठ बजे, दुकानों पर जाते हैं और गड़ियां केवल दो ही होती हैं। एक में तम्बाकू पीनेवाले, दूसरी में हमारे जैसे बैठते हैं। मगर यह दिक़्क़त कुछ ही मिनटों के लिये होती है। ज्यों ज्यों शहर निकट आता जाता है, डिब्बा ख़ाली होता जाता है।

मैं—"आप तो गरम कोट लेते आये; मैं तो लाया नहीं, पर आज कुछ ऐसी सरदी भी तो नहीं है।"

मार्कस—"सर्द हवा चलते देर नहीं लगती। और फिर हम लोगों को झील के उस पार जाना है। वापस आने तक ठण्ड पड़ने लगेगी।

मैं—"तो क्या सरदी में ठिठुरना होगा?"

मा०—"ठिठुरना क्यों होगा? इसी कोट में गड़पट हो रहेंगे।"

"क्वार्क-गली" में पहुंच कर हमने जनवा झील को जाने-वाली रेलगाड़ी का स्टेशन तलाश किया। पता लगा कि गाड़ी के जाने में अभी एक घण्टे की देरी है। फ़ैशन के मुताबिक़

यहां पर दूसरे, तीसरे, दिन हजामत ज़रूरी है ; और यदि नाई से हजामत कराओ तो १२½ आने के पैसे लगते हैं। इसलिए रोज़ के और ज़रूरी कामों में हजामत भी शामिल है। मार्कस आज सुबह शीघ्रता के कारण हजामत नहीं कर सके थे।

मा०—"मैं तो नाई की दुकान पर जाता हूं ; आप वहां पर तमाशा देखें।

मैं—"बहुत अच्छा।"

तमाशा क्या था, वही जो बड़े बड़े शहरों में स्टेशनों पर होता है। मुसाफिरख़ाने में बहुत सी बेंचें रखी हुई थीं, जिन पर स्त्री-पुरुष बैठे थे। भांति भांति की बातें कर रहे थे। कोई कोई अख़बार पढ़ रहा था।

एक बेंच पर चार पांच आदमी खूब हंस हंस बातें कर रहे थे। मैं उनके पीछे वाली बेंच पर बैठ कर उनकी बातें सुनने लगा। एक ने कहा—

"हम रास्ते में बिजली की गाड़ीसे आ रहे थे। एक आयरिश (Irish) हमारे कमरे में जगह न मिलने के कारण दरवाज़े ही पर खड़ा रहा। थोड़ी देर बाद किराया लेनेवाला कांडक्टर "Conductor" आया। उसने कहा—"आगे बढ़िये, साहब"। आयरिश बोला "ग़ज़ब खुदा का ! ढाई आने के पैसे भी दिये और घर तक पैदल भी चले !" इस आगे बढ़ने में उसका पैर दूसरे आदमी के पैर पर पड़ गया। वह आदमी बोला—"तुम्हारी आंखें कहां हैं ?" आयरिश बोला—"सिर में"। उस आदमी ने कहा—"तो क्या मेरा पैर नहीं देख पड़ता ?" आयरिश बोला—"नहीं, तुम जूता जो पहने हो ?"

दूसरा आदमी बोला—"हम तुमको एक दिल्लगी सुनावें।"

"रात को हम तमाशा देखने थियेटर में गये। एक यहूदी अपने लड़केको साथ लेकर तमाशा देखने आया। सिर्फ़ अपने लिये टिकट ख़रीद कर लड़के के साथ वह झट अन्दर घुसने लगा। दरवाज़े पर जो टिकट देखने वाला था उसने रोका और कहा कि एक टिकट इस लड़के के लिये भी ख़रीदना होगा। यहूदी बोला, आप यकीन कीजिए, लड़का आँख बन्द किये बैठा रहेगा!" यह सुन सब लोग खिलखिला कर हंस दिये।

फिर तीसरा कहने लगा—"मैं कल दोपहर को एक गली से जा रहा था। एक बड़ा सा कुत्ता भौंकता हुआ मेरे पीछे लगा। मैंने पहिले तो समझा कि शायद मिलना चाहता है; मगर जब वह उछल कर काटने को बढ़ा तब मैं भागा। कुत्ता भी मेरे पीछे पीछे चला। मैं एक अस्तबल में घुस गया। वहां मेरी नज़र एक लम्बी लड़की पर पड़ी जिसके एक तरफ़ लोहे की नोकदार एक कील थी। मैंने आव देखा न ताव, झट लकड़ी उठा ली और नोकदार छोर से कुत्ते के चुभो दिया। इतने में कुत्ते का मालिक भागता हुआ आया और कुत्ते को ज़ख्मी देख झल्लाकर बोला—'किस लिये तुमने कुत्ते को ज़ख्मी किया?' मैंने कहा—'यह मेरे पीछे भागता हुआ आया था।' वह बोला—'क्यों तुमने लकड़ी के दूसरे सिरे से नहीं हटाया?' मैंने कहा—'क्यों नहीं यह मेरी तरफ़ दूसरे सिरे से (पीछा करके) आया?"

इस टोली का एक एक आदमी इसी तरह हंसी दिल्लगी की बात सुनाता और सब लोग खिलखिला कर हंसते। रेल का समय आ गया। मुसाफ़िर अपना अपना बेग लेकर तैयार हुए। मेरे साथी मार्क्स भी आ पहुंचे।

रेल के प्लेटफ़ार्म पर जाकर पता लगा कि विश्वविद्यालय के २०० से अधिक विद्यार्थी आज जनवा झील की सैर को निकले हैं। इनमें से आधे के क़रीब लड़कियां थीं। हर एकके पास ब्यालू करने के लिये सामान था। मगर हम लोगों ने कुछ नहीं लिया था। सोचा था कि जनवा झील के पास जो गाँव हैं वहां कुछ ले लेंगे।

टिकट काटने वाले से मालूम हुआ कि यह स्पेशल ट्रेन (ख़ास गाड़ी) है जो विश्वविद्यालय के छात्रों ही के लिए रेलवे कर्मचारियों ने चलाई है। इसलिए केवल तीन बड़े बड़े डिब्बे हम लोगों के लिए काफ़ी थे। एक डिब्बे में सौ के क़रीब आदमी बैठ सकते हैं। यहां हिन्दुस्तान की तरह स्त्रियों के लिए जुदा, मरदों के लिये जुदा, कमरा नहीं था। सब जने मिल जुल कर साथ ही बैठ गये।

साढ़े नौ बजे के क़रीब गाड़ी खुली। शिकाको शहर की धुवां मिश्रित वायु तथा शोरो गुल से बाहर हुए। मैदान की शुद्ध पवन का सञ्चार हुआ। गाड़ी के दोनों ओर हरियाली ही हरियाली थी। सब्ज़ पत्तों से सुसज्जित वृक्ष अपने पूरे सौन्दर्य में दृष्टि पड़ते थे। प्रकृति-माता की शोभा अनुपम थी। मार्च में जहां हिम ही हिम दृष्टि पड़ती थी वहां आज मई में हरी मख़मल का बिछौना बिछा हुआ है। गाड़ी में बैठे हम लोग उस सुन्दर दृश्य को देख देख कर आनन्दित हो रहे थे। प्रसन्नचित्त विद्यार्थियों ने शिकागो का राग अलापना आरम्भ किया—

शिका—गो—गो, गो—शिका—गो
गो—शिका—गो, गो—शिका—गो
गो—शिका—गो, गो—शिका—गो
शिकागो—गो

ऊँचे स्वर से एक ध्वनि में जब सब लोगों ने "शिकागो—गो" कहा, तब मुझे बड़ा ही आनन्द आया। कहां यह जीवन और कहां हमारे देशके लोगों का! स्वतन्त्र और स्वछन्द; एक ही प्रकार के अधिकार; सब लड़के लड़कियों का इकट्ठे विद्याध्ययन; इकट्ठे ही खेल कूद।

मार्कस के पास उनके एक और साथी आ बैठे; इससे हम लोग तीन आदमी हो गये। कुछ देर तक हम लोग भिन्न भिन्न विषयों पर बात चीत करते रहे। फिर मैंने मार्कस से कहा कि मैं ज़रा गाड़ियों में घूम कर देख आऊँ कि और सब लोग क्या कर रहे हैं।

रेल गाड़ियों के डिब्बे यहां हिन्दुस्तान की तरह कबूतर खानों जैसे नहीं होते। बहुत लम्बे चौड़े होते हैं, जिनमें पचास साठ आदमी आसानी से बैठ सकें। उनके बीच में जाने आने का रास्ता रहता है, और एक गाड़ी दूसरी से इस प्रकार जुड़ी रहती है कि एक आदमी सब गाड़ियों में आ जा सकता है।

अधिकांश विद्यार्थियों को मैंने ताश खेलते हुए पाया। चार चार आदमी बीच में मेज रख कर व्हिस्ट (Whist) खेल रहे थे। कोई कोई मासिक पुस्तकें पढ़ रहे थे। एक जगह तीन लड़कियां बैठी बातचीत कर रही थीं। उनमें से एक, जिसका नाम "मिस" (कुमारी) स्काट था, मुझ से परिचित थी। जिस समय उसने मुझे देखा, बड़े प्रेम से हाथ मिलाये और अपनी एक सहेली से कहा—

"मिस नैना, मिस्टर देव से परिचित हो लीजिये।"

मिस नैना ने मेरे साथ हाथ मिलाया। मैंने कहा—"आप का परिचय पाकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ।" इस प्रकार दूसरी मिस एडम्स के साथ मिस स्काट ने मेरा परिचय करवाया।

फिर मिस स्काट ने अपनी सहेलियों से कहा—"मिस्टर देव हिन्दुस्तान से यहां विद्याभ्यास के लिये आये हैं। आप और मैं दोनों पिछली गरमियों में एक ही प्रोफेसर (अध्यापक) से वक्तृता का अभ्यास करते थे। मिस्टर देव ने बहुत अच्छे २ विषयों पर व्याख्यान देकर हम लोगों को अनुगृहीत किया है, इनकी और मेरी पहचान तभी से है।"

नैना—"अच्छा, तो आप हिन्दुस्तान के रहने वाले हैं ! मैंने समझा था आप इटली के निवासी हैं।"

मैं (मुसराकर)—"बहुधा लोगों ने यहां मुझे इटली ही का निवासी समझा है।"

मिस स्काट—"मिस्टर देव, मैंने आपको अपनी सहेली नैना के विषय में कुछ नहीं कहा। आप जान कर प्रसन्न होंगे कि यह रूस की रहने वाली है और रूस में स्वतंत्रता के लिये जो जदोजहद हो रही है उसमें ये भी शामिल थीं। अभी एक ही महीना इनको यहां आये हुआ है।"

भला ऐसा कौन मनुष्य होगा जिसे ऐसी देवी के दर्शन कर आह्लाद न हो। स्वतन्त्रता—रूस की स्वतन्त्रता-जैसे पुण्य के काम में जिसने अपने आप को बलिदान कर दिया हो; मातृभूमि की दुःख-निवृत्ति के लिये जिन्होंने अपने आपको ख़तरेमें डाला हो ; हम ऐसे वीरोंको नमस्कार करते हैं। मिस स्काट के इस कथन पर उस देवी में मेरी श्रद्धा और भक्ति बढ़ गई। मैंने ध्यान पूर्वक उसकी ओर देखा। बीस वर्ष की युवा लड़की हाथ पैर से मजबूत, गोल चेहरा, बड़ी बड़ी आंखें, क़द कोई साढ़े पांच फीट से कुछ अधिक, साधारण वस्त्र पहने हुए, मुझे मानो देशभक्ति का उपदेश दे रही थी।

मैं—"आपने अङ्गरेजी भाषाका अभ्यास कहां किया था ?"

नैना (ज़रा लजाकर)—"मुझे अंगरेज़ी बोलने का अभ्यास बहुत कम है। स्कूल में थोड़ासा अभ्यास किया है।"

मिस एडम्स ने जो अभी तक चुप थी, मुझ से कहा—"मिस्टर देव, हम लोग यहां हिन्दुस्तान के हालत जानने के बहुत उत्सुक हैं। प्रायः मिशनरियों (पादरियों) से ही समाचार मिलते रहते हैं। आज हमें बहुत अच्छा अवसर मिला है कि आप से ठीक ठीक हालत दरियाफ़्त करें। आप बताइए कि क्या सचमुच आप लोग स्त्रियों को क़ैदियों की तरह रखते हैं।"

मैं—"आप अपने प्रश्न को ज़रा स्पष्ट कर दीजिए तो मैं उत्तर दूं।"

एडम्स—"मैंने लेक्चरों (व्याख्यानों) में सुना है और किताबों में पढ़ा है, कि हिन्दू लोग अपनी औरतों को घरों में क़ैदियों की तरह रखते हैं। यदि बाहर जाएँ तो मुंह पर परदा डाल कर। यदि किसी के घर लड़की पैदा हो तो घर में मातम सा छा जाता है; पुरुष, स्त्री से बात चीत करना छोड़ देता है; और कहता है कि क्यों इसने लड़की पैदा की? बहुतेरे तो लड़कियों को मार भी डालते हैं।"

यह विषय रोचक था और मिस एडम्स ने ज़रा ऊंची आवाज़ से बातचीत की थी, इससे इधर उधर की लड़कियां लड़के पास आकर बैठ गये और उत्तर की आकांक्षा में मेरे मुंह की ओर देखने लगे।

मैं—"इसमें सन्देह नहीं कि हमारे देश में स्त्रियों को ऐसी स्वतन्त्रता नहीं जैसी इस देश में है। हम लोग उन अबलाओं के अधिकारों की तरफ़ बहुत कम ध्यान देते हैं। तिस पर भी हम स्त्रियों को क़ैदियों की तरह नहीं रखते हम उनकी इज़्ज़त

करते हैं और घरों में हमारी मातायें पूरे अधिकार रखती हैं। यह सच है कि बहुत से अनपढ़ मूर्ख लोग स्त्रियों को कष्ट देते और लड़की का पैदा होना बुरा समझते हैं, मगर यह दशा उच्च और शिक्षित लोगों में नहीं है। परदे के कारण भी कई हैं। परदे का रिवाज हिन्दुस्तान में विदेशियों के आने से पहले प्रचलित न था, और अब भी कई प्रान्तों में नहीं है।"

एक लड़की—"हिन्दुओं का धर्म ही ऐसा है जिससे मर्दों की अपेक्षा स्त्रियां नीच समझी जाती हैं। स्त्रियां पति के जूठे टुकड़े खाकर रहती हैं; मातायें लड़कियों को गङ्गा में फेंक देती हैं; और यहां तक कि पतिके मर जाने पर स्त्री का सिर मूड़ उसे सारी उम्र मातमी लिबास पहनाये रखते हैं।"

ऐसी बातें सुन कर एक लड़की ने धीरे से कहा—"परमात्मा का शुक्र है कि मैं ऐसे मुल्क में पैदा नहीं हुई।"

मैं—"असल में बात यह है कि हिन्दुओं के धर्म के अनुसार स्त्री-पुरुष की अर्द्धांगिनी है। जो धर्म और शास्त्र की मर्य्यादा समझते हैं वे स्त्रियों को वैसे ही अधिकार देते हैं, परन्तु हमारे देश में मूर्खता अधिक है। इसी लिये ऐसी ऐसी बातें आप लोगों के सुनने और पढ़ने में आती हैं। हम लोग ऐसी स्वतन्त्रता भी देना नहीं चाहते जैसी इस देश में है। आप लोग एक सीमान्तर पर हैं और अधिकांश लोग हिन्दुस्तान में दूसरे सीमान्त पर। हम उस रास्ते जाना चाहते हैं जिस पर हमारे पूर्वज चलते थे।"

एडम्स—"वह कौन सा ?"

मैं—"स्त्री और पुरुष के अधिकार बराबर हैं। स्त्री घरकी स्वामिनी है; मनुष्य का अधिकार-स्वातन्त्र्य घर से बाहर है।

स्त्रियों को विद्याध्ययन वैसा ही आवश्यक है जैसे पुरुषों को। स्त्री का मान, सत्कार, पूजा करना पुरुष का धर्म है।"

इतने में टिकट काटने वाले ने आकर कहा—"यहां गाड़ी बदलेगी।" सब लोग उठ खड़े हुए। मैंने मिस स्काट से कहा कि स्टीमर में आप लोगों से फिर भेंट होगी। शीघ्र उनसे जुदा होकर मैं अपने मित्र के पास आया।

दूसरी गाड़ी में बैठ कर दो तीन स्टेशन ही गये थे कि जनवा झील दिखाई पड़ने लगी। इस झील का नाम जनवा झील (जो स्वीटज़रलैंड में है) इसलिये रक्खा गया है कि यह उसी की तरह रमणीक है। दृश्य भी इसमें वैसे ही हैं। शिकागो से उत्तर-पश्चिम, ७० मील की दूरी पर, यह झील है। इसकी लम्बाई ६ मील और चौड़ाई सवा मील से तीन मील तक है।

रेलगाड़ी ठीक झील के किनारे आकर खड़ी हुई। गाड़ीसे उतर कर हम लोग हारवर्ड नामी अग्निबोट में जा विराजे। पवन मन्द मन्द गति से चल रहा था। अग्निबोट में एक आदमी, जिसका काम यही था कि यात्रियों को झील के इर्द गिर्द के घरों, फुलवाड़ियों और दृश्यों का हाल बयान करे, सब लोगों को वहां का वृत्तान्त बताता जाता था। झील के चारों ओर बहुत अच्छे अच्छे घर बने हुए हैं। वहाँ शिकागो के धनाढ्य आदमी गरमियों में आकर रहते हैं। छोटी छोटी पहाड़ियाँ वृक्षों और घास से लदी हुई झील की शोभा को दुगना करती हैं।

हँसते खेलते विद्यार्थी लोग विश्वविद्यालय की प्रशंसा के गीत गा रहे थे और अपनी इस यात्रा का पूरा आनन्द उठा रहे थे। आज ज़रा बदली थी। जब पवन ज़ोर से चलने

लगता था तब शीत मालूम होता था। मैंने मार्कस का कोट ओढ़ लिया और अच्छी तरह आराम से बैठ गया। एक विद्यार्थी अपने साथ फ़ोटोग्राफ़ी का केमरा लाया था। उसने उसी समय सब की तसवीर ले ली।

बारह बजे के बाद हम लोग झील के उस पार, झील जनवा नामी गाँव में पहुंचे। अधिकांश लोग वहाँ होटल में खाना खाने चले गये। मैं, मार्कस और तीसरा साथी गाँव के बाहर एक वृक्ष के तले बैठ गये। हमारा तीसरा साथी जो सामान लाया था वह हम तीनों के लिये काफ़ी था। सो हम लोगों ने आनन्द से भोजन किया। लौटते समय रात को खाने के लिये फल और रोटी मोल ले ली।

हमारे देश के गांवों की तरह यहाँ के गांव नहीं हैं। यहां के गांवों के मकान बहुत फ़ासले पर सुन्दर और हवादार होते हैं। मकानों के बनाने में अधिकतर लकड़ी से काम लेते हैं। ओलतीनुमा छतें रहती हैं। एक, दो छतों के मकान बनाते हैं। यहाँ, चाहे गरमी हो, चाहे जाड़ा, अन्दर कमरें में लोग सोते हैं। प्रत्येक गांव में स्कूल होता है; टेलीफ़ोन होता है ; बिजली की रोशनी का प्रबन्ध भी बहुत जगह है। परन्तु ग़रीब लोग प्रायः मिट्टी का तेल जलाते हैं। ज़मीन से पांच सात फ़ीट ऊँचे मकान होते हैं। मकान में मच्छर मक्खी न घुसें, इस लिये हर एक खिड़की और दरवाज़े के आगे बारीक जालियाँ लगी रहती हैं। खिड़कियों के दरवाज़ों में शीशे लगे रहते हैं। अग्निबोट में सीटी बजी। हम लोगों ने समझा कि वापस जाने का समय हो गया। क्योंकि रास्ते में झीलके एक किनारे शिकागो विश्वविद्यालयकी प्रकाण्ड यन्त्रशाल (Observatory) जो यर्कस साहब के नाम से मशहूर है, देखनी थी। असल

मतलब इस यात्रा का यही था। इसलिये सब लोग झटपट अग्निबोट में आगये।

ढाई बजे के क़रीब अग्निबोट यर्कस यन्त्रालय के सामने पहुंच गया। विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने लाखों रुपये इमारत तथा दूसरे सामान के लिए इस लिये ख़र्च किये हैं, जिसमें ज्योतिष विद्या के प्रेमी छात्र और आचार्य्य अपनी रुचि के अनुसार इस विद्या से लाभ उठा सकें। एक ऊँची पहाड़ी के ऊपर इस शाला की बहुत विशाल इमारत बनाई गई है। उसके तीन ओर गुम्बज़ हैं। एक ओर के बड़े गुम्बज़ में संसार में शायद सब से बड़ी दूरबीन रक्खी है दूसर दो गुम्बज़ों पर छोटी छोटी दूरबीनें हैं।

जब और विद्यार्थियों के साथ मैं उस बड़े गुम्बज़ में पहुंचा, जहां वह दीर्घकाय दूरबीन रखी थी, तो मैं आश्चर्य्य से आंखें फाड़ फाड़ कर उसे देखने लगा। उसके बड़े बड़े चक्र और भाप के बल से उस गुम्बज़ का घूमना, और दूरबीन का भी तारों के गति के अनुसार साथ साथ घूमते जाना, हैरानी में डालता था। जब सब विद्यार्थी गुम्बज़ में इकट्ठे हो गये तब एक आचार्य्य ने हम लोगों को सब घुमा फिरा कर दिखाया। हमें समझाया कि किस तरह तारों की गति तथा अन्यान्य ज्योतिष-सम्बन्धी बातें इस यन्त्र से जानी जाती हैं। सूर्य के ऊपर जो धब्बे दिखाई देते हैं उनके कई फ़ोटो हमें दिखाये। पाठक समझ सकते हैं कि ४० इञ्च के शीशे (Lens) से कैसी अच्छी तरह आचार्य्य लोग यहां आकाश का बेध करते होंगे और जो फ़ोटो उस शीशे के द्वारा ली गई होगी वे कैसी होंगी। फ़ोटोग्राफ़ी और ज्योतिष विद्या का जो सम्बन्ध है

उसका महत्व आचार्य्य ने हम लोगों को बहुत ही अच्छी तरह बतलाया।

इसी प्रकार चारों गुम्बज़ों में विद्यार्थी गये और आचार्य्यों ने सब के यथायोग्य प्रयोगों का वृत्तान्त संक्षेप से समझा दिया।

पाठक हम आप से क्या कहें। जब जब इस देश में हमको ऐसे ऐसे उपयोगी और लाभदायक वैज्ञानिक यन्त्रों के देखने का अवसर आता है तब तब हमारे मुंह से बेइख़्तियार यही निकलता है—"स्वतन्त्र देश क्या नहीं कर सकता"—यहां अमरीका के लोगों को अपनी मानसिक शक्तियों की उन्नति करने का कैसा अच्छा अवसर मिलता है। इस विद्यालय में करोड़ों रुपये लगा कर ज्योतिष का सामान केवल अमरीकन बच्चों के उपकारार्थ रक्खा गया है। जिस किसी को ज्योतिष में रुचि है वह वहां आकर सारी आयु व्यतीत कर सकता है। उसको वज़ीफ़े और हर तरह की सहायता मिलती है, जिसमें वह विज्ञान की वृद्धि करे। एक हमारा देश है जहां करोड़ों आदमी पशुओं की तरह पैदा होते हैं और जन्म भर अविद्या-न्धकार में पड़े पड़े मर जाते हैं। उनको मनुष्य-जीवन मिलना और न मिलना बराब है। जो चाहते हैं कि उन्नति करें विद्य पढ़ें; उनको कोई उत्साह देनेवाला नहीं; सामान नहीं; कोई स्थान ऐसा नहीं जहां अपनी शक्तियों का यथायोग्य उपयोग कर सकें।

आचार्य्य की इच्छा थी कि वह उस बड़ी दूरबीन से सूर्य्य के धब्बे दिखावे। मगर बदली के कारण हम लोग अपनी यात्रा से पूरा लाभ न उठा सके। इसलिये उसने केवल भिन्न भिन्न यन्त्रों के उपयोग बतलाये। जिन तारागणों को दूरबीन की सहायता से भी अच्छे प्रकार नहीं देख सकते, उनकी धीमी

रोशनी के सामने फ़ोटोग्राफ़ के प्लेट बहुत देर रखने से जो तबदीलियां उस पर होती हैं उनसे उन तारागणों का बहुत कुछ हाल मालूम हो जाता है। ज्योतिष-विद्या सम्बन्धी जो जो प्रश्न विद्यार्थियों ने किये उन सबका आचार्य्य ने सन्तोषजनक उत्तर दिया। इस देखने भालने में हमारे तीन घण्टे ख़र्च हो गये।

भोजन का समय हो जाने के कारण सब लोगों ने ब्यालू की। हमने भी केले और रोटी से पेट भरा। इसके बाद यहां के ज्योतिष-पुस्तकालय को देखा। वहां तारागणों के कितने ही नक़्शे हैं। सूर्य्य-ग्रहण के बहुत बड़े बड़े फ़ोटोग्राफ़ हैं। अनेक प्रकार के फ़ोटोग्राफ़ यहां देखने में आये।

अग्निबोट ने सीटी दी और हम लोगों ने समझा कि वापस जाने का समय हो गया। सब लोग समय पर अग्निबोट में आ गये। ठीक सन्ध्या हो जाने पर हम लोग रेल के स्टेशन पर पहुंचे। शिकागो की गाड़ी खुली और दस बजे रात को हम लोग शिकागो पहुंच गये। स्टेशन पर विद्यार्थियों ने फिर "शिकागो-गो" की ध्वनि की। मार्कस और मैं विश्वविद्यालय की ओर चले।

मार्कस ने मेरा हाथ अपने हाथ में दबाकर कहा—"क्यों सैर का आनन्द आया?"

"आनन्द तो आया, मगर एक कसर रह गई।"

"वह क्या?"

"उस बड़ी दूरबीन से सूर्य्य के धब्बे न देख सके। बदली ने काम ख़राब कर दिया।"

"ख़ैर, फिर कभी सही। झील जनवा दूर तो है ही नहीं!"

"फिर, क्या रोज़ रोज़ आना थोड़े ही होगा।"

"यह क्यों? दो ही डालर ख़र्च हुए हैं न। आधा डालर भोजन का समझ लो।"

"हर वक्त थोड़े ही प्रोफ़ेसर इस प्रकार बतलाने को तैयार होगा।"

"हां, गरमियों में एक दिन फिर बहुत से विद्यार्थी आयेंगे। हर तीसरे महीने एक बार प्रोफ़ेसर मोलटन अपने विद्यार्थियों को वहां भेजते हैं।"

"अच्छा, देखो यदि मैं गरमियों में शिकागो में रहा तो अवश्य ही एक दफ़े फिर आऊँगा।"

"मैं तो इस बार गरमियों में बाहर स्टीरियास्कोप के चित्र बेचने मनोसोटा जाऊंगा।"

"सचमुच?"

"ज़रूर।"

"तीन महीने में कितना कमाने की आशा रखते हो?"

"कह नहीं सकता। कम से कम सात आठ सौ रुपये से कम क्या कमाऊंगा।"

"आप अमरीकन लोग रुपया कमाने में बड़े चतुर हैं।"

"यह पहिली बात है जो हमारे मा बाप लड़के लड़कियों को सिखाते हैं। अमरीकन कहीं चला जाय, भूखा नहीं मरेगा। कोई न कोई काम कर ही लेगा।"

"हमारे देश में तेली का बेटा तेली और बाबू का बेटा बाबू बनने की कोशिश करता है।"

"तभी वहां के लोग भूखों मरते हैं। यहां शिकागो के एक करोड़पति का लड़का भी एक कारख़ाने में काम करता है और १५० रुपये महीना कमाता है। सिर्फ़ इसलिये कि बाप

के रुपये के ऊपर अवलम्ब करना ठीक नहीं। मुमकिन है बाप कंगाल हो जाय या कोई और आपत्ति आ जाय।"

"इसमें शक नहीं। मैं इन बातों का मूल्य अब अच्छी तरह समझा हूं। हमारे देश में दस दस बीस बीस बरस हज़ारों रुपये ख़र्च करके हम लोग स्कूल और कालेजों में पढ़ते और परीक्षा पास करते हैं, और बाद में जगह जगह जूतियां चटख़ानी पड़ती हैं।"

"यहां हमारे ही विश्वविद्यालय में आप लड़कों को देखें। उनके हाथ देखने से साफ़ मालूम हो जायगा कि इन लोगों ने मेहनत मज़दूरी की है। क्यों ? इसलिए कि हर अमरीकन लड़के का सिद्धान्त है—"To lead an independent life"—(स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करना)। यदि कोई और काम न मिले, तो मज़दूरी ही करके ८ रुपये रोज़ कमा लेगा।"

"एक हमारा देश है जहां मज़दूरी करने वाले नीच जाति में गिने जाते हैं, और उनके साथ उठना बैठना, मिलना जुलना लोग बुरा समझते हैं।"

"आप लोगों की नस नस में "Aristocracy" (महापुरुषता) भरी है।"

मैं चुप हो गया। हमारी नस नस में Aristocracy महापुरुषता) भरी है, क्या यह सच नहीं है ? सच है। किस घृणा की दृष्टि से तेली, चमार, लोहार, धोबी, मोची, आदि लोग देखे जाते हैं। किसी के बाप-दादे ने कलाल का काम किया तो उसका सारा वंश निन्दित हो गया और उनकी भिन्न बिरादरी कर दी गई। इसी प्रकार सब के जुदा जुदा पेशे हो

गये। नीच ऊँच का भाव सिर से पैर तक हमारे देश में है। अफ़सोस !

बिजली की गाड़ी में बैठकर आधे घण्टे में हम विश्व-विद्यालय के पास पहुंच गये। मार्कस "गुड नाइट" कह कर अपने घर चला गया और मैं अपने कमरे में पहुंचा। कपड़े उतार बिछौने पर लेट गया। आध घण्टा उसी Aristocracy (महापुरुषता) वाली बात की उधेड़बुन में लगा रहा। इसके बाद सो गया।

एलाका-यूकन-पेशाफक प्रदर्शिनी ।

"लो उदयराम जी, मैं तो कल रात को स्टीमर से सियेटल जाऊंगा ।"

"क्यों इतनी जल्दी क्या है ?"

"चलेंगे । चलके सियेटल की प्रदर्शिनी देखेंगे ।"

"मुझे भी प्रदर्शिनी देखनी है ?"

"आप न जाने कब जावें । पहली जून से प्रदर्शिनी खुली है और आप तभी से आज चलते हैं, कल चलते हैं कह रहे हैं । पूरे तीन महीने तो आप ने इस तरह गुज़ार दिये, बाक़ी डेढ़ महीना और रह गया है, वह भी इसी प्रकार गुज़ार देंगे । न आपको अपने गोरखधन्धे से फुरसत मिले और न प्रदर्शिनी देखनी नसीब हो ।"

मेरी यह बात सुन कर उदयराम जी हंस पड़े और बोले-"भाई, बात तो सब सच कहते हो । क्या करें, यह संसार का धन्धा ही ऐसा है । पर यह तो बात निश्चय है कि यदि आपके साथ हमारा जाना न हुआ तो प्रदर्शिनी न देख सकेंगे । अच्छा, आप तीन दिन और ठहरें । पांच सेप्टेम्बर की शाम को यहां से चलेंगे और ६ सेप्टेम्बर को सियेटल पहुंचेंगे । छः को प्रदर्शिनी में बड़ा भारी मेला भी है ; कहते हैं, सियेटल-डे (Seattle Day) है और बहुत लोग उस दिन आवेंगे ।"

"अच्छा, तीन दिन और ठहर जाता हूं । पर इसके बाद न ठहरूंगा ।"

"बस इसको पक्का समझिए। पांच को हम लोग सियेटल चलेंगे।"

बेचारे उदयराम काम-काज की भीड़ में पांच को भी तैयार न हो सके। मैंने पांच की सुबह को अपने मित्र बिहारी लाल को तार द्वारा सूचना दे दी कि मैं रात के स्टीमर से सियेटल आता हूं।

उदयराम जी लुधियाना (पञ्जाब) के रहने वाले हैं। जन्म के आप ब्राह्मण हैं। केनेडा आये हुये आपको चार वर्ष होगये। आपका कारोबार बहुत अच्छा चलता है। एक दूकान है, कुछ ठेका है, ज़मीन ख़रीदी हुई है। 'सर्वे गुणा काञ्चनमाश्रयन्ति' यह इनका परम सिद्धान्त है। यदि सोचें तो इस ज़माने में है भी ठीक। ईश्वर की दया से आपने अच्छा रुपया पैदा किया है, और दिन प्रतिदिन कर रहे हैं। सब काम अकेले ही देखना पड़ता है, इसलिये फ़ुरसत कम रहती है।

अपने एक दूसरे मित्र मुंशीराम जी को साथ ले मैंने सियेटल की तैयारी की। मुंशीराम भी पञ्जाबी हैं और इधर वैंकोवर में ही मेरी इनसे भेंट हुई है। आदमी साधु और शान्तस्वभाव होने से सर्व-प्रिय हैं। आपसे मेरा घना सम्बन्ध हो गया है।

रात के साढ़े नौ बजे के करीब हम लोग केनेडियन पेसेफ़िक कम्पनी के Wharf पर पहुंचे। यूनाइटेड स्टेटज़ अमरीका का परदेश-गमन सम्बन्धीय जो दफ़्तर वैंकोवर में है वहां से हमने ज़रूरी कागज़ ले लिये थे, इस लिये स्टीमर पर चढ़ने में कोई दिक़्क़त न हुई। पन्द्रह रुपये जाने आने के फ़ी आदमी लगे। क्योंकि हम लोगों ने वापिसी टिकट लेने में किफ़ायत देखी।

स्टीमर में जहां हम बैठे थे वहां एक केनेडियन अपने एक छोटे लड़के के साथ बैठा था। बातचीत करने से मालूम हुआ कि वह भी प्रदर्शिनी देखने सिबेटल ही जा रहा है। वह लड़का कोई आठ वर्ष का होगा, मगर था बड़ा समझदार। प्रदर्शिनी की बाबत तरह २ के सवाल अपने बाप से पूछता था।

लड़का—"पिता, एलास्का-यूकन-पेसेफिक प्रदर्शिनी इतना बड़ा नाम क्यों इस मेले का रक्खा गया है ?"

बाप—"बेटा, तुम अब सो जाओ। कल हम तुमको यह सब बतलायेंगे।

लड़का—"मुझे तो अभी नींद नहीं आई। जब तक नींद नहीं आती तब तक आप मुझे ज़रूर बतलावें।"

बाप—"अच्छा सुनो। वेंकोवर के उत्तर पश्चिमी ओर एलास्का एक शीत-प्रधान देश है"—

लड़का—(बात काट कर)-"एलास्का तो मैं जानता हूं—वही, जहां बहुत सी सोने की खानें हैं।"

बाप-"हां वही, तुम अब जो कुछ मैं कहता हूं ध्यान से सुनते जाओ। एलास्का, युनाइटेड स्टेट्ज़ गवर्नमेंट के आधीन है। वहां आबादी बहुत थोड़ी है; मुल्क बहुत बड़ा है; अच्छा मुल्क है। बहुत सी खानें हैं। अमरीका गवर्नमेंट चाहती है कि वहां जाकर लोग बसें। जिन्होंने वहां अपना रुपया व्यापार व ज़मीनों में लगा रक्खा है वह भी चाहते हैं कि लोग आकर बसें। मगर लोग तभी आवें जब उनको एलास्का की बाबत मालूम हो; जब तक उनके कोई गुण-गान न करे। यह प्रदर्शिनी एलास्का की चर्चा सभ्य दुनिया में करने के लिए खोली गई है। एलास्का की चीज़ें वहां रक्खी गई है ताकि लोग देखें और वाक़फ़ियत

हासिल करें इसीलिये इस मेले के पहले एलास्का का नाम आया है।

लड़का-"एलास्का होगया, अब यूकन के विषय में बतलाइये।"

बाप-"बृटिश कोलम्बिया के दक्षिण में यूकन एक प्रान्त है। यह भी अमरीका वालों के अधीन है और कोई २,००,००० वर्गमील क्षेत्र-फल में है। योरप तथा दक्षिणी अमरीका के लोग इसके विषय में बहुत कम जानते हैं। एलास्का की तरह वहां भी आबादी बहुत कम है, पर सोने की खानें बहुत हैं। इस यूकन प्रान्त का विज्ञापन सभ्य दुनियां में देना यह इस प्रदर्शिनी के उद्देश्यों में से है।"

वह लड़का ऊंघने लग गया था, इस लिए उसके पिता ने उसको सुला दिया; मगर हम लोग चूंकि उसकी बात ध्यान से सुन रहे थे इसलिए वह हम लोगों को सम्बोधन कर कहने लगा--

"आप लोगों को यह बातचीत दिलचस्प मालूम हुई?"

मैं-ज़रूर। आप बतलाइये कि यह पेसेफ़िक का नाम इस प्रदर्शिनी के साथ क्यों जोड़ा गया है?"

केनेडियन-"पेसेफ़िक, जोड़ने से बहुत कुछ मतलब है। पहले तो यह कि पेसेफ़िक महासागर सम्बन्धी जो देश व द्वीप हैं उनकी आपस के तिजारत बढ़ाने का उपाय करना; दूसरे पेसेफ़िक तटस्थ जो अमरीकन रियासतें हैं जैसे-वाशिंगटन, केलेफ़ार्निया, आरेगन-उनकी उपज और धन धान्य का ब्यौरा पूर्वीय अमरीकन रियासतों को बतलाना ताकि वहां से भद्र लोग इधर आकर बसें; तीसरे पेसेफ़िक महासागर संबंधीय जो जातियाँ हैं उनका आपस

में मेल मिलाप बढ़ाना, इस प्रकार लम्बी चौड़ी व्याख्या इस पेसेफ़िक, शब्द की है।"

मैं–"तो क्या यह सब काम इस प्रदर्शिनी से निकल आवेंगे?"

केनेडियन–"ज़रूर। प्रदर्शिनी में दूर दूर से लोग आवगे। वे आकर ख़ुद सब चीज़ें इन प्रान्तों की अपनी आंखों से देखेंगे। जांच पड़ताल करेंगे। एक दूसरे से मिल कर अपनी तसल्ली करेंगे। आप जानते हैं कि बहुत सी गलतियां इस प्रकार दूर हो जावेंगी। इस प्रान्त के लोग दूसरे प्रान्त वालों से मिल कर बहुत सी बातों का यहीं फैसला कर लेंगे। चीन जापान से लोग आवेंगे। अमरीका वालों से थोड़ी बहुत उनकी अनबन है वह दूर हो जावेगी, क्योंकि प्रदर्शिनी द्वारा वे समझ जावेंगे कि एक को दूसरे की मित्रता से कितना लाभ है। कितनी तिजारत आपस के प्रेम-द्वारा बढ़ सकती है। यहीं आप वेंकोवर में ही देखिये अभी तीन ही महीने से किस क़दर ज़मीन की क़ीमत बढ़ने लगी है। क्यों? कारण यह है कि प्रदर्शिनी से इधर लोग घूमने आते हैं, ज़मीन देखते हैं; और अच्छी समझ कर ख़रीदते भी हैं। इस प्रदर्शिनी से अमरीका वालों को तो फ़ायदा होगा ही, केनेडा को बड़ा भारी लाभ पहुंचेगा। अमरीका के बराबर का मुल्क केनेडा है। अमरीका में आठ करोड़ की आबादी है। केनेडा में अभी साठ लाख भी नहीं। हमलोग कहते हैं कि केनेडा की आदाबी बढ़े और लोग यहां आकर बसें। इस प्रदर्शिनी से बहुत लोग इधर भी आवेंगे। केनेडा की आबादी बढ़ेगी। जङ्गल कट कर शहर बसेंगे, मुल्क की तिजारत बढ़ेगी और हम लोगों के वारे न्यारे होंगे।"

मुंशीराम ने मुझ से कहा कि एक बात मैं भी पूछ लूं। मैंने कहा, पूछिये। उस केनेडियन से उन्होंने कहा—

"क्यों जनाब, आप लोग इतनी जल्दी इस मुल्क को बसाने की फ़िक्र में क्यों हैं? इतनी जल्दी क्या पड़ी है जो बाहर से लोगों को बुला बुला कर देश आबाद करने की फ़िक्र हो रही है?"

यह प्रश्न सुन कर केनेडियन मुसकराया और बोला—

"आप लोग हिन्दुस्तान से आते हैं न, इसी लिए ऐसा सवाल है। वह भूखा मुल्क है। आबादी ज़ियादा है; मुल्क छोटा है, तिस पर खेती के साइन्टिफ़िक तरीके लोग नहीं जानते। इल्म हुनर की तरक्की उस देश में नहीं है; पूरे वैज्ञानिक तरीकों से लोग वाक़िफ़ नहीं हैं। इसके विपरीत यहां खाने को बहुत है। बहुत ही उपजाऊ भूमि है, आबादी थोड़ी है। आप सोचें कि देश की सम्पत्ति बिना मेहनत के नहीं बढ़ सकती। करोड़ों एकड़ ज़मीन जो खाली पड़ी है वह कुछ भी देश को फ़ायदा नहीं पहुंचाती। यदि लोग बसेंगे तो उनके द्वारा आमदनी की सूरतें निकलेंगी। हमलोग बड़े बड़े कारख़ाने खोल सकेंगे; हमारी चीज़ें सब दुनिया में बिकने जावेंगी; रुपया आवेगा; देश मालदार होगा, यह बड़ी जाति हो जावेगी। आज यदि हमारा सम्बन्ध इंग्लिस्तान से टूट जावे तो यूनाइटेड-स्टेटज़ केनेडा को अपने साथ मिला ले। हमलोग अमरीकनों का मुकाबिला नहीं कर सकते। एक तो हमारे पास धनाभाव से जहाज़ (जङ्गी) नहीं, दूसरे हमारी आबादी थोड़ी है, इतने सिपाही कहां से आवेंगे। इसलिए हमलोगों को अपने देश की आबादी बढ़ाकर धनी और सम्पन्न

होना चाहिए ताकि संसार में हमारी भी एक महती जाति बसे और दूसरी जातियों का हमें डर न रहे।"

सी बातें मालूम हुईं। पाठ करें, मगर रात सोना था; इसलिये ारी की, और अपने

आ जारहा था। प्रातः- पुलकित करता था। ेक पर खड़े यात्रियों थीं। पैसेफिक महा- ुआ मन्द मन्द मुस- बिरंगी इन्द्र धनुष की

नन्द लेते तथा प्राण- करते करते सियेटल अपने इष्ट मित्रों की भरी दृष्टि से ताक थे। सीढ़ी लगते ही उतर आये। बिहारी- हंसता हुआ बोला— घण्टे भर से खड़ा

मैं—(मुसकराकर)—"रही न हिन्दुस्तानियों वाली बातें। भला घण्टा भर पहिले हैरान होनेकी क्या ज़रूरत थी। स्टीमर

मुंशीराम ने मुझ से कहा कि एक बात मैं भी पूछ लूं। मैंने कहा, पूछिये। उस कैनेडियन से उन्होंने कहा—

... मुल्क को
बस... पड़ी है जो
बाह... करने की
फ़िक...

...बोला—

... लिए ऐसा
सवा... दा है; मुल्क
छोट... लोग नहीं
जान...; पूरे वैज्ञा-
निक... परीत यहां
खाने... बादी थोड़ी
है।... त के नहीं
बढ़... पड़ी है वह
कुछ... बसेंगे तो
उनके... बड़े बड़े
कार... में बिकने
जावें... बड़ी जाति
हो... ान से टूट
जावे... मिला ले।
हमलो... एक तो
हमारे... रे हमारी
आबादी थोड़ी है, इतने सिपाही कहां से आवेंगे। इसलिए हमलोगों को अपने देश की आबादी बढ़ाकर धनी और सम्पन्न

होना चाहिए ताकि संसार में हमारी भी एक महती जाति बसे और दूसरी जातियों का हमें डर न रहे।"

इस वार्तालाप से हम लोगोंको बहुत सी बातें मालूम हुईं। दिल तो चाहता था कि कुछ भी पूछ पाछ करें, मगर रात अधिक हो गई थी, उस भले आदमी को सोना था; इसलिये हमने उसको धन्यवाद देकर सोने की तैयारी की, और अपने शयनागार में जाकर सो रहे।

अग्निबोट बहुत अठखेलियां लेता हुआ जारहा था। प्रातः-काल का शीतल स्वच्छ पवन शरीर को पुलकित करता था। भगवान सूर्य्यदेव की स्वर्णमयी किरणें डेक पर खड़े यात्रियों को सियेटल नगर की ओर आह्वान करती थीं। पैसेफिक महा-सागर भी अग्निबोट के साथ खेलता हुआ मन्द मन्द मुस-कराता था और उस मुसकराहट में रंग बिरंगी इन्द्र धनुष की आभा यात्रियों का मन मोहे लेती थी।

हम लोग भी इस सुन्दर दृश्य का आनन्द लेते तथा प्राणा-यामीय श्वासों से नीरोग पवन सेवन करते करते सियेटल पहुंच गये। डेक के ऊपर बहुत से लोग अपने इष्ट मित्रों की इन्तिज़ारी में खड़े अग्निबोट की ओर प्रेम भरी दृष्टि से ताक रहे थे। हमारे मित्र बिहारीलाल भी खड़े थे। सीढ़ी लगते ही लोग नीचे उतरने शुरू हुए। हम लोग भी उतर आये। बिहारी-लाल हमें देखते ही दौड़कर आया और हंसता हुआ बोला—

"आहा कृष्ण! आप आ गये! मैं घण्टे भर से खड़ा इन्तिज़ार करता था।"

मैं—(मुसकराकर)—"रही न हिन्दुस्तानियों वाली बातें। भला घण्टा भर पहिले हैरान होनेकी क्या ज़रूरत थी। स्टीमर

का समय तुमको मालूम नहीं था तो टेलीफोन करके पूछ लेते, और ठीक समय पर आते।"

मुंशी०—(हँस कर) "बिहारीलाल का प्रेम कैसे ज़ाहिर होता।"

बिहारी०—"हां बेशक, मेरा प्रेम कैसे ज़ाहिर होता।"

मैं—"अच्छा चलो प्रेमी अब प्रदर्शिनी दिखलाओ।"

हँसी ठट्ठा करते हम तीनों जने थर्ड एवन्यू पर आये। यहीं से प्रदर्शिनी की गाड़ी मिलती थी। रास्ते में जगह जगह पर हमने ये इश्तिहार मोटे अक्षरों में लिखे देखे।

Seattle Day

Sep 6

I will be there

200,000 Strong

मैंने बिहारीलाल से पूछा कि इससे क्या मतलब है। बिहारीलाल ने बतलाना शुरू किया—

"जब से प्रदर्शिनी खुली है तब से तरह तरह के दिन प्रदर्शिनी वाले रखते हैं। आप जानते हैं कि पहिली जूनसे सोलह अक्टूबर तक साढ़े चार महीने प्रदर्शिनी में रहना है। साढ़े चार महीने कैसे गुज़रें? उनको गुज़ारने का ऐसा ढंग होना चाहिये कि सब प्रकार के लोग आकर्षित हों और उनका मन न ऊबे। इसी लिये ऐसे ऐसे दिन नियत किये गये हैं जैसे—

(Grocer's Day) बनियों का दिन। उस रोज़ सारे शहर के बनिये आवेंगे। (Japanese Day) जापानियों का दिन; उस रोज़ पेसेफ़िक के किनारे जो रियासतें हैं, वहां बसने वाले सभी जापानी आवेंगे। (Farmer's Day) किसानों का दिन; सारे किसान उस रोज इकट्ठे होंगे और प्रदर्शिनी का आनन्द लेंगे। आज सियेटलवालों का दिन है। यह विज्ञापन प्रत्येक सियेटल निवासी को कहता है कि मेले में आज दो लाख से कम आदमी किसी सूरत में भी न हों। सभी को जाना चाहिये; इसी में सियेटल की नाक रहती है। इसीलिये देखो, पाँच पाँच मिनट बाद बिजली की गाड़ियां खचाखच भरी हुई प्रदर्शिनी को भाग रही हैं।"

मैं—(खिले चेहरे से) "शाबाश! अब तो तुम होशियार होते जाते हो बिहारीलाल!"

बिहारी०—(हंसकर) "यूनीवर्सिटी में पढ़कर भी होशियार न हूंगा तो कैसे हूंगा।"

मुंशी०—(बिहारीलाल की पीठ ठोक कर) "खूब! पर सावधान रहना, अभी बहुत से सवाल जवाब होने हैं, प्रदर्शिनी आ लेने दो।"

बिहारी०—"मैं तैयार हूं।"

इस प्रकार बातें करते हुए गाड़ी में चढ़ गये।

'प्रदर्शिनी, प्रदर्शिनी' आख़िर हम प्रदर्शिनीके सामने पहुंच गये। दो बड़े बड़े स्तूपों के दरम्यान रंग-बिरंगी झंडियां सब से पहिले देखने में आईं। ये अमरीका, जापान, इंगलिस्तान आदि स्वतन्त्र देशों के क़ौमी झण्डे थे। उन झण्डे के नीचे मोटे अक्षरों में (Seattle Day) 'सियेटल का दिन' लहरा रहा था।

अर्द्धचन्द्राकार तीन दरवाज़ों द्वारा स्त्री-पुरुष और बाल-बच्चे अन्दर जा रहे थे। हम लोगों ने भी पहिले दरवाज़ों के बाहर जो तीन कोठियां थीं, वहाँ से पचास पचास सेण्ट * का एक एक सिक्का ले लिया और अन्दर घुस गये।

घुसते ही मेरी दृष्टि एक विशाल मूर्ति पर पड़ी। यह जार्ज वाशिंगटन का दीर्घकाय (bronze statue) बुत था। (Father of the Country) 'देश का पिता' यह शब्द मेरे कान में पड़े, जो एक माता अपने बच्चे को वह मूर्ति दिखला-कर कह रही थी। (Father of the Country) यह शब्द मैंने बार बार दोहराये। पूज्य भरी दृष्टि से मैं उस महान् आत्मा की ओर देखता रहा। "सच मुच इसी वीर की हिम्मत से अमरीका स्वतन्त्र हो गया। इसी देश-भक्त ने अपना सर्वस्व अपने देश के अर्पण कर इसको गुलामी से आज़ाद किया था। कैसे कैसे कष्ट इसने सहन किये थे। देश के लिये किस किस की गालियाँ इसने नहीं सहीं। किस हिम्मत और धैर्य्य से इसने अपने देश भाइयों को अति दुःख के समय में ढाढ़स दिया था, और उनको निराश होने से बचाया था। निस्सन्देह, ऐ जार्ज वाशिंगटन ! तुम इस देशके पिता हो और अमरीकन बच्चों के आदर्श हो। नहीं, नहीं, सभी दुःखित देशों के बच्चों के आदर्श हो। मैं भी निष्काम सेवा की शिक्षा आपसे ग्रहण कर अपनी जननी का दुःख दूर करूं" यह कह मैंने मन ही मन में उस वीर को नमस्कार किया और आगे बढ़ा।

*हर एक दर्शक अपना अपना सिक्का लेकर द्वार पर जाता और वहां शीशे के बक्स में सिक्का फेंक देता था। तब द्वारपाल चक्र घुमा उसे अन्दर जाने की आज्ञा करता था। लेखक

सब से पहले हम लोग पे स्ट्रीट * की ओर गये क्योंकि बहुत बड़े हुल्लड़ में इमारतों के देखने का मज़ा नहीं आता। वहां सब चीज़ें आराम से देखने वाली होती हैं। दर्शक लोग पहले पहल इमारतों पर ही टूटेंगे, इसलिए हम लोग पे स्ट्रीट की ओर चले।

कैसा मनोहर दृश्य था ? छोटीछोटी क्यारियों में बिजली की रोशनीवाले (bulbs) बड़ी तरतीब से लगाये गये थे। यद्यपि इस समय दिन था, बिजली की रोशनी नहीं थी, पर उनकी सजावट लोभायमान थी। छोटे छोटे वृक्षों में फलों की भांति बिजली के दीपक लटक रहे थे। 'रात को यह दीप क्याही ग़ज़ब ढायेंगे' यह मैंने मुंशीराम से कहा। मुन्शीराम बेचारे हैरान थे। उन्होंने कभी कोई प्रदर्शिनी नहीं देखी थी।

ख़ैर, हमलोग पेस्ट्रीट में पहुंचे। लोगों का धन हरने को यहां भांति भांति के तमाशे रचे हुए थे। एक बहुत बड़ा चक्र, जिसमें पंगूडे लटकते थे, दर्शकों को बहुत ऊंचा ले जाता और प्रदर्शिनी का नज़ारा दिखलाता था। इसके दस आने देने पड़ते थे। जापानियों और चीनियों का बाज़ार देखने में आया। वहां चीन, जापान से भांति भांति की कारीगरी की चीज़ें बिक्री के लिये मौजूद थीं। अन्दर ही अपनी अपनी रंग-शालायें भी बनाई हुई थीं, जहां खेल होते थे।

अमरीकन लोगों ने धन कमाने के हेतु तरह तरह के स्वांग रचे हुए थे। एक जगह (Scenic Alaska) एलास्का के दृश्य नामी इमारत के अन्दर पाँच चार घेरेदार नहरें थीं, जिनका पानी एक चक्र के ज़ोर से बह रहा था एक छोटी सी नौका

* Pay Street पेस्ट्रीट उस गली का नाम था जहां हर तरह के खेल तमाशे थे। लेखक

में पांच चार दर्शक बैठ जाते थे। किश्ती उन घेरों में से गुज़-रती थी। नहर के इर्द गिर्द दीवारों पर मिट्टी से एलास्का के हिम-पर्वती दृश्य बनाये हुए थे। बस इसी के पाँच आने ले लेते थे। एक जगह रूस, एलास्का, न्यूज़ीलेण्ड आदि के असकीमो इकट्ठे किये हुए थे ; उनकी झोपड़ियां उनके रहन-सहन का ढंग दिखलाती थीं। दूसरी जगह फिलिपाइन द्वीप से इग्रेटो लाकर रक्खे हुए थे। इग्रोटो उन द्वीपों की जङ्गली जाति का नाम है जो नंगे रहते हैं और कुत्ते का मांस खाते हैं। इस प्रकार यह सब तमाशे के तौर पर वहां थे। निस्सन्देह यहां के लोगों को यह बहुत अजीब मालूम होते थे, पर हमलोगों को इन सब जंगली जातियों का नाचना-कूदना अच्छा न लगा।

पे स्ट्रीट में यों तो बहुत सी जगह लोग अपना पैसा ख़र्च कर हँसते खेलते थे, पर हमलोगों ने डेढ़ रुपया देकर एक जगह से ही सारा आनन्द लूट लिया। वह मानीटर और मेरीमेक का जल-युद्ध था। इस जल-युद्ध का ब्योरा इस प्रकार है—

१८६० में जब यूनाइटेड् स्टेट्ज़ की उत्तरीय और दक्षिणीय रियासतों में हब्शियों की गुलामी के झगड़े के कारण घोर संग्राम-प्रारम्भ हुआ तब उत्तरीय रियासतों ने दक्षिणीय रियासतों का जल-मार्ग बन्द कर दिया ताकि उनको योरप से कोई सहायता न पहुंच सके। उस युद्ध में दक्षिणीय रियासतों की गवर्नमेंट की तरफ़ से मेरीमेक नाम का एक लोहे का जंगी जहाज़ बनाया गया था। उस जहाज़ ने एक ही दिन के युद्ध में शत्रुओं के अच्छे २ जहाज़ नष्ट कर दिये। करने ही थे, क्योंकि मेरीमेक अपने ढंग का लोहे का पहिला जहाज़

था। अब तब लकड़ियों के ही जहाज़ों से युद्ध होता था। इस मेरीमेक के बनने की ख़बर उत्तरवालों को भी लग गई थी। उन्होंने मानीटर बनाना आरम्भ कर दिया था, पर वह ठीक समय पर न पहुंच सका। दूसरे दिन जब मेरीमेक फिर युद्ध करने आया तब अपने मुक़ाबिले में एक छोटे से जंगी जहाज़ को डटा देखा। यह मानीटर था। अब खूब घमासान युद्ध हुआ जिसमें छोटे मानीटर ने अपने शत्रु के खूब दांत खट्टे किये।

बस, इसी युद्ध की नक़ल दिखलाई गई थी। नकल क्यों थी, असल थी वैसा ही समुद्र, उसमें वैसे ही चलते हुए जहाज़ फिर वैसे वैसे ही तोपों का चलना, जहाज़ों में आग लगनी, उनका डूब जाना, मेरीमेक का पहले दिन के युद्ध से विजयी लौटना। रात को वैसे ही अन्धेरी, दिन चढ़ना, मानीटर का आना, उसकी मेरीमेक से मुट-भेड़, दनादन तोपों का छूटना, मानीटर की विजय! यह सब इसी तरह दिखलाया गया। न जाने कैसे किया? यह मेरी समझ में नहीं आया। चलती फिरती तस्वीरों (Moving Pictures) के ढंग पर ही इसकी रचना थी।

हम तीनों जने इस जल-युद्ध को देख अवाक रह गये। यह दृश्य सारी उम्र नहीं भूलेगा। डेढ़ रुपया देकर दिल को तसल्ली हो गई और जाना कि हमने आशा से बहुत अधिक पाया।

सात सेप्टेम्बर को प्रातःकाल के कार्य्यों से निश्चिन्त हो खा-पी कर दस बजे के क़रीब मैं और मुन्शीराम दोनों प्रद-र्शिनी देखने चले। बिहारीलाल किसी दूसरे काम के सबब

हमारे साथ न आ सके थे और हमलोगों को उनकी कुछ ऐसी आवश्यकता भी न थी।

आज सब बड़ी बड़ी इमारतों के देखने का विचार था। निश्चय किया कि आरम्भ से एक एक इमारत देखें और आज का सारा दिन तथा दस बजे रात तक प्रदर्शिनी का मज़ा लूटें जब चित्त भर जावे तब बाहर निकलें।

मुख्य द्वार पर घुसते ही दाहिनी ओर को जो रास्ता जाता था वह तो 'पे स्ट्रीट' की गली। ज़रा आगे दाहिने और बायें दो विशाल भवन थे—एक आडिटोरियम दूसरा फ़ाइन आर्टज़ विल्डिंग। इन दो भवनों के बीच 'युगेतप्लाज़ा' नाम का एक रम्य स्थान था जहां हरी हरी घास की दूब आंखों को आनन्दित करती थी। इसी के बीच में महात्मा वाशिंगटन का दीर्घकाय बुत खड़ा था। हम लोग पहले 'फाइन आर्टज़ भवन' के अन्दर गये।

यह भवन उन सात भवनों में से एक है जो प्रदर्शिनी के बाद वाशिंगटन-स्टेट-यूनिवर्सिटी को मिल जावेगा और जहां यूनिवर्सिटी अपना केमिस्टरी हाल सजावेगी इस इमारत पर स्टेट गवर्नमेंट का छः लाख रुपया ख़र्च हुआ है।

इस भवन के अन्दर फ्रांस, इटली जरमनी, इँगलैंड आदि देशों के निपुण चित्रकारों के तैल चित्र रक्खे हुए थे। यह वह स्थान था जहां महीनों ख़र्च करने से आनन्द मिल सकता था। हम लोग एक ही घण्टे में क्या देख सकते थे। एक से एक बढ़ कर चित्र—पर्वतों और वनों के नज़ारे, नदी और समुद्रों के किनारे, भेड़ों और गायों के चरवाहे—सब जीते जागते दर्शकों का मन हरते थे। कहीं सुन्दर रमणियां अपनी अलौकिक प्राकृतिक छटा में चित्रकार के गुणों को उज्वल करती

थीं; कहीं शूर-वीर रण भट-बीरों को वीर-रस पान कराते थे; कहीं प्रीतम अपनी प्रियादत्त प्रेम-रस चख रहे थे। सभी प्रकार के भाव, सभी प्रकार के जीवन वहां विद्यमान थे। जो जिसका अधिक प्यारा था, जिसको जो दृश्य अधिक भाता थ वह उसी के सामने टकटकी लगाये बुत बना हुआ खड़ा था और दिल में कहता था–"काश कि यह चित्र मुझको मिल जाय।"

फाइन आर्टज़ भवन से निकल हम लोग 'आडिटोरियम' में गये। यह भवन भी पक्की ईंटों का बनाया गया है और इस पर नौ लाख रुपया लागत आई है। यह भी प्रदर्शिनी के बाद वाशिंगटन यूनिवर्सिटी की मिलकियत हो जावेगी। इसमें ढाई हज़ार मनुष्यों के बैठने का स्थान है। दूसरी पक्की इमारतों की तरह यह भी 'अग्नि-संरक्षक' बनाई गई है।

आडिटोरियम से निकल कर हमने मुख्य फाटक वाली सड़क को फिर पकड़ा। 'युगेट-प्लाज़ा' से आगे उसी सड़क में 'ओलिम्पिक-प्लेस' की क्यारी थी जिसके दाहिनी ओर पलास्का भवन और बाईं ओर 'यूनाइटेड स्टेट्ज़ गवर्नमेंट भवन' थे। गवर्नमेंट भवन की चर्चा दर्शकों में बहुत थी इस लिए हम पहले इसी के अन्दर घुसे।

यह भवन गुम्बद की शकल का था जिसमें गेलरी के ढँग की छतें थीं। पहली छत पर दो भाग थे। एक ओर अमरीकन लोगों की शिक्षा के लिए गवर्नमेंट ने 'लाइट हौस' का घूमना तथा जल-भाग में शत्रुओं से रक्षा के उपाय दिखाये थे। उधर ही अमरीका के बड़े बड़े विख्यात देशभक्तों के चित्र लटकते दिखाई दिये। दूसरी ओर सिक्के बनते थे और छपते थे। इधर अमरीका-देश के जङ्गलों की बहुत बड़ी बड़ी तस-

वीरें थीं और गवर्नमेंट के जङ्गल विभाग की कारगुज़ारी अच्छी तरह दिखलाई गई थी। एक तरफ़ पुराने ढर्रे के जहाज़ बनाकर रक्खे हुए थे और उनका मुक़ाबिला आधुनिक जहाज़ों से किया गया था।

दूसरी छत पर 'युद्ध-विभाग' का सामान था। १७८५ से लेकर आज तक अमरीकन गवर्नमेंट के इस महकमे में जो कुछ देखने योग्य है वह सब सामग्री यहां मौजूद थी। पिछली शताब्दी की तोपें, सिपाहियों की पोशाकें, लड़ाई के जहाज़ यह सब दर्शकों के शिक्षार्थ बनाकर रक्खे गये थे और उनके पास आधुनिक तरक्की के नमूने पूर्ण रूप से दिखलाये हुए थे। भयङ्कर ड्रेडनाट भी यहां देखने में आया, जो जल पर तैर रहा था। यह सब कुछ अमरीकन गवर्नमेण्ट ने अपनी प्रजा की आंखें खोलने के लिये किया था। छोटे छोटे बच्चे अपनी माताओं से भांति भांति के प्रश्न इन दुर्दमनीय जल-यानों को देख कर करते थे, वे भी हंसती हुई अपनी सन्तान को अपनी जाति का गौरव विदित कराती थीं। पर मेरे मुंह से यही निकलता था—"इन रुद्ररूप मशीनों का अन्त कहां होगा ?"

तीसरी छत पर अमरीकन गवर्नमेंट का पोस्ट-आफ़िस-विभाग, न्यायालय-सम्बन्धी सामान तथा शिक्षा-विभाग की सामग्री थी। इनके अतिरिक्त मन को लुभानेवाला एक और विभाग था उसको 'मत्स्य-विभाग' कहना अनुचित न होगा यहां हर प्रकार की मछलियां देखने में आईं। दीवार से लगे हुए स्वच्छ जलों के छोटे छोटे कुण्ड थे जिन पर मोटा शीशा लगा हुआ था। मशीनों के द्वारा कुण्डों में पानी आता जाता थ। इन्हीं कुण्डों में रंग-बिरंगी मछलियां तैर रही थीं। ऐसी

कारीगरी से यह कुण्ड बनाये गये थे कि ठीक समुद्र या दरिया की तह का बोध हो। ऊपर से रोशनी पड़ती थी और दर्शक लोग मछलियों का एक एक अंग अच्छी तरह देख सकते थे। मैं तो यह सब देख कर बड़ा ही खुश हुआ। जो जन्तु हम किसी सूरत से भी अच्छी तरह न देख सकते थे वे आज आसानी से भले प्रकार देखने में आये और फिर इस उत्तम तरीक़े में।

यहां से निकल हम लोग 'प्लास्का भवन' में पहुंचे। प्लास्का की स्वर्ण की खानें प्रसिद्ध हैं। वहां की बड़ी बड़ी सुवर्ण की ईंटें देखीं; खानों से निकले हुए अन्य धातु-मिश्रित सोने के बड़े बड़े टुकड़े रक्खे हुए दिखाई दिये। पास ही एक मशीन से मिश्रित सोने को अलग किया जाता था। दूसरी तरफ़ प्लास्का के जानवरों की क़ीमती पोस्तीनें लटक रही थीं जिनको पहनना बीसवीं शताब्दी के सभ्य मनुष्य गौरव का कारण समझते हैं। एक ओर 'प्लास्का दृश्य' नाम की कोठरी थी। हम लोग उसके अन्दर गये।

देखते क्या हैं कि चांद चढ़ा हुआ है। हिमावृत पर्वत-श्रेणी उस चांदनी में अवर्णनीय शोभा दे रही है। सामने घाटियां हैं, जंगल है। अरे यह क्या! धीरे धीरे चन्द्र अस्ताचल पर्वत पर पहुंच रहे हैं। यह लो, वे अस्त हो गये! पौ फटने लगी। धीरे धीरे प्रकाश होता जाता है और घाटियों में श्वेत हिम चमकने लगी है। 'क्या यह जादू है या तिलिस्म?' मैं यह विचार ही रहा था कि एक द्वारपाल ने हम लोगों को दूसरे द्वारा से बाहर कर दिया।

घड़ी में देखा कि तीन बज गये हैं। 'मुन्शीराम, आओ भाई ज़रा सुस्ता लें यह कह मैं मुंशीराम के साथ एक

बेञ्च पर बैठ गया। जहां हम बैठे थे हमारे पीछे 'कारन्थियन स्तूप' ठीक गवर्नमेंट भवन के सामने विराजमान था। इसी सीध में 'Cascades जलपतन' Arctic Circle उत्तरीय वृत्त थे। तीन स्थानों पर थोड़ी थोड़ी उँचाई से पानी एक दूसरे जलकुण्ड में गिरता हुआ उत्तरीय वृत्त में जाता था और वहां मध्य से एक बड़ा फव्वारा बहुत ऊँचा उठ कर जल की वर्षा करता था। आधा घण्टा हम लोग यह मनोहर दृश्य देखते रहे। फिर 'यूरपियन बिल्डिंग' देखने चले।

'जल-पतन' और 'उत्तरीयवृत्त' के दोनों ओर चार वृहत् भवन थे। दहिनी ओर 'यूरपीन' एग्रीकलचरल बिल्डिंग, और बाईं ओर 'ओरियन्टल' 'मेन्युफेक्चरिंग बिल्डिंग' थीं।

यूरोपियन भवन में जर्मनी, फ्रांस, आस्ट्रिया, इटली, टर्की आदि देशों की कारीगरी के नमूने मौजूद थे। ख़रीद और फ़रोख़ का काम भा होता था। जर्मनी के बने हुए खिलौने बहुत चाह से लड़के लोग ख़रीदते थे। बहुत सरसरी तौर से इस भवन में हम घूम गये, फिर 'एग्रकलचरल' भवन में दाख़िल हुए।

यहां पर हर प्रकार के फल देखने में आये। सेब, नाशपाती, अंगूर, संतरा, नारंगी, आड़ू, खरबूज़े, तरबूज़े आदि जो जो फल इधर होते हैं सभी जिस प्रान्त में जैसा फल होता है वैसा उस प्रान्त का प्रतिनिधि मौजूद था। इससे दर्शकों को यह पता लगता था कि कहां कैसा फल उत्पन्न होता है। भूमि के फलदा होने, न होने का बोध होता था। इसी प्रकार अनाजों की संस्था थी। वैज्ञानिक ढंग से अनाज में कैसी तरक्की हो सकती है इसके उदाहरण मौजूद थे।

'कितनी शिक्षा इन सब चीज़ों को देखकर होती है ?" आश्चर्य्य से मुन्शीराम ने मुझ से कहा—

"बेशक, क्यों नहीं। यह सब बातें किसानों के लिए कितनी मुफ़ीद हैं। यहां के किसानों ने इस बिल्डिङ्ग में आकर कितना लाभ उठाया होगा।"

"हा ! एक हमारा भी देश जहां अन्धकार में पड़े हुए लोग ज़िन्दिगी गुज़ार रहे हैं। वही पुराने हल बैल, उसी से जो कुछ थोड़ा बहुत पैदा हो उसी पर सन्तोष कर भूखे रहते हुए दिन काट रहे हैं। बेचारे समझते हैं कि उनके भाग्य में ऐसा बदा है; भूमि कम उपज देती है। पर यह ख़बर नहीं कि अविद्या के गढ़े में पड़ने से यह दुर्गति है। वही भूमि सौगुना अधिक उपजाऊ हो सकती है यदि उसको वैज्ञानिक ढंग से काम में लाया जावे।"

"पर सिखावे कौन ?"

जैसे यहां गवर्नमेंट करोड़ों रुपये ख़र्च कर देश में किसानों को सिखाती है इसी तरह हमारी भी गवर्नमेंट को करना चाहिए।"

मैं मुसकुरा दिया। मुन्शीराम समझ गये कि इस मुसकराहट का अभिप्राय क्या है। ठण्डी सांस भरते हुए मेरे साथ भवन से बाहर आ गये।

ओरियन्टल भवन में हमको बहुत देर नहीं लगी। वहां अधिकतर इटली की बनी हुई मूर्तियां थीं। यूनानी हुनर अभी तक इटली में ही प्रधान है; वहीं के कारीगर संगतराश योरप और अमरीका की ऐसी मांग पूरी करते हैं। बेशक उनका काम बहुत ही उच्चकोटि का है। दर्शक देखकर उनकी प्रशंसा किये बिना नहीं रहता।

पर हम तो 'ओरियण्टल' नाम देख कर चौंके थे और समझे थे कि शायद हम अपनी पुण्य भूमि की कोई वस्तु स्पर्श कर अपने आपको धन्य मानेंगे, पर निराशा देवी ने विकट हास्य कर निरादर से हमको बाहर निकाल दिया।

अब मेन्युफेक्चरिंग भवन की बारी आई। यूनाइटेड स्टेट्ज़ के अन्दर जो जो वस्तु कलों कारख़ानों द्वारा बनती है उनकी कम्पनियों ने अपनी अपनी ओर से प्रतिनिधि यहां भेजे हुए थे, जो जो अपनी अपनी मेशीनें चला कर पब्लिक को दिखलाते थे कि इस प्रकार उनके यहां चीज़ें तैयार होती हैं। यह एक प्रकार से उन कोठीवालों का इश्तिहार था। लाखों आदमी, जो प्रदर्शिनी देखने आये, उनको उन कोठीवालों का पता मालूम होगया। एक जगह कलें रेशम बुन रही थीं, वहां यदि दर्शक रेशमी रूमाल या और कुछ रेशमी कपड़ा ख़रीदना चाहता तो उस पर प्रदर्शिनी तथा ग्राहक का नाम बुन दिया जाता था। बड़े बड़े आरे तथा लकड़ी काटने के अस्त्र, हल, गेहूं काटने की मशीनें इत्यादि बहुत कुछ धरा था। एक दुकान पर भांति भांति के मुरब्बे, अचार रक्खे थे, और बेचनेवाली कम्पनी अपने विज्ञापन बाँटती थी। न्यूयार्क, न्यू इंगलैंड की कपड़ा बेचनेवाली कम्पनियों की बड़ी बड़ी दूकानों के चित्र दर्शकों को दिखलाये जाते थे और उनसे यह आशा की जाती थी कि वे उक्त कम्पनियों का माल ख़रीदें।

संध्या हो गई। बिजली की रोशनी से प्रदर्शिनी के भवन जगमग जगमग करने लगे। गवर्नमेंट भवन का गुम्बज़ कैसा प्रकाशमान था। इधर उधर ऊपर नीचे सुन्दर क़तारों में बिजली देदीप्यमान थी। इन वृक्षों को देखो, विद्युद्दीप कैसी शोभा देरहे हैं। वह देखो, जलपतनके नीचे विद्युत-प्रकाश कैसी

छटा दिखाता है। सचमुच, प्रदर्शिनी की महिमा रात को ही देखने योग्य है। सड़कों के किनारे छोटे वृक्षकुओं में दिन को जो विद्युद्दीप मुक्ताफल सम बोध होते थे, अब तनिक उनकी छबि निहारो।

विद्युद्देवी का अकथनीय प्रभाव देखते हुए हम लोग 'रेनीयर विस्टा' की ओर बढ़े चले गये। अभी बहुत सी इमारतें देखनी बाक़ी थीं। केलेफोरनिया, वाशिंगटन, ओरेगन भवन सब पीछे छोड़ आये थे और बहुत छोटी मोटी इमारतें देखने को थीं, पर दिल में विचार किया कि इतना बहुत है, हमने भर पाया।

'रेनियर विस्टा' की ओर घूमते घामते हम लोग वहां पहुंचे जहां "Captive Ballon कैप्टी बैलून" उड़ रहा था। बहुत लोग यहां पर खड़े थे, हम भी खड़े हो गए। एक एक डालर इस गुब्बारे पर चढ़ाने का देना पड़ता था और दो पुरुष एक बार बैठ सकते थे। गुब्बारा पृथ्वी से सात सौ गज़ के क़रीब ऊंचा जाता था और बहुत थोड़ी देर ठहर कर नीचे उतर आता था। यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि यह गुब्बारा मज़बूत तारों से बंधा हुआ था।

एक एक डालर देकर हम दोनों जने भी उसी गुब्बारे के पंगूरे में बैठ गए। झट से गुब्बारा ऊपर उठा। मैंने मज़बूती से पंगूरे का रस्सा पकड़ लिया। मुन्शीराम ने तो आंखें बन्द कर अपना मुंह पंगूरे में छिपाया और कहने लगे—"मैं मरा, मैं मरा।" मैंने कहा—"डरो मत मुन्शीराम ? गिरते नहीं।" देखते देखते हम लोग आसमान में टंग गये। मैं कभी आंखें बन्द करता, कभी खोलता था। नीचे देखने को साहस न होता था। यह तो देखा, क्या देखा ? कुछ नहीं; मन का भ्रम

रहा। हां, रोशनी; इधर उधर प्रकाश, चला, नीचे, नीचे, नीचे। मैंने भी कलेजा थामा और मुंशीराम को ज़ोर से चिपट गया।

हाथ पकड़ कर गुब्बारेवाले ने हम लोगों को पंगूरे से निकाला, और एक ओर बिठला दिया। मैं अभी तक मानों स्वप्नावस्था में था। मुन्शीराम पहले चैतन्य हुए और मुझे पकड़ कर बोले—

"चलो राधाकृष्ण, अब घर चलें।"

कारनेगी का शिल्प-विद्यालय ।

It is really astonishing how many of the world's foremost men have begun as manual labourers. The greatest of all, Shakespeare, was a woolcarder; Burns, a ploughman; Columbus, a sailor; Hannibal, a blacksmith; Lincoln, a railsplitter; Grant, a tanner. I know of no better-foundation which to ascend than manual labour in youth.

—*Andrew Carnegie.*

भारतवर्ष के शिक्षित समाज को शिल्प-विद्यालय की आवश्यकता और उसकी महिमा का अनुभव होने लगा है, यह बड़े सौभाग्य की बात है। देश के युवकों आत्मावलंबन का सबक़ सिखाने का एक मात्र यही उपाय है। हिन्दू-जाति में जो ऊंच नीच का भेद-भाव है—हाथ से काम करनेवालों पर जो घृणा है—उसको दूर करने का यही सहल तरीक़ा है। देश की भावी सन्तति को रोज़गार में लगाने उनको जाति के हितसाधन के योग्य बनाने का सबसे अच्छा ढङ्ग यही है कि उनको कलाकौशल और यंत्र-विद्या की शिक्षा दी जाय। भारत धनधान्य पूरित देश है। यहाँ किसी वस्तुकी कमी नहीं सभी आनन्द पूर्वक रह सकते हैं—यदि हम अपनी सन्तान को आधुनिक जीवनयुद्ध के शस्त्रों से सुसज्जित करें।

हमें प्राकृतिक दुनिया से मुक़ाबिला करना है। सस्ती चीजें बनाकर उन्हें भारत में बेचने वाले योरप तथा अमरीका से हमारा सामना है। इसमें जीत उसी की होगी। जो अपने प्रतिद्वंदियों के समान बुद्धिमान् और कार्य्यपटु होगा। सुस्त, क़ाहिल, अशिक्षित, साम, दाम, दण्ड और भेद को न जानने वाली जाति से यह काम न होगा। जिनका हमें मुक़ाबिला करना है उनके गुण-दोषों की पहचान करनी चाहिये; उनकी सी कार्य्यपटुता सीखनी चाहिये; उनके सदृश दलबद्ध होना चाहिये; उनकी भांति अपने यहां शिल्प-विद्यालय खोलने चाहिएँ और सब से बढ़ कर हाथ से काम करने वालों का आदर करना चाहिए—क्योंकि यही लोग देश की दौलत बढ़ाते हैं। इन्हीं के सिर पर स्वजाति का भार है। यही सब को टुकड़ा देते हैं। ऐसा करने से देश में आलसियों और बड़ी तोंदवालोंकी क़दर कम हो जायगी, और जो लोग दूसरी की कमाई पर चैन उड़ाते हैं उनका ह्रास हो जायगा।

आइए, पाठक! हम आपको अमेरिका के प्रसिद्ध कारनेगी-शिल्प-विद्यालय का वृत्तान्त सुनावें। हमने उसे अपनी आँखों देखा है। इस वृत्तान्त से अमेरिका की उन्नति के कारण अल्पांश में आपकी समझ में आजायंगे।

अमेरिका की संयुक्त रियासतों की पेंसलवेनिया रियासत में पिट्सबर्ग नामी एक बड़ा भारी शहर है। यहीं पर जगद्-विख्यात धनिक कारनेगी साहब का स्थापित किया हुआ शिल्प-विद्यालय देश के संख्यातीत युवकों को कलाकौशल और यंत्र-विद्या आदि की शिक्षा देता है। कारनेगी के विशाल पुतली घर भी यहीं पर हैं। उनमें लोहे का काम होता है। यही इस 'लोहा-नरेश' (Steel King) की राजधानी। अपनी इस

राजधानी में, जहां श्रीमान् कारनेगी को करोड़ों रुपये की आमदनी है, ऐसे विद्यालय का खोलना बहुत ही उचित हुआ। इस विद्या के लिए आपने सत्तर लाख डालर दे दिये हैं। एक डालर तीन रुपये दो आने का होता है। इस हिसाब से आपने दो करोड़ दस लाख से अधिक रुपये खर्च करके यह शिल्प विद्यालय खोला है।

क्या भारत का कोई सपूत ऐसा विद्यालय खोलकर अपनी भारतमाता की शोभा बढ़ावेगा।

कारनेगी-शिल्प-विद्यालय तीन भागों में विभक्त है— ललित-कला, अजायब घर और कलाभवन। छः एकड़ भूमि में इनकी इमारतें हैं। विद्यार्थियों की ज़रूरतों को पूरा करने का सब सामान है।

इमारतों का हाल सुनिये—

पहले कारनेगी-पुस्तकालय को लीजिये। पुस्तकालय क्या है शाही महल है। इस इमारत को देख कर हम दङ्ग रह गये। व्यसन हो तो ऐसा हो। इस संगमरमर के विशाल भवन में विद्याप्रेमियों के लिये चुन चुन कर पुस्तकें रक्खी गई हैं, जिनकी संख्या-तीन लाख पचास हज़ार के क़रीब है। इनमें से ३५०० पुस्तकें वैज्ञानिक और यंत्र-विद्या-सम्बन्धी हैं, जो एक से एक बढ़ कर हैं। तीन सौ के क़रीब पत्रिकायें वहां आती हैं जिनको पढ़ कर विद्याव्यसनी जन अलौकिक आनन्द प्राप्त करते हैं। इतने ही अख़बार और साप्ताहिक पत्र भी इस पुस्तकालय की शोभा बढ़ाते हैं। पुस्तकालय का यह विभाग विद्वान् वैज्ञानिक लोगों की संरक्षा में है जिनसे हर प्रकार की सूचनायें मुफ़्त मिलती हैं।

और खूबी देखिए। इस पुस्तकालय की एक सौ बीस शाखायें पिट्सबर्ग नगर में हैं। नगर के हाई स्कूलों के छात्र, कन्याओं के समाज, तथा मज़दूरों की सोसाइटियाँ इन शाखाओं के द्वारा इस बृहत् पुस्तकालय से पूरा पूरा लाभ उठा सकती हैं। जो किताब जिसको चाहिए वह अपने शाखा-विभाग के पुस्तकाध्यक्ष से कह देता है। वह उसकी ख़बर बड़े पुस्तकालय में कर देता है। दूसरे दिन किताब वहां पहुँच जाती है। यह सब मुफ़्त, मुफ़्त, मुफ़्त!

देखा आपने! ऐसे तरीक़ों से विद्या-प्रचार हुआ करता है। बातों से काम नहीं निकला करते। हम लोग लाखों रुपया काशी आदि क्षेत्रों में व्यर्थ लुटा रहे हैं—निखट्टुओं की संख्या बढ़ा रहे हैं पर काशी और गया में पुस्तकालय कितने खोले हैं? शिक्षित समाज से इतना नहीं हो सकता कि इस 'दान' का उचित प्रबन्ध करे और इससे विद्यालय, पुस्तकालय आदि खोलकर देश के बच्चों को विद्यादान दे।

अब अजायबघर की बात सुनिए। यह अजायबघर अमेरिका के चार बड़े बड़े अजायबघरों में से एक है। इसमें पन्द्रह लाख छोटी बड़ी दर्शनीय चीज़ें रक्खी हैं। यह संग्रह बहुत सा धन ख़र्च करके बड़े परिश्रम से किया गया है। इसमें खनिज, जड़ी बूटी और कीट-विद्या सम्बन्धी नमूने बड़े काम के हैं। पुरातत्व और नर-वंश-विद्या सम्बन्धी संग्रह भी अपने ढङ्ग का इसमें एक ही है।

ललित-कला वाला विभाग और भी बढ़िया है। धनिक कारनेगी ने चुन चुन कर कुशल चित्रकारों के तैल चित्र यहां रक्खे हैं। अमेरिका तथा योरप के चित्रकारों का सर्वोत्तम कौशल यहां देखने में आता है। जो विद्यार्थी इस कला में

प्रवीण होने के लिए विद्यालय में भरती होते हैं वे घण्टों इन चित्रों के सामने बैठ कर अभ्यास करते हैं।

इस विभाग की ओर से सार्वभौमिक (भारत को छोड़-कर!) प्रदर्शिनियां होती हैं जिनमें सब से अधिक कुशल चित्रकार को पुरस्कार दिया जाता है। इससे चित्रकारों का उत्साह बढ़ता है। वे दिन दूनी रात चौगुनी मेहनत करके अपने अभ्यास को बढ़ाते हैं।

साथ ही संग-तराशी और भवननिर्माण विषयक कमरे भी इसमें हैं, जहां इन कलाओं के उस्तादों की कारीगरी के नमूने रक्खे हुए हैं। विद्यार्थी लोग यहां भी आकर अभ्यास करते हैं। बड़ी बड़ी इमारतों के नमूने यहां हैं। उनको देखकर विद्यार्थी वैसाही, या उससे बढ़ कर, काम बनाने का उद्योग करते हैं।

इसके अतिरिक्त इस विभाग में सङ्गीत का भी प्रबन्ध है। एक बड़ा कमरा इसके लिए है। शनि और रविवार को यहां गायनाचार्यों की धूम रहती है। व्याख्यान आदि भी यहीं होते हैं।

कलाभवन-सम्बन्धी चार स्कूल हैं, जिनमें दिन को और रात को भी पढ़ाई होती है। जो दिन में आ सकते हैं वे दिन में पढ़ते हैं, जो रात में आ सकते हैं उनके लिए रात का प्रबन्ध है। विद्यार्थी जो कुछ सीखना चाहता है, उसके समय के अनुसार तदर्थ सब प्रबन्ध कर दिया जाता है।

पहले स्कूल में, विद्युत्, रसायन, वाणिज्य, धातु, यन्त्र, खनिज पदार्थ तथा आरोग्य सम्बन्धी विद्यायें सिखाई जाती हैं।

दूसरे स्कूल में सब काम हाथ से करना सिखाया जाता

है, जिसमें विद्यार्थी कल-पुरज़ों को खोल सकें यदि कुछ टूट जाय तो उसको फ़ौरन बना सकें; कलों की भीतरी और बाहिरी सब बातें समझ जायँ; पुरज़ों को जोड़ देने में कुशल हो जायँ। यहाँ पर ऐसे लोग भी भरती किये जाते हैं जो वाणिज्य-विद्यालयों में अध्यापकों का काम करना चाहते हों।

तीसरे स्कूल में मकान बनाने और उनको सजाने आदि का काम सिखाया जाता है। इस स्कूल के लिए एक बड़ी भारी इमारत तैयार हो रही है। उसके बनजाने पर और बहुत बातों का सुभीता हो जायगा।

चौथे स्कूल में स्त्रियों की शिक्षा का प्रबन्ध है। उनको गृहसम्बन्धी कार्य्यों की शिक्षा यहां दी जाती है। सीना-पिरोना, भोजन बनाना, गाना, मकान सजाना तथा-साहित्य, विज्ञान आदि सभी आवश्यक बातें यहाँ सिखाई जाती हैं। यह चौथा स्कूल विद्या-प्रेमी कारनेगी ने अपनी माता की याद-गार में खोला है। अपनी माता से किस को स्नेह नहीं होता? परन्तु बहुत थोड़े ऐसे हैं जो उस स्नेह को अमर करने के लिए कोई चिरस्थाई यादगार बनाते हों।

हमने बहुत संक्षेप में इस शिल्प-विद्यालय का वर्णन किया है। हमने अपनी आंखों से इन स्कूलों में विद्यार्थियों को जाकर देखा है, उनको सब काम अपने हाथ से करते देख चित्त बहुत प्रसन्न हुआ। जिन्हें इस विद्यालय के विषय में अधिक जानना होवे नीचे लिखे पते पर पत्र-व्यव-हार करें—

The Registrar,
Carnegie Technical Institute,
Pittsburg, Pa., U. S. A.

वे वहां से विद्यालय का विवरण-पत्र भी मँगा सकते हैं।

इस स्कूल में दाख़िल होनेवाले की उम्र कम से कम सोलह वर्ष की होनी चाहिए। जो रात को आकर पढ़ना चाहें उनकी उम्र अठारह वर्ष से कम न हो। फ़ीस साठ रुपये सालाना दिन के विद्यार्थियों से और पन्द्रह रुपये सालाना रात के छात्रों से ली जाती है। यह फीस पिट्सबर्ग में रहने वाले विद्यार्थियों के लिये है। दूसरे छात्रों से नब्बे रुपये सालाना दिन वाले और इक्कीस रुपये रात वाले विद्यार्थियों से ली जाती है।

भारतवर्ष के स्कूलों से एण्ट्रेंस पास विद्यार्थी सहज ही में यहां भरती हो सकते हैं। जो विद्यार्थी एक साल का ख़र्च एक हज़ार रुपया वहाँ लेकर पहुँचे वह सहज ही में बाक़ी साल काम करके पढ़ सकता है, पर विद्यार्थी चतुर, तीक्ष्ण-बुद्धि और मधुर-भाषी हो तो। पिट्सबर्ग में एक वेदान्त सोसाइटी भी है जो हिन्दू छात्रों की सहायता करने में हर प्रकार उद्यत रहती है।

ईश्वर करे भारतवर्ष में भी एक ऐसा ही विद्यालय खुले जिस में ऊंच नीच सभी वर्णों के बालक पढ़ें; हानिकारक बन्धनों की गांठें कटें और देश के बच्चे कला-कौशलों में कुशल होकर भारत की निर्धनता दूर करें।

———

मेरी डाइरी के कुछ पृष्ठ ।

छब्बीस मई १९०९, बुधवार, के रोज़ मेरा विश्वविद्यालय का साल पूरा हुआ। परीक्षाओं से छुट्टी पाई। तब यह फ़िक्र लगी कि अगले साल की पढ़ाई के लिये रुपया कमाने का प्रबन्ध करना चाहिये।

जब से मैं अमरीका में आया हूं मैंने अपना प्रबन्ध इस तरह रक्खा है कि विश्वविद्यालय का साल पूरा होने तक मेरे पास कुछ न कुछ रुपया अवश्य ही बचा रहे, जिसमें मज़दूरी ढूंढने के समय तक खाने पीने के लिए कष्ट न हो। पिछले साल इन दिनों मेरे पास १२० रुपये थे। उस पूंजी को मैंने छः सप्ताह बेकार बैठ कर खाया था। बाक़ी सात सप्ताह मुझे काम मिल गया था। गत वर्ष अमेरिका में आर्थिक उद्वेग था, इस कारण मज़दूरी की बड़ी क़िल्लत रही। इस साल सियेटल नगर में, जहां मैं था, प्रदर्शिनी थी। इस से ख़याल था कि खूब काम मिलेगा। प्रदर्शिनी में न सही और जगहों में काम मिल जाने की बहुत उम्मीद थी। मन में यह भी बिचार था कि यदि कुछ दिन काम न मिला तो बैठ कर लेख ही लिखेंगे। क्योंकि फ़ुरसत की कमी के कारण इस साल मैं बहुत कम लेख लिख सका था। परन्तु भावी के खेल विचित्र हैं, बात जैसी मैं चाहता था वैसी न हुई।

मई के आरम्भ में मेरी आंखें दुखने लगीं। पढ़ना लिखना कठिन हो गया। परीक्षा के दिन निकट! मज़बूरन एक अम-

रीकन डाक्टर के पास जाना पड़ा। इस झगड़े में मेरी पूंजी का रुपया खतम हो गया। २६ मई को परीक्षाओं में उत्तीर्ण होकर जो मैंने अपनी बैंक की किताब देखी तो केवल बारह रुपये रह गये थे। मकान का एक सप्ताह का किराया ६ रुपये और बनिये के ६ रुपये मेरे जिम्मे निकलते थे। अब क्या किया जाय? सोचा कि दिन चढ़ते ही मज़दूरी की खोज में निकलेंगे।

२७ मई—जलपान करके और कपड़े पहन कर मैं बैठा ही था कि विष्णुदास ने मेरा दरवाज़ा खटखटाया। मैंने दरवाज़ा खोल दिया।

विष्णु०—"कहिए, चलने को तैयार हैं?"

मैं—"जी, हां।"

विष्णु०—"आपकी घड़ी में क्या वक्त है?"

मैं—"साढ़े आठ बजे हैं।"

विष्णु०—"मेक्सिको देश का रहने वाला वह मेक्सिकन कहाँ है? हम लोगों के साथ चलेगा कि नहीं?"

मैं—"ज़रूर चलेगा। वह अभी नीचे से आता है।" थोड़ी देर हम लोग बातें करते रहे। जब मेक्सिकन आ गया तब तीनों आदमी नौकरी की तलाश में बाहर निकले।

अपने इन दो साथियों का परिचय पाठकों से करा देना आवश्यक है। विष्णुदास वाशिङ्गटन विश्वविद्यालय में इलेक्ट्रिक इञ्जनीयरिंग पढ़ते थे, और मेरी तरह मेहनत पर ही बसर करते थे। विद्यालय में इसका यह पहला ही साल था। यह साल तो इनका अच्छी तरह कट गया, क्योंकि इनके पास विद्यालय-प्रवेश करते समय काफ़ी रुपया था, जो इन्होंने वेंकोवर में रह कर कमाया था। अगले साल की पढ़ाई के

लिये ये भी द्रव्योपार्जनके चक्कर में थे। दूसरे महाशय, सिसारिनों मघाइयां, मेक्सिकन थे जो सिर्फ़ रुपया कमानेके लिये अमरीका आये थे। आदमी नेक और मिलनसार होने से हमारे साथी हो गये थे। पास के दूसरे कमरे में रहने के कारण तथा एक ही धुन के होने की वजह से हम लोगों का मन इनसे मिल गया था। इसी लिये तीनों परदेशी साथ ही मज़दूरी की तलाश में निकले।

अमरीका में सब काम पेशे के तौर पर होते हैं। मज़दूरी तलाश कर देना भी एक पेशा है। बड़े बड़े शहरों में कितनी ही एजन्सियां ऐसी हैं जिनका काम नौकरी तलाश कर देने का है। अंग्रेज़ी में इनको एम्प्लायमेन्ट एजेन्सीज (Employment Agencies) कहते हैं। हम लोग इन्हीं एजन्सियों में नौकरी की बाबत पूछने चले थे।

कोई साढ़े दस बजे के क़रीब हम लोग सियेटल के प्रान्त-भाग से शहर में पहुंचे। सियेटल शहर भी अमरीका के और बड़े शहरों की तरह मीलों लम्बा चौड़ा चला गया है। वाशिंग न-विश्वविद्यालय भी यहीं है। बिजली की गाड़ियां इधर से उधर, उधर से इधर दौड़ती फिरती हैं। प्रदर्शिनीके कारण इन दिनों गाड़ियों में बहुत भीड़ रहती थी; ख़ास कर उन गाड़ियों में जो विश्वविद्यालय से शहर आती जाती थी। क्योंकि प्रदर्शिनी के भवन विद्यालय की भूमि पर बनाये गये थे, और हम लोग विश्वविद्यालय के पास रहते थे। इसी से हमें शहर पहुंचने में देर लगी।

सियेटल की बड़ी बड़ी सड़कों पर इन एजन्सियों के अड्डे हैं। वहां जाकर हमने पूछ पाछ शुरू की। भिन्न भिन्न प्रकार के कामों के इश्तिहार एजन्सियों के बाहर दीवारों पर

लगे हुए देखे। नमूने के तौर पर दो चार का तरजुमा हम नीचे देते हैं—

१—बीस मज़दूर सड़क पर काम करने के लिये दरकार हैं। तनख़्वाह ६ रुपये रोज़।

२—तीन मज़दूर लकड़ी के कारख़ाने में काम करने के लिये। तनख़्वाह १२० रुपये माहवार। रहने को मकान मुफ़्त।

३—दो आदमी एक होटल में बरतन धोने के लिये चाहिये। तनख्वाह ९० रुपये। खाना और मकान मुफ़्त।

४—छः बढ़ई पश्चिमी सियेटल में दरकार हैं। तनख्वाह ९ रुपये रोज़।

इस प्रकार के बहुत इश्तिहार बहुत जगहों पर पाये। हमारा विचार एलास्का जाने का था; इसलिये हमने वहां का हाल दर्याफ़्त किया। मगर पता लगा कि एलास्का की भरती अभी शुरू नहीं हुई। एक जगह पर हमने अमरीकन गवर्नमेंट के काम के मुताल्लिक नोटिस देखा। उस पर मज़दूरी साढ़े सात रुपये रोज़ लिखी हुई थी। पूछने पर मालूम हुआ कि वहां हम लोगोंको नौकरी नहीं मिल सकती, क्योंकि हम लोग काले हैं! एजन्सी के कर्मचारी ने मुझको गवर्नमेंट के एक अफ़सर की चिट्ठी दिखलाई। उसमें साफ़ लिखा था कि मज़दूर अमरीका या आयरलैन्ड आदि के गोरे हों, काले हिन्दू न भेजे जायं। इस चिट्ठी को पढ़कर भांति २ के विचार मेरे दिल में उठे, जिनका उल्लेख करना यहां पर उचित नहीं।

इस तरह घूमते घामते हम लोग "पायोनियर" नामक एजन्सी के पास पहुंचे। वहां भी कई प्रकार की मज़दूरी के इश्तिहार देखे। दो चार हमारे मतलब के भी थे। पूछ पाछ करने के लिये हम लोग एजन्सी के दफ़्तर में घुस गये। वहां

तीन आदमी अपने काम में मशगूल पाये, जो मज़दूरों से बात चीत करके उनके लिये काग़ज़ लिख रहे थे। हमारी बारी आने पर मैंने एक से कहा कि हमारे लिए कोई अच्छा काम बतलाओ। ऐसी जगह भेजो जहाँ तीन महीने तक लगातार काम रहे और हम लोग अपने पढ़ने भर के लिये रुपया कमा लें। उसने कहा कि यहाँ सियेटल में ही आपको अच्छा काम मिल जायगा। आप एक एक डालर (तीन तीन रुपये) बहुत अच्छा पक्का काम दिला दूंगा। हमने स्वीकार कर लिया और तीन आदमियों की जगह चार आदमियोंकी फ़ीस, चार डालर, (बारह रुपये) अदा कर दिये। मेरे पास तो कोई डालर था नहीं। विष्णुदत्त के पास पाँच डालर थे, सो उन्होंने चार डालर दे दिये। एजन्सी वाले ने हम को एक चिट्ठी दी, जिसमें मेरे हस्ताक्षर करवा लिये।

यह चिट्ठी जेनिङ्गस नाम के एक मनुष्य के नाम थी। एक प्रकार का प्रपञ्च था, जिससे बेचारे अनजानों का धन लूटा जाता था। हम से एजण्ट ने कहा कि कल सुबह साढ़े सात बजे फलानी जगह पर जाना और मिस्टर जेनिङ्गस को यह रुक्का दे देना। उन्हें चार आदमियों की ज़रूरत है। बड़ा आसान काम है, और पक्का है।

बड़ी ख़ुशी ख़ुशी हम तीनों एजन्सी से निकले। दिल में समझा कि काम मिल गया। अब कोई चिन्ता नहीं है। बाहर निकल कर हम दो ही चार कदम गये थे कि एक अपनी जान पहचान के मिले।

मुलाक़ाती—"अच्छा, आप लोगों ने फ़ीस कितनी दी?"

मैं—"एक डालर, फ़ी आदमी।"

मुलाक़ाती—(हँसकर)—"आप लोगों को एजन्सी वाले ने ठग लिया। शहर के काम के केवल पचास सेण्ट (आधा डालर) देने पड़ते हैं। आप लोगों ने एक एक डालर कैसे दे दिया ?"

मैं—"हम लोगों को बहुत आसान और पक्का काम मिला है। इसलिए उसने एक एक डालर लिया होगा।"

मुलाक़ाती (मुसकरा कर)—"यह बात कल सबेरे मालूम हो जायगी।"

हमलोगों ने उसकी बात का कुछ ख़याल न किया। शहर में घूमते फिरते अपने अपने रहने की जगह पहुंचे। रात को लम्बी तान कर सो रहे, ताकि सबेरे काम पर ठीक समय पर पहुंच जायँ और आसानी से काम कर सकें।

२८ मई—प्रातःकाल उठकर मैंने कुछ खाना पीना तैयार किया। नियत समय पर तीनों जने गाड़ी में बैठ कर मिस्टर जेनिङ्गस के पास चले। चौथा आदमी सरदार तेजासिंह हमको रास्ते में मिल गया था। बातें करते हुए हम रीपबलिकन गली में पहुंचे। यहीं पर जेनिङ्गस का काम था। वहां देखते क्या हैं कि सड़क पर कुटाई हो रही है और पचास साठ आदमी काम कर रहे हैं। हम लोगों ने उस मेक्सिकन को मिस्टर जेनिङ्गस के पास भेजा। उसने काग़ज़ देख कर हम चारों आदमियों को गाड़ियां खींचने पर लगा दिया। यह काम बड़ा मुश्किल था। एक ढलवां जगह पर एक मशीन खड़ी थी जिसमें गारा तैयार हो रहा था। गाड़ियां उसके मुंह के नीचे खड़ी कर दी जाती थीं और वह मशीन उनको गारे से भर देती थी। दो आदमियों का काम था कि भरी हुई गाड़ी को घोड़ों की तरह खींच कर तीन सौ गज़

नीचे ले जायं और वहां जाकर उलट दें। फिर ख़ाली गाड़ी को खींच कर ऊपर चढ़ा लावें और मशीन के मुंह के आगे धर दें। यही ख़च्चरों का काम करने के लिये हम यहां भेजे गये थे। विष्णुदास और मैं एक गाड़ी से चिपट गये; हमारे दूसरे दो साथी दूसरी से। मैं और विष्णुदास तो ख़ैर रोते धोते इस चढ़ाई उतराई में लगे रहे। परन्तु हमारे दूसरे साथियों ने एक ही बार गाड़ी खींच कर तोबा की और अलग खड़े हो गये। मेक्सिकन ने चिल्ला कर हम से काम छोड़ने को कहा। हमने भी छोड़ दिया।

मेक्सिकन (एजन्ट को गाली देकर)—"देखा उसकी बदज़ाती! यह ख़च्चरों का काम करने के लिए हमें यहां भेजा और एक डालर फ़ीस भी ली। बदमाश!"

मैं (हंस कर—"अच्छा, तो अब क्या सलाह है? चल कर अपने चार डालर वापस लेंगे।"

मैंने विष्णुदास से कहा कि जाकर मिस्टर जेनिङ्गस् से इस काग़ज़ पर लिखा लाओ कि यहां पक्का काम नहीं है। जेनिङ्गस् ने काग़ज़ पर लिख दिया—"ये लोग गाड़ियां नहीं खींचना चाहते।"

वहां से चक्कर लगाते, क़बरिस्तान देखते, हम लोग फिर उसी एजन्सी में पहुंचे जाकर काग़ज़ दिखाया और अपनी फ़ीस वापस मांगी। अब फ़ीस भला ये लुटेरे क्यों वापिस देने लगे! उलटा हम लोगों को बेवक़ूफ़ बनाना शुरू किया कि तुमने जेनिङ्गस् के काम का हर्ज किया। मैंने उससे कहा कि तुम्हारा हमारा यह इक़रार था कि आसान और पक्का काम मिले। इसी पर हमने एक डालर फ़ीस भी दी। बड़े झगड़े के बाद यह तै हुआ कि उसने हमको दूसरी जगह

काम करने के लिये भेजा और एक दूसरा क़ाग़ज़ हम लोगों को दिया।

यह काम विश्वविद्यालय के निकट ही मिट्टी काटने का था। फावड़े से मिट्टी काट काट कर गाड़ीमें भरने की नौकरी थी। एजन्सी वालों ने हम लोगों से कहा कि अभी तुम लोग वहां जाओ और दोपहर को एक बजे काम शुरू करो।

चार डालर देकर हम फंस गये थे, अब फटकने से क्या हो सकता था। दिल में निश्चय हो गया कि ये डालर तो गये। यदि इनके द्वारा एक भी सप्ताह का काम मिल जाय तो हम समझ लें कि गंगा नहाये। जिस खुशी से पहले दिन हम एजन्सी से निकले थे यह आज न थी। मेरे साथियों के चेहरे पर मायूसी छा रही थी। यही बात उनके मुंह से निकलती थी—"काम न मिलेगा तो क्या होगा?" विष्णुदत्त मुझ से बार बार पूछते—"कहो, देव, काम न मिलेगा तो कैसे अगले साल पढ़ेंगे?" उनको मैंने समझाया कि धीरज धरो, काम मिल जायगा। मगर उनको यह पता न था कि देव के रहने बैठने का भी ठिकाना नहीं है! मकान वाली यदि आज किराया माँगे सख़्त परेशानी हो। लेकिन मुझे विष्णुदास के चार डालरों की बड़ी चिन्ता थी, क्योंकि उस बेचारे ने मेरी ही ख़ातिर से चार निकाल कर सब की फ़ीस भरी थी।

ख़ैर इसी उधेड़बुन में हम वापस आये। भोजन कर एक बजे जहां जाना था वहां पहुंचे। वहां जाकर कार्य्याध्यक्ष को एजन्सी वालों का काग़ज़ दिखाया। उसने कहा कि आज हमारे पास काम नहीं है। कल सबेरे साढ़े सात बजे तुम लोग यहां आओ, काम मिल जायगा। लो! यह दिन भी

ख़राब गया। उलटा आने में ट्राम के पैसे पल्ले से ख़र्च हुए। मगर क्या किया जाता, अपना मुंह लेकर अपने कमरों में लौट आये। रात को यह सोच कर मैं सो रहा कि कल काम ज़रूर मिल जायगा।

२६ मई—प्रातःकाल का नाश्ता करके मैंने दोपहर का खाना साथ बांधा और अपने साथियों को लेकर काम पर चला। वहां ठीक साढ़े सात बजे हमलोग पहुंच गये। कार्याध्यक्ष ने कहा कि तुम लोग घण्टे डेढ़ घण्टे इन्तज़ार करो। मेरा छकड़ा आ जाय तो काम शुरू करना। हमने कहा—"अच्छा" और लगे छकड़े का इन्तज़ार करने। सवा नौ बजे के क़रीब छकड़े साहिब आये और हमने काम शुरू किया। बारह बजे तक मशीन की तरह काम करते रहे। हमारे साथ दश अमरीकन मज़दूर भी काम करते थे। वे हम लोगों को देख देखकर बे तरह कुढ़ते थे। हम लोग चुपचाप काम करते रहे। तेजसिंह और मेक्सिकन मघाइयाँ तो ऐसे कामों के आदी थे, उनको कुछ भी मालूम न हुआ, मगर मुझको और विष्णुदास को नानी याद आ गई। सड़क पर फावड़े से मिट्टी तो मैं भी कई बार काट चुका था, परन्तु काट काटकर छकड़े भरने का अभ्यास मुझे न था। जब जब मैं फावड़े से काट कर मिट्टी छकड़े में फेंकता, तो धूल उड़ उड़कर आंख कान, नाक में जाती। सारा दिन इसी प्रकार धूल फांकते रहे। सारे कपड़े मिट्टी से भर गये, सिर में मिट्टी ही मिट्टी!

ख़ैर, पांच बचे छुट्टी हो गई। शनिवार का दिन था। विचार किया कि यह भी अच्छा हुआ। रविवार को आराम करके सोमवार को फिर काम पर आ डटेंगे और एक सप्ताह बाद अभ्यास पड़ जाने पर कुछ भी कष्ट न होगा।

क़ायदे के मुताबिक़ आज मज़दूरी मिलने का दिन था। क्योंकि यहां पर सप्ताह के सप्ताह मज़दूरी मिल जाती है। हम लोग भी मज़दूरों की कतार में खड़े हो गये। हमारी बारी आई तो हम लोगों को कार्य्याध्यक्ष ने एक डालर पचपन सेन्ट फ़ी आदमी दिये। अमरीका के क़ानून के मुताबिक़ तो हम लोग पूरे दो डालर के मुस्तहक़ थे, क्योंकि हम लोग साढ़े सात बजे वहां पहुंच गये थे। हमसे क्या, छकड़ा चाहे नौ बजे आता चाहे दस बजे। हम तीन जने तो हिन्दू थे, इस लिये अपने भारतवर्षीय संस्कारों से वेष्टित होने के कारण एक डालर पचपन सेन्ट ही लेकर चुप रह गये। पर वह मेक्सिकन, जो सब के अख़ीर में था, अपने चेक को देखकर बोला—

मेक्सिकन—"ऐ मिस्टर, क्यों तुम हम लोगों को दो डालर नहीं देते" ?

कार्य्याध्यक्ष—"तुम लोगों ने साढ़े नौ बजे काम शुरू किया था"।

मेक्सिकन—"हम लोग साढ़े सात बजे यहां आ गये थे। हम को क्या, चाहे तुम्हारा छकड़ा दस बजे आवे चाहे बारह बजे।"

कार्य्या०—"तुमको लेना हो तो लो, नहीं तो न लो।"

मेक्सिकन ने अपना चेक उसको वापस दे दिया। उस अन्यायी ने हम लोगों से कह दिया कि सोमवार को काम पर मत आना और एजन्सी वाले काग़ज़ की पीठ पर लिख दिया—"They are no good"—अर्थात् ये लोग ठीक काम नहीं करते। चार डालरों के वापस आने की जो थोड़ी बहुत आशा थी उस पर भी इसने पानी फेर दिया।

इस बेइन्साफ़ी का क्या इलाज! साल भर में तीन महीने

के लिये काम मांगते हैं, काम नहीं मिलता। अपनी जेब से फ़ीस देकर नौकरी ढूंढते हैं, ईमान्दारी से काम करते हैं, एक दिन काम करवा कर जवाब! मज़दूरी भी पूरी नहीं। चार डालर मुफ़्त में गये। यह क्यों? क्या इस भूमि पर रहने का हमारा कोई अधिकार नहीं है? क्या माता वसुन्धरा के दत्त भोगों में हमारा हिस्सा नहीं? क्या यह न्याय है कि एक आदमी बारहों महीने लाखों रुपये पैदाकर आनन्द उड़ावे, और दूसरे को विद्याध्ययन के लिये भी धन कमाने का मौक़ा न दिया जाय? क्या यह इन्साफ़ है कि एक तो हवागाड़ी पर बैठ कर बेफ़िकरी से दिन काटे और दूसरा खाने के लिये भी मोहताज घूमे? हे मनुष्य-समाज! इस बेइन्साफ़ी का कुछ ठिकाना है!

इसी प्रकार के प्रश्न मेरे हृदय में उठ रहे थे और मैं धीरे धीरे अपने साथियों के साथ जा रहा था। चलते चलते एक चबूतरे के पास पहुंचे, जहां हम लोग कुछ देर के लिये बैठ गये। विष्णुदासजी को एक डालर दे दिया गया। कुछ देर सुस्ता कर विष्णुदास और तेजसिंह अपने २ रहने की जगह गये। मैं और मघाइयां अपने कमरों की ओर रवाना हुए।

यद्यपि मैं इतना थका हुआ था तथापि रात को बड़ी देर तक मुझे नींद न आई। मनुष्य-समाज के स्वार्थ का भयङ्कर चित्र मुझको कष्ट देता रहा। आदमी दूसरों की पीड़ा तभी समझता है जब खुद उस पर बीतती है। आज की बेइन्साफ़ी के दृश्य ने मुझ पर बेढब असर किया। घण्टों मैं समाज के अन्याय पर विचार करता रहा। अन्त को मैंने निद्रादेवी के भवन में प्रवेश किया।

अमरीका में विद्यार्थी-जीवन ।

हमारे देश के स्कूलों, कालेजों और पाठशालाओं में पढ़नेवाले विद्यार्थी यह जानने के बड़े ही उत्सुक होंगे कि नई दुनियांके विद्यार्थी अपने विश्वविद्यालयों में किस प्रकार रहते और विद्याभ्यास करते हैं । इसलिये यह लेख मैं बड़े प्रेम से अपने भारतीय छात्रों के भेंट करता हूं ।

अमरीकन विद्यार्थी स्वभाव से ही हँसी, मज़ाक, दिल्लगी पसन्द करते हैं; यह उन लोगों का जातीय गुण समझिये । इस लिये इनके जीवन को इन्हीं की आँखों से देखने वाला पुरुष इनकी आदतों और कामों को भले प्रकार समझ सकता है । सम्भव है कि यहां के विद्यार्थियों की कई एक बातें हमारे पाठकों को पसन्द न आवें ; और हम यह चाहते भी नहीं कि वे उन्हें ज़रूर ही पसन्द करें । हम लेखक हैं ; लेखक का धर्म आकाश पाताल के कुलाबे बाँधना नहीं है—आदमियों को देवता बनाना नहीं है—बल्कि सच्ची बातें उनके सामने रखना है । यदि हम केवल चुन चुन कर ख़ास ख़ास बातें लिखें और तारीफ़ों के तूमार बाँध दें तो हम पाठकों को भुलावा देने के अपराधी होंगे । यह हम स्पष्ट तौर से कहे देते हैं कि भारत को बहुत सी बातें अमरीका से सीखना है ; और उनमें से अमरीकन विद्यार्थियों की जीवन चर्य्या बहुत ही शिक्षादायक है । क्योंकि इन्हीं विश्वविद्यालयों में अमरीका के रत्न उत्पन्न होते हैं ; यहीं स्वाधीन-चिन्ता के

बीज बोये जाते हैं ; यहीं देशभक्ति की श्रद्धा उत्पन्न की जाती है; और यहीं पर साहित्याचार्यों का जन्म होता है।

१-बनैल विद्यार्थी और उसका प्रवेश-संस्कार,

हाई स्कूल पास करके जो विद्यार्थी कालेज में भरती होता है उसको अमरीका के विश्वविद्यालय की परिभाषा में 'Freshman' अर्थात् बनैलू विद्यार्थी कहते हैं। यह क्यों? इसलिये कि विद्यालय के ऊँचे दरजे के छात्रों के ख़याल में वह जङ्गली समझा जाता है ; क्योंकि हाई स्कूल तक लड़कपन का ज़माना है। इसलिए जिस जङ्गली विद्यार्थी का प्रवेश-संस्कार नहीं हुआ होता, उसे पुराने विद्यार्थी अपने में मिलने जुलने नहीं देते। यह केवल विद्यार्थियों का अपना बनाया हुआ सामाजिक नियम है। इस संस्कार के भिन्न भिन्न कालेजों और विश्वविद्यालयों में भिन्न भिन्न तरीक़े हैं। शिकागो के स्नेलहाल में प्रवेश-संस्कार का जो तरीक़ा है उसे हम अपने पाठकों के मनोरञ्जनार्थ लिखते हैं।

१६०६ में कोई बारह विद्यार्थियों का संस्कार होना था। उनमें एक जापानी महाशय भी थे। स्नेलहाल की विद्यार्थि-समिति ने सभा करके ३१ अक्तूबर की रात को नौ बजे उनका प्रवेश-संस्कार करना निश्चित किया। नियमित समय पर सब पुराने विद्यार्थी बांस की एक एक छड़ी हाथ में लिये हुए एक बड़े कमरे में इकट्ठे हुए। बनैलू, जिनकी आंखों पर रूमाल बंधे हुए थे, उसी कमरेमें लाये गये। सबसे पुराने तीन विद्यार्थी एक चबूतरे पर कुरसियों पर बैठे थे। उनमेंसे एक न्यायाधीश था। उसकी पोशाक भी वैसे ही थी। हम* सब पुराने विद्यार्थी

* मैं भी पुराने विद्यार्थियों में से था, क्योंकि मैं ने भारतवर्ष में हाई स्कूल पास करके दो साल कालेज में शिक्षा पाई थी—लेखक।

कुरसियों पर बैठे थे ; न्यायाधीश की आज्ञानुसार बिजली की रोशनी हटा कर दो मोमबत्तियां जला दी गईं। उनसे धुंधली रोशनी होने लगी। उसी प्रकाश में जज ने कुछ मन्त्र पढ़े और सब लोगों ने घुटने टेक कर उनको दुहराया। इसके बाद जज ने एक प्रतिज्ञा पत्र पढ़ा, जिस पर सब बनैलू विद्यार्थियों ने दस्तख़त किये और हम लोगों ने छड़ियों से पीट कर उनको कमरे से निकाल दिया। वे किसी दूसरे कमरे में बन्द कर दिये गये। यह बात उस संस्कार की भूमिकामात्र थी।

जब जंगली विद्यार्थी चले गये तब जज ने तीन कर्मचारी और नियत किये—एक दरबान दूसरा चपरासी, तीसरा मुंशी। दरबान पहरे पर नियत हुआ; चपरासी का काम एक बनैलू को सभा में लाना निश्चित हुआ ; मुंशी का काम जज को आज्ञाओं का पालन करना निश्चित हुआ। अब कारवाई आरम्भ हुई। सब से पहले जापानी का हाथ पकड़ कर चपरासी उसे ले आया। जब वे दरवाज़े पर पहुंचे तब दरबान ने पूछा—"कौन है ?" उत्तर मिला "एक दोस्त।" दरबान उसे जज के पास ले चला और साथ साथ हम लोग उस एक दोस्त की आमद की खुशी का भजन गाने लगे। दरबान ने उसको मुंशी के हवाले किया। मुंशी ने उसको जज के सामने पेश किया।

जज—"तुम कौन हो ?"

जापानी—"दोस्त हूं।"

जज—"अच्छा, हाथ मिलाओ तो देखूं दोस्त हो या दुश्मन।"

ज्योंही जापानी ने हाथ मिलाया, जज बोल उठा—"दुश्मन दुश्मन, दूर करो, दूर करो।" हम सब लोग उसी दम छड़ियों

से उसकी पूजा करने लगे। तब जज के एक साथी की सिफ़ारिश पर उस बनैलू के साहस की परीक्षा होने लगी। उसे मुंशी ने कहा कि एक स्टूल पर खड़े हो। बनैलू खड़ा हो गया। उसकी आँखें रूमाल से बन्द थीं। आज्ञा मिली कि इस स्टूल से दूसरी कुरसी पर कूदो। वह कूदा तो एक विद्यार्थी ने कुरसी हटा दी। इस प्रकार बनैलू बेवकूफ़ बनाया गया और दूसरे लोगों ने छड़ी से उसका आदर-सत्कार किया। इसके बाद उसकी बुद्धि की परीक्षा हुई। उसमें भी उस बेचारे की दुर्गति हुई। तब जज ने उसको आज्ञा दी कि एक व्याख्यान दो। जापानी ने व्याख्यान में कहा—

"मैं आज से स्नेलहाल का पक्का मेम्बर बनता हूं। और बनैलू से सभ्य होता हूं। मैं प्रण करता हूं कि इस हाल के दूसरे विद्यार्थियों का आज्ञाकारी रहूंगा; उनके दुःख में दुख और सुख में सुख समझूंगा। सदा सभा के नियमों का पालन करूंगा और स्नेलहाल के गुण गाऊँगा।"

पाठकों को यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि लेकचर देते वक़् भी जापानी की पीठ पर तड़ातड़ छड़ियाँ पड़ रही थीं*। व्याख्यान के बाद उसको चालीस गज़ के फ़ासले पर ले जाकर खड़ा किया, जहां से वह घुटनों के बल रेंगता हुआ जज के चबूतरे के पास पहुंचा। वहां पर एक काग़ज़ और पेन्सिल रक्खी थी; उसने अपना नाम काग़ज़ पर लिखा। यह काम ज़रा मुश्किल था। आँखें बन्द, घुटनों के बल चल कर काग़ज़ तलाश करना, ऊपर से छड़ियों की

* मैं अपने मित्रों के सूचनार्थ यह बतला देना ज़रूरी समझता हूं कि मैंने किसी को नहीं पीटा। मैं केवल दर्शक बना रहा; क्योंकि मुझे सिर्फ़ काररवाई देखनी थी—लेखक

बौछाड़ ! अजीब नज़ारा था। खैर, इसके बाद उसकी आँख खोल दी गई ; उसका मुंह धोया गया और सब पुराने विद्यार्थियों ने प्रेम से उससे हाथ मिलाये, और उसको अपनाया। यही हाल दूसरे बनैलू विद्यार्थियों का भी हुआ। जब सब के प्रवेश—संस्कार हो चुके तब खूब मिठाई उड़ी।

इसी प्रकार के संस्कार कोलम्बिया, हार्वर्ड आदि विश्वविद्यालयों में भी प्रचलित हैं ; कहीं कोई बात सख़्त है, कहीं कोई बात नरम। आरगन रियासत के विश्वविद्यालय में बनैलू विद्यार्थियों के जिम्मे बहुत से काम लगाये जाते हैं। यदि कोई आज्ञा मानने में आगा पीछा करता है तो वह कपड़ों सहित नदी में ढकेल दिया जाता है या नहाने के 'टब' में पकड़ कर डाल दिया जाता है और ऊपर से ठण्डे पानी का नल छोड़ देते हैं। इस प्रकार हर तरह उसे सीधा करते हैं।

२-विद्यार्थियों के साहित्य-समाज।

ऊपर जो कुछ हमने लिखा है वह ख़ाली पाठकों की वाक़फ़ियत के लिये समझना चाहिए। आगे हम अधिकांश उन बातों को लिखेंगे जो हमें अमरीका के विद्यार्थियों से सीखनी हैं उनमें से पहिली बात साहित्य-सम्बन्धी है।

यहां के विश्वविद्यालयों में सभी जगह साहित्य-समाज हैं, उनमें दाख़िल होकर विद्यार्थी व्याख्यान देना, वाद-विवाद करना, तथा राजनैतिक, धार्मिक आदि विषयों पर विवेचना करना सीखते हैं। हमारे देश में विद्यार्थी राजनैतिक विषयों की चर्चा करने से मना किये जाते हैं ; कालेजों में धार्मिक वाद प्रतिवाद बन्द हैं, जिसमें किसी का दिल न दुखे। उनको ख़ाली 'फ़ोनोग्राफ़' की तरह रटन्त-विद्या सिखाई जाती है

जिसे वे परीक्षाओं के समय उगल देते हैं। बस! अमरीका के साहित्य-समाजों में प्रत्येक राजनैतिक बात का खण्डन, मण्डन होता है। कुछ विद्यार्थी एक पक्ष लेते हैं; कुछ दूसरा। फिर वादविवाद का आनन्द देखिये। अभी जो जापानियों के निकालने का विषय अमरीका में उठा था उस पर वाशिंगटन, इड़ाहो और आरेगन रियासतों के विश्वविद्यालयों की ओर से तीन बड़े घनघोर शास्त्रार्थ हुए थे। प्रत्येक विश्वविद्यालय की ओर से दो दल तैयार किये गये थे—एक पक्ष में, दूसरा विपक्ष में। दोनों दलों ने खूब तैयारियाँ की थीं। पक्षपात-हीन लोग जज नियत किये गये थे। उन्होंने केवल युक्तियाँ और प्रमाण सुन कर फैसला दिया। वाशिंगटन वालों का दल जो जापानियों को निकाल देने के पक्ष में था, हार गया। अर्थात् आरेगन वाले दोनों दल हार गये। इस प्रकार के बहस मुबाहिसे से दोनों पक्षों की युक्तियों का ज्ञान श्रोताओं को हो जाता है और उन्हें खुद सोचने की पूरी सामग्री मिल जाती है। यही नहीं, किन्तु विद्यार्थियों को निबन्ध लिखने, जांच करने और अपने देश के हित-अनहित-सम्बन्धी बातों के विचार का ज्ञान हो जाता है।

और लीजिए। विश्वविद्यालय की एक शाखा सभा का मैं भी मेम्बर था; मेरे प्रस्ताव करने पर एक बार निम्नलिखित विषय बहस मुबाहिसे के लिए रक्खा गया।

Resolved that the Christian Missionaries should not be sent to India.

अर्थात् ईसाई पादरी भारत में न भेजे जायँ।

मैंने, और अमरीकन विद्यार्थियों ने 'न भेजे जाने का पक्ष लिया। और तीन अन्य विद्यार्थियों ने 'भेजे जाने का—

तीन जने जज नियत किये गये। हमने युक्तियों और प्रमाणों से सिद्ध किया कि भारतवर्ष में ईसाई पादरी व्यर्थ का धार्मिक झंझट खड़ा कर रहे हैं। हिन्दू और मुसलमान दो दल अलग हैं ही, ईसाई अब एक और दल पैदा करना चाहते हैं। हमने सिद्ध किया कि ईसाईयों ही की कृपा से हिन्दू तमाम दुनियाँ में काफिरों 'Heathens' के नाम से मशहूर किये जाते हैं, और यही लोग जातियों में घृणा का बीज बो रहे हैं। आख़िर में एक अमरीकन विद्यार्थी ने सिद्ध किया कि पादरियों को घर ही में रह कर यहीं ईसाई धर्म्म का प्रचार करना चाहिये; यहीं उनकी सख़्त ज़रूरत है। प्रतिपक्षियों ने इस बात पर अधिक ज़ोर दिया कि इञ्जील में आज्ञा है कि इस धर्म्म का प्रचार करो, इसलिये हमारा कर्तव्य है कि हम दूसरे देशों में जाकर ईसाई मत का उपदेश करें। जजों ने फैसला हमारे पक्ष में दिया।

इन साहित्य-समाजों में सभी प्रकार के विषयों पर विचार होता है। भारतवर्ष के विद्यार्थियों को तङ्ग-दिल न रह कर ऐसी ऐसी सभायें खोलनी चाहियें और राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक सभी विषयों पर विचार करना चाहिये।

३--विद्यार्थियों के अख़बार और पत्रिकायें

प्रत्येक विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों द्वारा सम्पादित दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र और पत्रिकायें निकलती हैं। सभी विद्यार्थियों को लेख लिखने और कविता करने का अवसर दिया जाता है; उनके उत्साह वर्द्धन के लिए पदक दिये जाते हैं। अच्छी अच्छी कथायें और खोजपूर्ण लेखों के लिए पारितोषिक मिलते हैं। केवल प्रतिष्ठा और मान वृद्धि

के लिए भी विद्यार्थी लेख लिखते हैं। अमरीका में जो आज बड़े बड़े धुरन्धर लिक्खाड़ हैं उन्होंने ऐसी ऐसी पत्रिकाओं द्वारा ही पहले लिखना सीखा था। फिर धीरे धीरे उन्नति करते करते वे प्रसिद्ध लेखक हो गये।

भारतवर्ष में हिन्दी के लेखक नहीं हैं। लेखक पैदा हों कैसे? ज़रा अपने यहां का हाल तो देखिये। बनारस का हिन्दू कालेज अपने आपको हिन्दुओं का प्रतिनिध कालेज कहता है और यह डींग मारता है कि हम हिन्दुओं में क़ौमी तालीम दे रहे हैं। इनके यहां से एक पत्रिका "सेंट्रल हिन्दू कालेज मेगज़ीन" नाम की निकलती है। नाम हिन्दू कालेज है; डींग क़ौमी तालीम की है; परन्तु पत्रिका अङ्गरेज़ी में! यह तमाशा देखिए। जब ऐसे ऐसे क़ौमी कालेजों में अङ्गरेज़ी की इस तरह बूंक हो तो भला हिन्दी-लेखक कहां से पैदा हो सकते हैं। चाहिए तो यह था कि हिन्दू कालेज की ओर से हिन्दी में पत्रिका निकलती, जिसका सम्पादन कालेज के विद्यार्थी ही करते। जो विद्यार्थी चार साल कालेज में पढ़ कर हिन्दी-पत्रिका का सम्पादन करते, वे अपनी उम्र में हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक बन सकते, पर यहां तो अङ्गरेज़ी ही की पूजा मंजूर है; हिन्दी बेचारी को कौन पूछे। हां, कालेज के मुखिया कभी कभी अपनी सम्मति हिन्दी के पक्ष में प्रकट कर दिया करते हैं जिससे यह सिद्ध हो कि वे हिन्दी के पक्षपाती हैं। हिन्दी की जड़ में तेल डालते जाइए और साथ ही अपनी सहानुभूति भी प्रकट करते जाइए। क्या ख़ूब!

४-विद्यार्थियों की कसरतें।

शारीरिक उन्नति का ध्यान अमरीकन विश्वविद्यालयों में

ख़ास तौर से रक्खा जाता है। प्रत्येक विश्वविद्यालय में कसरत के लिये ख़ास ख़ास इमारतें हैं; सिखाने वाले उस्ताद भी मौजूद हैं। विद्यार्थी लोग बड़े शौक़ से कसरत करते हैं। उनके हाथ पैर मज़बूत और बदन खूब चुस्त होते हैं। 'फुटबाल' और 'बेसबाल' यहां के प्रधान खेल हैं। अमरीकन 'फुटबाल' अंगरेजी 'फुटबाल' की तरह नहीं खेला जाता। अमरीकन 'फुटबाल' में चोट चपेट लगने का अधिक भय है; कई विद्यार्थियों की टांगें टूट गई हैं। अँगरेज़ी 'फुटबाल' में पैर से गेंद को गोल के पास ले जाने का नियम है; अमरीकन 'फुटबाल' में गेंद को हाथ से पकड़ कर दौड़ते हुए जिस प्रकार हो सके उसे ले जाने का नियम है। दूसरी पार्टी का काम है कि उसको रोके और दूसरे गोल के पार पहुंचावे। बस यही लड़ाई है। अकसर विद्यार्थी गुत्थम गुत्था हो जाते हैं। आप खुद ही देख सकते हैं कि इस खेल में कितना ख़तरा है।

'बेसबाल' अंग्रेज़ी 'क्रिकेट' की तरह का खेल है। यह सब जगह खेला जाता है। अंगरेज़ी 'क्रिकेट' के ढंग में अदल बदल करके यह खेल अमरीकन बना दिया गया है। तात्पर्य यह कि अमरीकन के लोगों ने इन दो खेलों को अपने राष्ट्रीय ढङ्ग का बना लिया है।

५—विद्यार्थी का धार्मिक-जीवन।

भारतवर्ष के विद्यार्थी समझते होंगे कि अमरीकन विश्व-विद्यालयों में सभी लड़के ईसाई हैं। यह बात नहीं है। ईसाई मत का अमरीका में प्रतिदिन ह्रास हो रहा है। यद्यपि सभी विश्वविद्यालयों में 'यंगमेन-क्रिश्चियन-एसोसियेशन' हैं, और

कई एक बाइबिल क्लासें भी हैं; परन्तु उनमें आने वाले बहुत ही थोड़े होते हैं। शिकागो में मुश्किल से तीस चालीस विद्यार्थी एसोसियेशन की सभाओं में आते हैं; आरगेन में पन्द्रह बीस। बाइबिल क्लासों में आठ दस विद्यार्थियों से अधिक नहीं होते। ये जितनी एसोसियेशनें चल रही हैं, सब धनवानों के दान से। इन समाजों में लोगों को आपस में मिलने जुलने का अवसर मिलता है। एसोसियेशन का मेम्बर हो जाने से बहुत से और और फ़ायदे होते हैं। मैं खुद एसोसियेशन का सभ्य था।

विश्वविद्यालयों के लड़के बड़े उदार विचारों के होते हैं। हां, जिन्होंने अपनी उम्र में पादरी बनने की ठानी है वे लोग ज़रूर ज़रा तंगदिल होते हैं। जो विद्यार्थी गिरजे जाते हैं, वे प्रायः या तो उमदा गाना सुनने को, या किसी अपनी सहेली की ख़ातिर से, या किसी और ऐसे ही कारण से। हमारे देश के लोगों की तरह 'हस्तिना ताड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैनमन्दिरम्' वाली उक्ति के अनुसार ये लोग नहीं चलते। हमारे देश में ईर्षा-द्वेष का साम्राज्य है। विद्या की सुलभता के कारण अमरीकन विद्यार्थियों में सहनशीलता गुण विशेष आ गया है। आप इनके मतों का जैसा चाहें खण्डन करें, वे बुरा न मानेंगे। आप के विचारों को शौक़ से सुनेंगे। इनका धार्मिक विश्वास यह होता जाता है कि सत्य सिद्धान्त सभी धर्मों में है। जो सत्य का जिज्ञासु है उसको किसी ख़ास पंथ में बंधे नहीं रहना चाहिए; बल्कि जहाँ सत्य मिले वहीं से ले लेना चाहिए। बहुत लोग नास्तिक भी हैं। परन्तु मुझे मालूम होता है कि अमरीका का भावी धर्म अमली वेदान्त होगा।

६—विद्यार्थियों का सामाजिक जीवन

यहाँ के विद्यार्थियों का सामाजिक जीवन हमारे लिए बिलकुल ही नया है। यहां लड़के लड़कियां सब इकट्ठे पढ़ते हैं प्रायः हर लड़के की एक एक सहेली होती है जिसके साथ वह फ़ुरसत के वक्त सैर करने या नाव चलाने का आनन्द लूटने जाता है। गरमियों के दिनों में अपनी अपनी डोंगी पर, अपनी अपनी सखी के साथ, लड़के डोंगी खेते दिखाई देते हैं। कभी दो चार मित्र मिल कर जाते हैं, और बाहर ही जंगल में पकाते खाते हैं। लड़कियों के सामने ये लोग बड़े अदब से बोलते चालते हैं; असभ्य शब्दों का प्रयोग अपनी भाषा में कभी नहीं करते। नाच के समय प्रत्येक विद्यार्थी अपनी सखी को साथ लाता है।

लड़के लड़कियों का आपस में मेल जोल कराने के लिए बहुधा सब लोग एक जगह इकट्ठे होते हैं। एक ऐसे समारोह में मुझे भी बुलावा आया था। रात को आठ बजे हम सब लोग नियत स्थान पर जमा हुए। पान के बराबर और उसी काट के मोटे मोटे काग़ज़ हमें दिये गये; उनके साथ साथ छोटी छोटी पेन्सिलें लटकती थी। हर लड़का उस पान को लेकर जुदा जुदा लड़कियों से दस्तख़त करवाता और आप भी उनके पानों पर हस्ताक्षर करता था। मैंने भी संकोच त्याग दस लड़कियों से अपने पान पर दस्तख़त करवाये। इसका मतलब यह था कि जिन दस लड़कियों के साथ मेरी बातचीत होने को थी, उनका निश्चय आरम्भ से ही लड़कियों ने आपस में मिलकर कर लिया था। मेरे साथ जिन लड़कियों ने बातें कीं, उन्होंने असली विषय छोड़ कर मुझसे हिन्दुस्तान

ही की बातें पूछीं खैर, जब यह वार्तालाप ख़तम हुआ तब हर एक को एक एक काग़ज़ उस वार्तालाप का सार लिखने के लिये दिया गया। इसके बाद फिर पेट-पूजा आरम्भ हुई, और हंसते खेलते सभा विसर्जित हुई।

जैसा मैं पहिले लिख चुका हूं कि अमरीकन विद्यार्थी हंसी दिल्लगी बहुत पसन्द करते हैं। जो चुटकलेबाज़ हुआ उसकी तो समझो पांचों अंगुलियां घी में हैं। ऐसे विद्यार्थी की खूब बन आती है। यदि वह पढ़ने लिखने में भी होशियार हो तो फिर कहना ही क्या। लड़कियों का वह प्यारा, सभा समाजों में वह मुखिया—हर जगह उसकी क़दर होती है।

एक बात और भी लिखने लायक़ है। अमरीकन विश्वविद्यालयों में दो शब्द बहुत प्रसिद्ध हैं। एक 'Rough House' (रफ़-हाउस), दूसरा 'Bathtub' (बाथ-टब)। आप जानते हैं पहले से क्या मतलब है? जब कभी कोई शरारती विद्यार्थी किसी दूसरे छात्र का कमरा सूना पाता है तब वह उसकी सब किताबें इधर उधर करके उसके कपड़ों का एक ढेर लगा, मेज़ को उलटी कर, उसके ऊपर कुरसियां खड़ी कर, चुपचाप दरवाज़ा बन्द करके चला जाता है। जब वह विद्यार्थी अपने कमरे में आता है, और यह दशा देखता है तब चुपचाप अपनी चीज़ें आरास्ता करने में लग जाता है। बेचारा न गुस्सा करता है, न गाली देता है। दूसरे दिन केवल अपने मित्रों में वह यही कहेगा कि कल न जाने किसने मेरे कमरे में 'Rough-Housc' किया था। रफ़-हाउस का शाब्दिक अर्थ है—भद्दा घर।

बाथ-टब एक प्रकार का दण्ड विद्यार्थियों के लिए है। जो शरारती विद्यार्थी पकड़ा जाता है उसको नहाने के 'टब'

में डाल कर ठण्डे पानी से उसे कपड़ों सहित भिगो देते हैं। यों भी जब शरारत का भूत बहुत से विद्यार्थियों पर सवार होता है तब पानी की बालटियां भर भर कर होली मचाते हैं। मैं भी तीन बार इनके पंजे में फंसा था। जहां आदमी रहता है वहां की सब बातें थोड़ी बहुत उसके हिस्से में आती ही हैं। मैं अमरीका में अमरीकन छात्रों ही में रहा था, अन्य हिन्दू छात्रों की तरह अलग मकानों में नहीं रहा। विश्वविद्यालय के अहाते के बीच में जो कमरे विद्यार्थियों के रहने के लिए होते हैं वहीं रहता था; इससे भला बुरा सभी देखने में आया।

अमरीकन विद्यार्थियों को कालेज में ही सच्ची देश-भक्ति और प्रतिनिधिसत्ताक राज्य की महिमा सिखाई जाती है। अपने अपने विद्यालयों से विद्यार्थियों का प्रगाढ़ प्रेम है। हर विश्वविद्यालय के प्रभावोत्पादक भजन और राग जुदा जुदा हैं, जिनको विद्यार्थी खेलों और त्योहारों के अवसर पर गाते हैं। विश्वविद्यालय में जितने ऐसे ओहदे हैं, जिनका सम्बन्ध विद्यार्थियों से है, उनका चुनाव हर साल विद्यार्थियो ही का 'वोट' के अनुसार होता है। फ़र्ज़ करो, किसी पत्रिका के लिए नया सम्पादक चुनना है, और तीन योग्य विद्यार्थी उसके अभिलाषी हैं तो उसका फ़ैसला सब विद्यार्थियों की वोट के मुताबिक़ होगा। फुटबाल का कप्तान, विद्यार्थि-समिति का मन्त्री, तथा दूसरे कार्य्याध्यक्षों का चुनाव लड़के खुदही करते हैं। बड़े होकर यही लोग देश के बड़े बड़े काम करने की योग्यता दिखाते हैं। भारतवर्ष में भी यही होना चाहिए।

हम लोगों को बहुत सी बातें अमरीका से सीखनी हैं। लोग शिकायत करते हैं कि देश में नई नई बातों का खोज निकालने वाले नहीं पैदा होते। पैदा कैसे हो सकते हैं जब

आप विद्यार्थियों को उचित शिक्षा ही नहीं देते। भारत के कालेजों में पढ़नेवाला ऐसा कौन विद्यार्थी होगा जिसके मन में अपने देश की दशा का कारण जानने की अभिलाषा न उत्पन्न होती हो। विद्यार्थियों की उठती हुई लहरों को दबाने का यत्न करना बहुत बड़ा पाप है। आओ, अपने विद्यार्थियों की दशा सुधारो; उनको अपने देश और अपनी मातृभाषा का सेवक बनाओ; उनकी शारीरिक अवस्था को उन्नत करो; और जिन बातों का जानना देशोन्नति का प्रधान साधन समझा जाता है, उन्हें सिखाने में कभी आगा पीछा न करो।

सियेटल का एक दुकानदार।

अमरीका में हर एक क़िस्म के पेशे को वैज्ञानिक ढांचा पहनाने का यत्न किया जाता है। किसी क़िस्म का काम हो, उसके स्कूल खुले हैं, जहां उक्त कामके लिए लोग तैयार किये जाते हैं। अमरीका तिजारती देश है। जो चीज़ें कला द्वारा तैयार होकर बाज़ारों में बिकने आती हैं वे कैसे जल्दी और सहज में बेची जा सकती हैं, इसके नये नये ढङ्ग हैं। जो उन ढङ्गों से वाक़िफ़ है वही अपना माल ख़ूब बेच सकता है। बड़ी बड़ी कोठियों की ओर से ऐसे ही लोग नियत रहते हैं जो दूकान, बाज़ार, देहात तथा नगरों में घूम घूम कर सौदा बेचते हैं। इनको अंग्रेज़ीमें सेलसम्यन (Salesmen) कहते हैं। अपनी भाषामें, जो दूकान पर सौदा बेचनेवाले रहते हैं उनको गुमाश्ते, और घूम कर बेचनेवालों को फेरीवाले कहना ठीक होगा। ख़ैर मेरा काम यहां पर गुमाश्तों से है। ये लोग ग्राहक को सौदा बेचने में बड़े उस्ताद होते हैं। कोई ग्राहक ख़ाली न जाय, यही इनका सिद्धान्त रहता है।

सियेटल में एक बार मैं कार्य्यवश विश्वविद्यालय से शहर गया। दो बजे दिन का समय था। काम पूरा करके मैंने सोचा कि आज फुरसत है, किसी दुकान में घूम कर 'सूट' ठीक करूं। मेरे पास एक ही सूट था जो तीन साल लगातार पहिनने से काम लायक नहीं रहा था। पास ख़रीदने को पैसा तो था नहीं,

मगर मैंने यह सोचा कि काम लायक़ एक जोड़े की क़ीमत मालूम हो जाने से रुपये का प्रबन्ध कर लूंगा। यह विचार कर मैं एक बहुत बड़ी दुकान में घुसा। इस दुकान में भी जैसा कि अमरीका के दुकानदारों का क़ायदा है, अच्छे अच्छे सूट कम क़ीमत की चिट्ठियाँ लगाकर शीशे की खिड़कियों में बाहर घूमनेवालों को फँसाने के लिये रक्खे हुए थे और असल में मैं भी बाहर से ही कम क़ीमत देख कर ख़ाली जेब ही दुकान के अन्दर घुस गया था। एक बांके रसीले ने मुझे और मेरे कपड़े देखे तो भाँप गया कि इसको सूट की सख़्त ज़रूरत है और बड़ी नम्रता से आकर मुझ से पूछा—

बांका—"आपको सूट की ज़रूरत है?"

मैं—"हां।"

बाँका—"कैसा सूट आप को दरकार है?"

मैं—"ऐसा ही काम लायक़।"

"अच्छा आइये"—कहकर वह मुझे जहां सूट रक्खे हुए थे ले गया और एक रद्दी सूट निकाल कर मुझे पहनाने लगा।

मैं—"मुझे यह सूट न चाहिए।"

बाँका—"आप पहनिए तो सही, बहुत अच्छा नफ़ीस सूट है।"

मैं—"नहीं, मुझे यह न चाहिये।"

इस पर उसने एक अच्छा सूट निकाल कर मुझे दिखाया और कहा—

बांका—"यह तो आपको ज़रूर ही पसन्द होगा। पच्चीस डालर का यह सूट है, आप को बीस में ही दे देंगे।

मैंने इस तरह के सूट बाहर के शीशों से दस डालर दाम पर लिखे देखे थे। बस उस धूर्त ने दस डालर के सूट के बीस

बताये तो मैंने दिल में सोचा कि क्यों समय खोते हो। अपने पास रुपया नहीं है और अगर हो भी तो इससे दाम न पटेगा। बेहतर है किसी जानकार के साथ आवेंगे। यह मन में सोच मैंने बाहर जाने का रुख़ किया। मगर वह बांका जवान कहां जाने देता था। वह बोला—

"आइए साहिब, आपको यह पसन्द नहीं तो दूसरा सूट दिखलाता हूं। यहां हर तरह के सूट हैं।"

उसने यह सब ऐसे ढंग से कहा कि मैं उसके साथ और सूट देखने में लग गया। जब वे सूट मेरे पसन्द न आये और मैंने उससे कहा कि मुझको जाने दो, फिर कभी आकर देखूंगा, तब वह एक अजीब तरीक़े से मुझको अपने साथ ले चला और मीठी २ बातों में उसने लगा लिया। उस समय मैंने सोचा कि आज अमरीका के फेरीवालों तथा दुकानदारों के हथकंडे देखते चलो। पैसा तो बन्दे के पास है ही नहीं। यह सोचता और बातें करता मैं उसके साथ चला ही तो गया।

उस दुकान के दूसरी तरफ़ बहुत सा माल रक्खा था, और वहां भी चालाक गुमाश्ते ग्राहकों का सिर मूड़ने में व्यस्थ थे उस बांके वीर ने मुझे एक बहुत ही निपुण बेचने वाले के सिपुर्द किया और मेरा परिचय करवा कर कहा कि इनको सूट दिखला दो। मैंने भी चित्त में कहा—"अच्छा धूर्तो! तुम मेरा भी समय खोवोगे और अपना भी।" ख़ैर वह लगा सूट दिखलाने।

उसने तरह तरह के सूट दिखलाने शुरू किये और लगा बातों में मुझे रिझाने, पर यहाँ तो जेब ही खाली थी; रीझते तो कैसे रीझते। ख़ाली जेब, कोई न कोई नुक्स सूट में निकाल

ही देते। जब वह सूट दिखाता दिखाता परेशान हो गया तब झुंझला कर बोला—

गुमाश्ता—"आपको कैसा सूट चाहिए। कुछ मुंह से भी तो कहिए।"

मैं (मुसकुराकर)—"ख़फ़ा न हूजिये हज़रत; मुझे अब जाने दीजिए। मेरी मरज़ी के लायक चीज़ मिलेगी तो दाम देकर ले लूंगा।"

गुमाश्ता—"आप मेरी नौकरी छुटाने तो यहां नहीं आये ?"

मैं (ज़रा हैरानी से)—"यह कैसे ?"

गुमाश्ता—"क्यों नही ? यदि मैं आपका सूट न बेच सका तो मेरा मालिक समझेगा कि मैं इस काम के लायक़ नहीं हूं, और मुझे निकाल देगा। (नम्रता से) आइए, आप दूसरा सूट देखिये।" फिर वह लगा सूट दिखलाने।

मैंने उससे कहा—"जिस क़िस्म का मैं सूट चाहता था वैसा सूट दस डालर के दाम का बाहर खिड़कियों में है, पर वैसे सूट के यहां तुम लोग पंद्रह और बीस डालर मांगते हो। उसने जवाब दिया—

"उस कपड़े और इस कपड़े में फ़रक़ है।"

अब फ़रक़ का झगड़ा कौन करे। जब उसने देखा कि वह मुझे कोई सूट बेच नहीं सकता, और कोई भी सूट मेरे पसन्द नहीं आता तब दूसरे दरवाज़े के पास लेजाकर मुझ से गुस्से से बोला—

"अच्छा जाइए। अगर आप जैसे दो चार ग्राहक आ जायँ तो हमारी दूकानदारी ख़ाक ही में मिल जाय।"

"मैं तो पहले ही जाता था। आप लोगों ने मेरा भी समय नष्ट किया और अपना भी।"

'सियेटल' या 'सेटल'

नियम पूर्वक बारह बजे के बाद मैं डाकख़ाने में डाक लेने गया था उस दिन कई एक चिट्ठियां आई हुई थीं। सियेटल से भी एक चिट्ठी मिली जिसका मुझे बड़ा इन्तज़ार था। उस पत्र को पढ़ कर मैंने सियेटल जाना निश्चय किया क्योंकि वहां एक बड़ा ज़रूरी काम था।

जिस कमरे में मैं रहता था मुझे उसका किराया छः रुपये साप्ताहिक देने पड़ते थे। आज शनिवार था और आज ही मेरा सप्ताह पूरा होता था। इसलिये अपने कमरे को लौट किवाड़ लगा मैं ज़रूरी चिट्ठियों का उत्तर देने में लग गया ताकि शीघ्र ही अपने काम से छुट्टी पा जाने की तैयारी करूं। मैं बैठा लिख रहा था कि किसी ने मेरा दरवाज़ा खटखटाया। मैंने कहा—

"अन्दर आइये।"

दरवाज़ा खुला और घर की मालकिन अन्दर आकर बोली—

"क्या आप दूसरे सप्ताह के लिये कमरा रखा चाहते हैं ?"

नम्रता से मैंने उत्तर दिया—

"मैं आज शाम को सियेटल जा रहा हूँ—I am going to Seattle (सेटल) this evening."

"बहुत अच्छा" यह कह कर वह रमणी धीरे से दरवाज़ा

बन्द कर नीचे चली गई और मैं फिर अपने काम में लग गया।

* * * * * *

संध्या हो गई थी। गाड़ी के जाने में घण्टा रह गया था। अपने कपड़े बेग में डाल, अपनी सब चीज़ें सम्हाल मैंने चलने की तैयारी की। हाथ में बेग और छाता ले मैं नीचे उतरा। घर की मालकिन नीचे ड्योढ़ी में खड़ी थी। जब उसने मुझे देखा तो हैरान हो बोली--

"आप कहां जा रहे हो? Where are you going?" मैंने अपनी टोपी उतार बड़े अदब से उत्तर दिया--"मैं सियेटल जा रहा हूँ--I am going to seattle." गुस्से भरे शब्दों में वह रमणी झुंझलाकर बोली--"आपने आज शाम को फ़ैसला करने को कहा था। You said you were going to seattle this evening."

अब मेरी बारी हैरान होने की थी। मैंने ज़रा ज़ोर से उत्तर दिया--

"नहीं, मैंने कहा था कि मैं आज शाम को सियेटल जाऊंगा--No. I said, I was going to Seattle this evening."

मेरा रास्ता घेर वह रमणी खड़ी होगई और बोली-"आप अपने आपको बड़ा होशियार समझते हैं, परन्तु आप मुझे बेवक़ूफ़ नहीं बना सक्ते--You think you are very smart, but you cant' fool me." मैंने नम्रता से उत्तर दिया—

"क्षमा कीजिये, देवी! मेरा हरगिज़ इरादा आपको धोखा देने का नहीं था। यह भूल केवल मेरे विदेशी उच्चारण के होने के कारण हुई बोध होती है--Pardon me, Lady! I did

not mean to deceive you. I think it is my foreign accent which gave you wrong impression." उस रमणी का क्रोध कुछ शान्त हुआ और वह पीछे हटकर बोली-

"आप से मुझे डेढ़ रूपया वसूल करना था। मगर अब मैं जाने देती हूँ। क्योंकि आप एक अजनबी पुरुष हैं, आप 'सियेटल' को 'सेटल' कह सक्ते हैं।"

उस स्त्री से जान छुड़ा मैं बाहर आया, और सारा रास्ता 'सियेटल' और 'सेटल' की दिल्लगी पर हँसता रहा।

न्यूयार्क नगरी में वीर गैरीवाल्डी।

"There is around the name of Garivaldi a halo which nothing can extinguish. A whole life devoted to one object—his country; consecrated by deeds of honor first abroad. and then at home; valor and constancy more than admirable; simplicity of life and manners which recalls the man of antiquity; all the most mournful trials and losses manfully endured; glory and poverty! Every particular relating to such a man is precious" Mazzini.

वह पुरुष इस संसार में धन्य है जिसको जाति और देशोन्नति की लगन हो। कौन ऐसा है जो मृत्यु के मुख से बच सकता है? कौन ऐसा है जिसको सारा सांसारिक ऐश्वर्य्य नहीं छोड़ जाना है? कौन ऐसा है जो यहाँ सदा बैठा रहेगा? एक न एक दिन हम सब को एक ही मार्ग से जाना है। इस क्षणभंगुर संसार में उस पुरुष का जीवन धन्य है जिसने अपना सर्वस्व जाति की उन्नति में लगाया हो। ऐसा पुरुष अपने जीवन ही का यथा योग्य उपयोग नहीं करता वह औरों को भी अपने पथ का अनुसरण करने के लिए आह्वान करता है। उसके जीवन में एक अद्भुत शक्ति आ जाती है। उसके मुंहसे निकले हुए शब्द मुर्दा दिलोंमें भी जान डाल देते हैं! उसका नाम पावन करने वाला हो जाताहै। उसके जीवन की घटनायें शिक्षा-प्रद हो जाती हैं। उसका यश अपने ही

देश में नहीं, द्वीप द्वीपान्तरों तक में फैल जाता है। वह मनुष्य मात्र के सम्मान का भाजन बन जाता है। सारा संसार ऐसे पुरुष का हृदय से अभिनन्दन करता है। जहां जहां वह जाता है, जहां जहां वह रहता है, वे स्थान उसके स्पर्श से पवित्र हो जाते हैं। जिन मनुष्यों के साथ वह ज़रा भी वार्तालाप करता है वे भी उसके संग से तर जाते हैं।

ओहो! देश की सेवा की बड़ी विचित्र महिमा है! फिर ऐसे देश की सेवा और ऐसी जाति के उद्धार की चेष्टा क्यों न पुण्यकारिणी होगी जो देश और जो जाति किसी काल में गौरवान्वित रही हो; जिस देश में प्रकृति ने अपना पूरा सौन्दर्य्य दिखाया हो; जहां के पर्वत, नदियां, स्रोत, वृक्ष देश की श्रेष्ठता का प्रमाण हों। जिस देश की रत्ती रत्ती ज़मीन महात्माओं के रक्तपात से सिञ्चित हुई हो! ऐसे पुण्यशाली देश में उत्पन्न होकर भी जो मनुष्य उसकी अधःपतित अवस्था के सुधारने में तन, मन, धन नहीं समर्पण कर देता उसका जीवन मातृभूमि के लिए व्यर्थ बोझा है।

हमारे पाठकों में से बहुतों ने प्रसिद्ध पञ्जाबी "लीडर" लाजपतरायजी लिखित महात्मा गैरीवाल्डी का जीवन-चरित पढ़ा होगा। जिन्होंने नहीं पढ़ा उनसे हम निवेदन करते हैं कि वे उसे अवश्य पढ़ें। उस जीवनी में विद्वान् लेखक ने रोचक और सुललित भाषा में महात्मा गैरीवाल्डी के देशहित की गाथा गाई है। मातृभूमि की सेवामें उस वीर ने क्या क्या कष्ट उठाये और किस प्रकार उसके उद्धार की चेष्टा की, इसका सविस्तार वर्णन उसमें है। आज हम अपने पाठकों को वीर गैरीवाल्डी के जीवन के उस अंश का हाल सुनाते हैं

जो उन्होंने अमेरिका में व्यतीत किया था। पाठक देखें कि स्वदेश-प्रेम की महिमा कैसी अद्भुत होती है।

अमरीका के प्रधान नगर न्यूयार्क में क्लीफ्टन स्टेटन-आइलेंड (Clifton Staten Island) नामी एक मुहल्लेकी एक तंग गलीमें एक घर है। उसमें इस समय कोई नहीं रहता। उसके दरवाजे पर संगमरमर की पटिया पर ये शब्द खुदे हैं—

Qui Visse Esule Dal 1851 Al. 1853
Ginseppe Garivaldi
L' Erœ Due Mondi
8 Marzo 1884 Alcuni Amici Posero.

यह मकान बनावट में बहुत साधारण है परन्तु इसमें एक अद्भुत आकर्षण-शक्ति है। कोई पचास साठ साल से इटली और योरप के भिन्न भिन्न भागों से यात्री लोग यह मकान देखने आते हैं। यहां महात्मा गैरीवाल्डी ने अपने जीवन के कुछ दिन काटे थे। अतएव उस पवित्रात्मा के स्पर्श से यह घर देवालय बन गया है। न्यूयार्क की अभ्रङ्कषा अट्टालिकायें, भव्य भवन, आश्चर्यजनक बिजली के आविष्कार, यात्रियों का ध्यान नहीं खींचते, पर यह बेढंगासा घर उनके मन को मोह लेता है।

गैरीवाल्डी की प्रतिष्ठा और सम्मान केवल योरपवासी ही नहीं करते, किन्तु अमरीका निवासी भी उनको पूज्य समझते हैं। उनको "Hero of the Two Worlds" अर्थात् नई और पुरानी दोनों दुनियाओं का वीर कहते हैं। २३ अगस्त १८८८ को अमरीका की राजधानी वाशिंगटन में जो जलसा, गैरीवाल्डी की मूर्त्ति सर्वसाधारण को समर्पण करने के उपलक्ष में, हुआ था उसमें यहां के संयुक्त राज्यों की सेनेट के सभ्य एवेर्टस, ने कहा था—

"गैरीवाल्डी दो वर्ष तक न्यूयार्कमें रहे। वहीं उनका परिचय अमरीकन लोगों से हुआ। वे अपने शुद्धाचरण के कारण उस समय भी सब के आदरपात्र थे। यद्यपि तब तक कोई ख़ास काम उन्होंने नहीं किया था, तथापि अधिकांश लोगों को पूर्ण आशा थी कि वे इटली के उद्धार के लिए अवश्य ही सिरतोड़ कोशिश करेंगे। आज वह बात सच निकली। आज गैरीवाल्डी का नाम, उनका पवित्र यश, संसार में सब कहीं फैल रहा है और जब तक देशहित और स्वतन्त्रता के उच्च आदर्श मनुष्यों के हृदयों में अङ्कित रहेंगे, गैरीवाल्डी का नाम भी संसार में बना रहेगा!

१८५० का साल गैरीवाल्डी* के जीवन में बहुत ही शोचनीय था। वे इटली के निवासी थे। १८४८ में इटली की

गैरीवाल्डी ४ जुलाई १८०७ के इटली के नाइस (Nice) नगर में उत्पन्न हुए। पहले पहल इटाली के जंगी जहाज़ों पर इन्होंने काम किया। १८३४ में देशहितैषी मेज़िनी की गुप्त सभा (Young Italy) के ये मेम्बर हुए। इटलीकी गवर्नमेंट ने जब देशहितैपियों के कैद करना आरम्भ किया तब गैरीवाल्डी दक्षिणी अमेरिका में भाग आये। वहां राओों ग्रांडे (Rio Grand do Sul) प्रजासत्ताक राज्यकी सेवा करते रहे। १८४८ में फिर इटली गये और अचिरस्थायी रोम के प्रजासत्ताक राज्य की रक्षा के लिए लड़ते रहे। १८५० में फिर जिलावतनी की दशा में न्यूयार्क आये। १८५४ में फिर इटली वापिस गये और सपरेरा द्वीप में रहने लगे। १८६१ में सारडीनिया और फ्रांस ने जो आस्ट्रिया से युद्ध किया था उसमें सेनापति होकर ये लड़ते रहे। १८६० में इन्होंने सिसिली पर धावा करके नेपल्स नगर लिया। १८६१ में फिर सपरेरा चले गये। १८६२ में इन्होंने रोम के विरुद्ध चढ़ाई की, परन्तु इनकी हार हुई। १८६६ में इन्होंने आस्ट्रिया के विरुद्ध युद्धकिया। १८६७ में पोप (रोमन केथोलिक क्रिश्चिनियों के गुरु) के अन्यायों के दूर करनेका यत्न किया, परन्तु सफलता न हुई। १८७०में

रक्षा के लिए जो युद्ध उन्होंने किया था, उसमें वे कृतकार्य न हुए। बारह वर्ष तक दक्षिणी अमरीका के पारस्परिक युद्ध में यशो लाभ करने के बाद अपने देश के शत्रुओं से परास्त होना इनके लिए बहुत ही असह्य था। परन्तु इस बीर ने हिम्मत नहीं हारी! आस्ट्रिया की विजयी सेना का छोटे छोटे युद्ध करके इन्होंने नाकों दम कर दिया। इनकी धर्म-पत्नी अनीता (Anita) प्रत्येक युद्ध में पति के साथ रही और अन्त को रेवेना की दलदल में उस वीरांगना का प्राणान्त हुआ।

गैरीवाल्डी इटली से भाग कर, १८५० के जून में न्यूयार्क पहुंचे। न्यूयार्क में उस समय आस्ट्रिया, नेपल्स, रोम आदि देशोंके बहुत से सज्जन भागकर आये थे; स्वतन्त्रता की आग उन देशों में प्रज्वलित हो चुकी थी। स्वार्थी राजा उसके बुझाने में अपना सारा बल लगा रहे थे, पर आज़ादी के सच्चे सेवक अपना तन, मन, धन अर्पण करके उसकी रक्षा में मग्न थे। सो न्यूयार्क में गैरीवाल्डी को बहुत से मित्र मिल गये। उनमें से एक का नाम मिकल पेसकाल्डी था। गैरीवाल्डी उसी के यहां ठहरे।

उसी के यहाँ इनकी थियोडोर ड्वाइट से भेंट हुई, जिस को गैरीवाल्डी ने अपने जीवन की घटनाओं का सारा हाल बतलाया और तत्सम्बन्धी कागज़ पत्र भी दिये। गैरीवाल्डी की अवस्था इस समय ४३ वर्ष की थी। शरीर इनका बहुत

फ्रांसके अधीन होकर प्रुशियासे लड़े। १८७१में फ्रांसीसी "डिपुटीचेम्बर" के पद पर चुने गये। १८७४ में इटली की पार्लीमेंट में दाखिल हुए और बहुत से सुधार के कार्य्य किये। १८८२ के जून की दूसरी तारीख़ को सपरेरी में इनका देहान्त हुआ। लेखक

मज़बूत था। दक्षिणी अमरीका में इतना शारीरिक श्रम और कष्ट उठाने पर भी इनका शरीर आरोग्य नवयुवकों के समान था। थियोडोर ड्वाइट से इन्होंने कह दिया था कि अपने जीवन का जो वृत्तान्त मैंने तुम से कहा है उसकी सहायता से मेरी जीवनी अभी मत प्रकाशित करना, किन्तु किसी सुअवसर की प्रतीक्षा करना। वह सुअवसर नौ वर्ष बाद आया, जब गैरीवाल्डी ने पल्पी के युद्ध में अपना वीरत्व, देशप्रेम और युद्ध कला-कौशल दिखाकर संसार को चकित किया।

थोड़े रोज़ बाद गैरीवाल्डी ने क्लिफ्टन मोहल्ले में रहने का प्रबन्ध किया। रहने का ठीक ठाक हो जाने पर एक दिन उनके पास बहुत से मित्र बैठे थे। उन्होंने कहा—

"Here we are, a colony of Italian exiles, with nothing to do but talk. Now, our talk is never going to free Italy. It is this, striking out a herculean blow from the shoulder. We must await our opportunity, and, in the mean time, get to work."

"देखिए, यहां पर कितने ही जिलावतन इटली-निवासी बैठे हैं जिनका काम सिवा बातों के और कुछ नहीं। पर ख़ाली बातों से इटली स्वतन्त्र न होगी। यही (अपना भीमसेनी मुक्का दिखलाकर) कुछ करेगा। हमें मौके का इन्तज़ार करना चाहिये और तब तक कुछ काम करते रहना चाहिये।"

किसी प्रकार का काम हो, गैरीवाल्डी उसे करने को उद्यत थे। काहिली और सुस्ती से उन्हें घृणा थी। अपने मित्र मिओकी की सलाह से इन्होंने एक छोटा सा कारख़ाना खोला, जहां पर देशहितैषी सज्जन मज़दूरों की तरह काम करते थे

और दुःखी, निर्धन लोगों को अपने व्यवसाय से सहायता करते थे।

इस कारख़ाने से काफ़ी आमदनी न होती देख गैरीवाल्डी ने बत्ती बनाने का एक कारख़ाना खोला। उसमें गैरीवाल्डी साधारण मज़दूर की तरह काम करते थे। वे मज़दूर होकर ऐसा नहीं करते थे, किन्तु एक उत्तम उदाहरण सिखाने से तात्पर्य्य था। दूसरे लोग जब अपने नेता को मज़दूरी का काम करते देखते थे तब वे भी बड़े उत्साह से कठिन से कठिन मेहनत मज़दूरी से न घबड़ाते थे। इन्हीं गुणों से गैरीवाल्डी सर्वप्रिय हो गये थे।

यद्यपि गैरीवाल्डी एक बहुत ही नामालूम दशा में रहते थे, और इनका मकान भी एक वेआबाद से मुहल्ले में था, तथापि इनके सञ्चित पुण्य की सुगन्ध न्यूयार्क नगर में चारों तरफ़ फैल गई। शहर के बड़े बड़े धनाढ्य और प्रसिद्ध पुरुषों ने आपके सम्मानार्थ एक बड़ा जलसा करने की इच्छा प्रकट की और आपको न्योता भेजा। महात्मा गैरीवाल्डी ने बड़े नम्रभाव से उनको उत्तर दिया। पहिले उनकी इस उदारता का धन्यवाद करके अन्त में आपने कहा—

"यद्यपि सर्व साधारण के सामने आप लोगों का प्रेम प्रकट करना मेरे लिए अति उत्साह बर्द्धक होगा, क्योंकि मैं अपने देश से निकाला हुआ, बाल बच्चों से जुदा, अपने देश इटली की स्वतन्त्रता नष्ट होने के दुख में ग्रस्त हूं; परन्तु आप विश्वास कीजिये कि मैं इस सार्वजनिक प्रतिष्ठा के बिना ही प्रसन्न हूँ। मेहनत मज़दूरी से पेट भर कर इस इतने बड़े प्रजा-सत्ताक राज्य अमरीका का निवासी होना ही मेरे लिए क्या कम गौरव का काम है? मैं अमरीका के झण्डे के नीचे

रह कर इसकी सेवा करता हुआ अपना पेट भरूंगा और अपने प्यारे देश को उसके अन्दरूनी और बेरूनी शत्रुओं से मुक्त करने के लिए शुभ अवसर की प्रतीक्षा करता रहूंगा।"

क्लिफ्टन वाले घर में गैरीबाल्डी अपना सार समय बत्ती के काम में ही ख़र्च नहीं करते थे, किन्तु फुरसत मिलने पर अपने जीवन की घटनाओं को इतिहास के रूप में लिखते भी जाते थे। अपनी स्त्री के विषय में आप लिखते हैं—

She was my constant companion, in good and evil fortune, sharing my greatest perils, and surpassing the bravest of the brave.

मेरी स्त्री निरन्तर मेरे साथ रही, अच्छे भी दिनों में और बुरे भी दिनों में। मेरे बड़े बड़े दुःखों में वह शामिल रही और वीर से वीर पुरुष से भी वढ़ कर उसने काम किये।

अपने बहुत से वीर मित्रों के चरित इन्होंने अपने हाथ से लिखे। दक्षिण अमरीक में जिन जिन के साथ इनको काम करने का अवसर आया और जिन जिन ने स्वतंत्रता के पौधे को सींचने में यत्न किया, उनकी कथा गैरीबाल्डी ने अपने पवित्र हाथों से लिखी।

जिस तरह न्यूयार्क में इनके दिन कटे उसका ब्यौरा अपने लेखों में इन्होंने स्पष्ट रूप से दिया है। उन्हें पढ़ने से मालूम होता है कि महान् होने तथा सफलता प्राप्त करने के लिए किन गुणों की ज़रूरत होती है। एक बार बहुत तङ्गदस्ती की हालत में, जब इनको न्यूयार्क आये थोड़े ही दिन हुए थे और अङ्गरेज़ी के कुछ ही शब्द इन्होंने सीखे थे, ये नौकरी

की तलाश में स्टेटन द्वीप के बन्दरगाह पर गये और कई जहाज़ों पर ख़लासी की नौकरी पाने का उद्योग किया। अंग्रेज़ी तो जानते नहीं थे, केवल "Help! Help !!"—"मदद कीजिए, मदद कीजिए"—कहकर अपना अभिप्राय प्रकाशित करते थे। उद्दण्ड जहाजियों ने इन्हें भिखमंगा समझकर इनकी ख़ूब दिल्लगी की। अन्त को सारा दिन हैरान होकर गैरीवाल्डी निराश घर लौट आये। याद रहे, ब्रेज़ील के प्रजा-सत्ताक राज्य के जंगी जहाज़ों पर ये कप्तान का काम कर चुके थे!

एक समय डोङ्गन की पहाड़ियों में शिकार खेलते हुए अज्ञान-वश, किसी गांव के नियमभंग करने के जुर्म में इनको पुलिस ने गिरफ़्तार कर लिया। जब आप मैजिस्ट्रेट के सामने लाये गये, और मैजिस्ट्रेट को मालूम हुआ कि वह वीर गैरी-वाल्डी है, तब ये तत्काल ही छोड़ दिये गये। उस समय अपने मित्रों से, जो इनकी गिरफ़्तारी पर बड़े क्रुध थे इन्होंने शांति पूर्वक कहा—

"No. frinds, these officers of the law have done nothing more than their duty, and I deserved the correction. The Americans make and enforce the laws proper to the regulation of their own communities, just as we hope, some day, to do with ours in italy"

"नहीं मित्र इन अफ़सरों ने केवल अपना कर्त्तव्य पालन किया है। मेरी भूल का संशोधन उचित था। अमरीका-निवासी अपने समाज की रक्षा के लिए उचित नियम बनाते हैं और उनका पालन करवाते हैं। ठीक इस तरह हमें भी, आशा है हम इटली में करेंगे।" उनकी यह आशा सफल हुई।

परपददलित इटली देश इनकी सहायता, साहस, स्वदेशप्रेम और अध्यवसाय के कारण स्वतन्त्र हो गया।

गैरीवाल्डी इटली में फ़्रीमेसन सोसाइटी के मेम्बर थे। जब आप न्यूयार्क आये तब वहां भी उस सभा के मेम्बर हुए। आज यह सभा इस बात का फ़ख़्र करती है कि गैरीवाल्डी उसके सभ्य थे। इस सभा के पास गैरीवाल्डी के स्मारक बहुत से चिन्ह हैं उनमें से एक "लाल कमीज़" भी है। उसे पहन कर गैरीवाल्डी ने, १८४६ में रोम पर धावा किया था। इस कमीज़ की कथा इस प्रकार है—

गैरीवाल्डी को मांगने से सदा घृणा थी। आप सदा निर्धन ही रहे। क्योंकि जिसे आप दुखी देखते उसकी सेवा अपने कपड़े लत्ते तक बेच कर करते थे। एक दिन वे अपने मकान पर देश से निकाले हुए एक इटालियन को लाये। वह गैरीवाल्डी से भी निर्धन था। उसे देखकर गैरीवाल्डी ने कहा—"मेरे पास दो कमीज़ें हैं, आप के पास एक भी नहीं सो मैं एक आपको देना चाहता हूँ"। परन्तु गैरीवाल्डी की दो कमीज़ों में से एक धोबी के गई हुई थी, इस लिए यदि वे अपनी कमीज़, जो उन्होंने पहन रक्खी थी, उतार कर निर्धन इटालियन को दे देते तो आपको नङ्गे रहना पड़ता। इस पर सोचते सोचते इन्होंने कहा "काम बन गया; मेरे ट्रङ्क में एक लाल कमीज़ है जिसको मैंने रोम के धावे के बाद फिर नहीं पहिना।" इनका मित्र मियोकी, जो वहां उपस्थित था, बोला—"मैं अपनी कमीज़ इसे दिये देता हूं। आप वह लाल कमीज़ मुझे दे दीजिए।" मियोकी ने उस लाल कमीज़ को अपने मित्र के वीरत्व-गुणों की निशानी मान-कर सँभाल कर रखा और मरते दम तक उसको जान से

प्यारा समझा। जब मियोकी मर गया तब वह कमीज़ और गैरीवाल्डी की दूसरी चीज़ें "फ्रीमेसन" सभा के हाथ आईं और अब तक सभा के अधिकार में हैं।

ब्राडवे, न्यूयार्क, की फ़लटन नामक गली में एक पुराने फैशन के मकान के दरवाज़े पर अब भी एक बहुत पुराना बोर्ड लोरेंज़ो वेनचूरा के नाम से लगा है। यहां पुरानी पुरानी चीज़ों और प्राचीन पुस्तकों का संग्रह है। संगमरमर की एक गोल मेज़ भी है। सुनते हैं कि उस पर बैठ कर गैरीवाल्डी अपने मित्रों से वार्तालाप किया करते थे। वेनचूरा बहुत उदारचरित पुरुष था; पराधीन देशों के स्वाधीन बनाने में वह यथाशक्ति सहायता करता था। यहीं पर गैरीवाल्डी की भेंट एन्डरसन तमाखू वाले से हुई, जिसने इटली को स्वाधीन बनाने में धन से सहायता की थी।

इस समय क्यूबा टापू का झगड़ा शुरू था। एंडरसन और मियोकी हवाना गये। वहां जाकर क्यूबा की राजनैतिक अवस्था को अच्छी प्रकार देखा भाला। इन्हीं मित्रों के द्वारा गैरीबाल्डी को क्यूबा के स्वतन्त्रता-सम्बन्धी प्रश्नों पर विचार करने का अवसर मिला। गैरीवाल्डी को क्यूबावालों से बड़ी सहानुभूति थी। जब उनके मित्रों ने क्यूबानिवासियों की अस्त्र-शस्त्र से हीन अवस्था का वर्णन किया और कहा कि बिना हथियारों के वे बेचारे क्या कर सकते हैं, तब महात्मा गैरीवाल्डी ने कहा—

" Un valorososa sempre trovare un arme."

अर्थात् वीर पुरुष को सदैव हथियार मिल सकते हैं।

१८५१ में गैरीवाल्डी अपने मित्र कारपनितो के साथ सन जारजिओ नामी एक छोटे से तिजारती जहाज़ पर नौकरी

करके मध्य अमरीका गये। क्यूबा जाकर इन्होंने अपना नाम बदल डाला और क्यूबा की स्वतन्त्रता के निमित्त यत्न करते रहे। वहां से चीन की ओर आये और १० मई १८५३ को इटली के जिनोआ नगर में पहुंचे। मातृभूमि की सेवा करते हुए, स्वतन्त्रता के पवित्र सिद्धान्त की रक्षा में इन्होंने अपनी सारी उम्र व्यतीत की। अन्त में इटली को स्वाधीन बनाने की यथाशक्ति चेष्टा करके दूसरी जून १८८२ को ये परमपिता की गोद में पधारे।

आहा! ऐसी आत्माओं का कैसा उत्तम जीवन है! क्या ही उच्चशिक्षा ऐसे जीवनों से मिलती है देशहित के लिए संसार के सुखों को तुच्छ समझना; धन, मान, ऐश्वर्य्य पर लात मार कर, निष्काम भाव से, मातृभूमि की सेवा करना; उसके उद्धार के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर देना; यही उद्देश्य जिन पुरुषों का है हम उनको झुक कर नमस्कार करते हैं। यही ऋषियों का बतलाया हुआ सच्चा वैराग्य है। इसी की महिमा भगवान कृष्ण ने गीता में गाई है। हम आज स्वार्थ में पड़े हुए, थोड़े थोड़े लोभ में आकर विश्वासघात करते हैं। मातृभूमि की सेवा करना तो कहां, उसी की हत्या करने पर कमर कस लेते हैं। छोटे छोटे वैर-विरोधों में फँस कर, तुच्छ तग़मों के भूखे एक दूसरे का गला काटने पर उद्यत हो जाते हैं। क्या हमारा ऐसा जीवन, जीवन कहला सकता है? हमें चाहिए कि हम महात्मा गैरीबाल्डी से स्वदेशप्रेम सीखें और यथाशक्ति अपने देश को उन्नत करने की चेष्टा करें।

मिस पारकर का स्कूल ।

आज बादल घिरे हुए थे। शीत की अधिकता न थी। मिस पारकर से मैंने पिछली रात उनका 'किण्डरगारटन' स्कूल देखने का वादा किया था। मगर अन्य बातों में फँसे रहने के कारण मैं अपना वादा भूल गया। कमरे में बैठा एक पुस्तक 'India and Her People' पढ़ रहा था कि स्वामी बोधानन्दजी ने आकर मुझ से कहा—

"क्यों, 'किन्डरगारटन' स्कूल देखने नहीं जाओगे ?"

"सचमुच ! मैं तो वहां जाना भूल ही गया था। कहिये क्या वक़्त है ?"

"दस से ऊपर हो चुके हैं।"

क्योंकि वादा नौ बजे जाने का था इसलिये मैं झटपट कपड़े पहिन मिस पारकर का स्कूल देखने चला।

मिस पारकर एक बहुत ही सुशिक्षिता देवी हैं। आयु आप की कोई छत्तीस वर्ष की होगी—अच्छा लम्बा क़द—चेहरा देखने से फ़ौरन ही मालूम हो जाता है कि देवी अधिक विद्यारसिक है। अधिक विद्याभ्यास से शरीर में कृशता आ गई है, मगर बुद्धि के जौहर वार्तालाप से ही खुलते हैं। भारत के प्राचीन धर्म पर आपकी बड़ी श्रद्धा है, और जब जब कोई भारतीय सज्जन नगर में पधारते हैं आप अवश्य ही उनसे परिचय कर धार्मिक विषयों की बातें पूछती हैं।

इसी धार्मिक संलग्न के कारण आपका परिचय मुझ से हुआ और मुझसे आपने अपना स्कूल मुलाहज़ा करने की इच्छा प्रकट की, जिसको मैंने सहष स्वीकार किया। आज उसी स्कूल को देखने चला था।

स्कूल-द्वार पर पहुंच मैंने बटन दबाया और अन्दरवालों को आगन्तुक की खबर लग गई। एक युवा रमणी ने द्वार खोला। मैंने अपना परिचय दिया और देवी ने सप्रेम मुझे अन्दर ले जा कुरसी दी और आप मिस पारकर को बुलाने गई।

"अच्छा, आप आ गये!" मिस पारकर ने मुस्करा कर अगवानी की।

"देर से आने की क्षमा मांगता हूँ।" मैंने कुछ लज्जित हो कर उत्तर दिया।

"इसकी कोई बात नहीं, पर आप अधिक देख न सकेंगे। क्योंकि दिलचस्प विषयों के घण्टे पूरे हो चुके हैं। अच्छा आइये कुछ तो देखिये।"

मैं अधिष्ठात्री मिस पारकर के साथ साथ हो लिया।

साथ के कमरे में जाकर हम और मिस पारकर एक ओर कुर्सियों पर बैठ गये। एक अध्यापिका छोटे स्टूल पर बैठी हुई थी और बोस के क़रीब बालक बालिकायें उसके सामने ज़मीन पर घेरा बांधे बैठी हुई थीं। कमरे का फर्श लकड़ी का था जिस पर गर्द, मट्टी का नाम नहीं था। अध्यापिका इन नन्हे नन्हे बालक बालिकाओं को क्या पढ़ा रही थी? धैर्य कीजिये पाठक, मैं आप को बताये देता हूँ।

इन किन्डरगारटन के विद्यार्थियों के सामने की दीवार पर एक बड़ा रंगोला सा चित्र टँगा था। यह चित्र एक

देशहितैषी नवयुवक सिपाही का था, जो घोड़े पर सवार हाथ में अमेरिका (यूनाइटेड स्टेट्ज़) का झंडा लिये अपने प्राण प्यारे देश के लिये स्वाहा होने को युद्ध भूमि में जा रहा था। देश की नारियां-मातायें-रूमाल हिला हिला उसका उत्साह बढ़ा रही थीं।

उस चित्र को देख मेरे अश्रुपात होने लगा। राजपुताने की पवित्र भूमि के दृश्य एक एक कर के मेरी आंखों के सामने फिर गये। भारत सन्तान की प्राचीन शिक्षा प्रणाली का गौरव मेरे सामने आगया। फिर आधुनिक शिक्षा प्रणाली का नज़ारा मेरे सामने आया—दिल नदी की भाँति उमड़ा, पर मैंने अपने आपको थामा। रूमाल से आंखें पोंछ डालीं। मेरे चश्मे ने मुझे सहायता दी, और दिलके भाव दिल ही में लीन हो गये।

"यह सामने की दीवार पर किसका चित्र है ?" अध्यापिका ने एक बालक से पूछा।

"यह सवार की तस्वीर है।"

अध्यापिका (दूसरे बालक से)—'सवार के हाथ में क्या है ?"

बालक—"झंडा है।"

अध्यापिका (एक बालिका से)—"किसका झंडा है ?"

बालिका—"हमारे देश का।"

अध्यापिका—"वह सवार कौन है ?"

बालिका कुछ देर चुप रही। झट एक दूसरा बालक बोल उठा—"यह सिपाही है, जो युद्ध के हेतु जा रहा है।"

अध्यापिका (दूसरी बालिका से)—"चित्र में क्या कुछ और भी है।"

बालिका—"बहुत से आदमी औरतें हैं।"

अध्यापिका—"वे क्या करते हैं?"

बालिका—"रूमाल हिला रहे हैं।"

अध्यापिका (अन्य बालक से) "क्यों रूमाल हिलाते हैं?"

बालक चुप रहा; अध्यापिका ने फिर सब बालकों से पूछा—

"कोई बतलावे, क्यों ये नर नारी रूमाल हिला रहे हैं?"

उस अध्यापिका ने जब अपने नन्हे विद्यार्थियों को चुप देखा तो उनको एक देशहित भरा उपदेश दिया—

"प्यारे बच्चो! यह सिपाही देशहितैषी नवयुवक है जो अपनी मातृभूमि को सब से श्रेष्ठ समझता है। उसके लिये यह सब कुछ देने को उद्यत है। मातृभूमि की रक्षा के हेतु अपने देश के शत्रुओं से युद्ध करने के लिये रणभूमि में जाने को तैय्यार है। इसके हाथ में अपने देश का परमपूज्य झंडा है—यह झंडा सारी अमरीकन जाति का कीर्ति स्तम्भ है। जब तक यह खड़ा लहराता है, अमरीकन जाति आज़ाद है। इसके गिरने से देश का पतन है। इस लिये इस झंडे की रक्षा देश के प्रत्येक सच्चे पुत्र पर लाज़मी है। इस नवयुवक सिपाही ने प्राण-पर्य्यन्त इस झंडे की रक्षा करने की शपथ खाई है। देश की रमणियां मातायें, भगनियां, इसको आशीर्वाद देती हैं, और रूमाल हिला हिला उसका उत्साह बढ़ा रही हैं।"

उन बालक बालिकाओं ने अपनी अध्यापिका के उपदेश को बड़े ध्यान से सुना। कुछ देर सभी चुप रहे। तब अध्यापिका ने विद्यार्थियों को सम्बोधित कर कहा—

"आओ, सब लोग युद्ध-नाटक रचें।"

यह एक देखने योग्य दृश्य था। टाड राजस्थान में जिन दृश्यों के वर्णन पढ़ स्वप्न देखा करता था, आज वह सामने दिखाई दिया।

सब बालक बालिकायें एक घेरे में खड़े थे। एक बालक उनका अग्रसर अफ़सर चुना गया। वह घेरे के मध्य में खड़ा था। उसके हाथ में बहुत सी झण्डियां थीं। अपनी इच्छानुसार वह घेरे में से एक बालक, बालिका को बुलाता था। आने वाला पहिले बालक अफ़सर को प्रणाम करता और बाद में अफ़सर उसको एक झण्डी दे अपनी रजमेण्ट का सिपाही चुनता था। इस प्रकार रजमेण्ट बनी, जिसमें दस सिपाही थे और ग्यारहवां अफ़सर। बाक़ी सब विद्यार्थी दर्शकों के तौर पर उनको घेर कर खड़े हो गये। अब रजमेण्ट युद्ध हेतु चली।

दर्शक लोग अध्यापिका के साथ रूमाल हिलाते हुये यह गीत गाने लगे—

प्रश्न।

Soldier boy ! Soldier boy !
Where are you going ?
Bearing so proudly,
The red, white and blue:

हिन्दी (कविता)।

कहां चले, ओ ? सुभट बालगण वीर हृदय गरबीले !
झण्डे लिये हाथ में अपने, श्वेत लाल औ नीले॥*

*यूनाइटेड-स्टेटज़-अमरीका के राष्ट्रीय झण्डे का रङ्ग लाल श्वेत और वैंगनी है—लेखक।

उत्तर।

I go where my country,
My duty is calling,
If you would be a soldier boy,
You may come too.

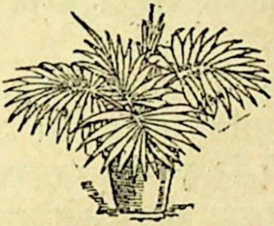
हिन्दी (कविता)।

हम जाते हैं युद्धस्थल को देश काज हित भाई।
चल सकते हो तुम सब भी यदि बनना चहो सिपाही॥

आहा! क्या ही सुन्दर दृश्य था।

....

थोड़ी देर बाद खेल पूरा हो गया। मिस पारकर से छुट्टी ले मैं अपने स्थान पर गया।



अब्राहम लिंकन की शतवर्षी

बारह फ़रवरी, १६०६ शुक्रवार के दिन अमरीका-निवासियों ने अपने पूज्य पुरुष अब्राहम लिङ्कन का शताब्दिक जन्मोत्सव मनाया। यूनाइटेड स्टेट्ज़ की सभी रियासतों में उस दिन धर्मात्मा लिङ्कन का यश गाया गया। यही नहीं, बल्कि संसार के जिस जिस भाग में अमरीकन लोग कार्य्यवशात् गये हुये हैं, वहां भी उन्होंने अपने इस देश भूषण के जन्म की ख़ुशियां मनाईं और उसके जीवन को अपना आदर्श मान उससे लाभ उठाने का प्रण किया। यहां पर यह प्रश्न होता है कि इस महात्मा में ऐसे कौन से गुण थे जिनके कारण उसके देशवासी उसे इतनी पूज्य दृष्टि से देखते हैं। कौन से कारण हैं जो इस धर्मात्मा की ख्याति को प्रति दिन बढ़ा रहे हैं। इस बात का संक्षिप्त वर्णन करना हम यहां पर उचित समझते हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण जी ने गीता में कहा है कि जब मनुष्य-समाज में धर्म की ग्लानि होती है और जन समुदाय अपनी शक्ति से अपने दुःखों को दूर नहीं कर सकता, तब तब समाज की उलझनों को सुलझाने और उन्नति का मार्ग साफ़ करने के लिये महात्मा जन्म लेते हैं और मनुष्यों का दुःख दूर करते हैं। सभी जातियों पर ऐसी विपद पड़ती रही है और पड़ती रहेगी। अमरीका वालों पर ऐसी विपद १८५८ में पड़ी थी। वह विपद क्या थी, इसको भी संक्षेप में कहे देते हैं।

सत्रहवीं सदी के आरम्भ में यूरोपियन लोग अपने अपने देशों से आकर उत्तरी अमरीका में बस्तियां बनाने लगे। अमरीका जंगली देश था, इसलिए उन लोगों को, जंगल साफ़ करने और दूसरे कामों के लिए, मज़दूरों की सख़्त ज़रूरत पड़ी। मज़दूर कहां से आवें? वहां तो सभी ज़मीदार थे, अतएव अमरीकावालों की इस ज़रूरत को पूरा करने और धन कमाने के लिए पुर्तगालवालों ने अफ़्रीका से हब्शी लाकर बेचने का ठेका लिया। धीरे धीरे यह व्यापार अङ्गरेज़ लोगों के हाथ में आया। हज़ारों निरपराध हब्शी हर साल भेड़ बकरियों की तरह बिकने लगे। नई दुनियां के मनुष्य-समाज की भावी विपद के बीज इसी समय बोये गये।

१७७८ में जब उत्तरी अमरीका की तेरह बस्तियों ने स्वतन्त्रता का झण्डा बुलन्द किया और—"मनुष्य मात्र ईश्वर की दृष्टि में सम हैं"—इस सिद्धान्त की सारे संसार में घोषणा दी, तब योरप की सभ्यता में एक नया परिवर्तन हुआ। यद्यपि फ्रांस के रत्न रूसों ने इसका प्रचार पहले से ही किया था, तथापि वे केवल ज़बानी बातें थीं। अमरीका वालों ने अपना रक्त बहाकर इसका प्रमाण दिया। परन्तु एक बात में वे भी कसर कर गये। उस सत्य सिद्धान्त के महत्व को उन्होंने गौर वर्ण वालों तक ही परमित रक्खा, बेचारे हब्शी "मनुष्य" शब्द की व्यवस्था में न लाये गये। ख़ैर, अमरीका वाले इङ्गलिस्तान से स्वतंत्र हो गये। यद्यपि अमरीका वालों ने अपने यहां के हब्शी गुलामों को आज़ादी तो न दी, मगर गुलामों की तिजारत बन्द करने की चेष्टा ज़रूर की। इङ्गलिस्तान वालों ने अपनी उदारता का प्रमाण देकर और अपने पापों का पश्चात्ताप करके यह क्रूर कर्म बिलकुल ही बन्द कर दिया; और

दूसरी जातियों पर भी ग़ुलामों की तिजारत छोड़ देने के लिये ज़ोर दिया।

अच्छा, अमरीका वालों ने ग़ुलामी की प्रथा को बिलकुल ही क्यों न बन्द कर दिया? इसका उत्तर है—स्वार्थ के कारण। इन तेरह बस्तियों में से जो दक्षिण को ओर थीं उनका अधिकांश काम ग़ुलामों ही के सहारे चलता था। उनके खेतों पर ग़ुलाम लोग कड़ी धूप में काम करते और मालिक चैन उड़ाते थे। मगर १७७६ की घोषणा—"मनुष्य मात्र ईश्वर की दृष्टि में सम हैं"—अपना काम कर गई। उत्तरी रियासतों में ग़ुलामों को आज़ाद करने का बीड़ा लोगों ने उठाया। धीरे धीरे देश में इस बात पर दो दल बन गये। एक दल ग़ुलामों को स्वतन्त्र करना चाहता था और दूसरा उन्हें परतन्त्र रखना चाहता था। दोनों में बड़े बड़े झगड़े हुए। १८५६ में देश की दशा बड़ी नाज़ुक हो गई। देश-हितैषी कहने लगे कि यूनाइटेड-स्टेटज को ईश्वर ही बचावे तो बच सकता है।

भँवर में पड़ी हुई यूनाइटेड स्टेटज़ की किश्ती को पार लगाना साधारण व्यक्ति का काम न था। इसके लिए एक असाधारण मल्लाह की आवश्यकता थी—अथवा यों कहिए कि उस समय एक ऐसे महात्मा की ज़रूरत थी जिसमें दैवी शक्ति हो, ईर्षा-द्वेष जिसे छू न गया हो; प्रसिद्धि की जिसको लालसा न हो; गोरे काले में जिसे सम प्रेम हो; जो नीति में कुशल हो; और जिसकी बुद्धि तीक्ष्ण हो। मतलब यह कि दूसरों के दुःख में दुःख और सुख में सुख समझने वाले तथा अपने देश की रक्षा के लिए सब कुछ स्वाहा करने वाले पुरुष की आवश्यकता थी। ऐसा पुरुष, अनाथ हब्शी ग़ुलामों का दुःख दूर करने और अपने देश को दो टूक होने से बचाने के

लिए पैदा हो चुका था। १८५६ में उसकी उम्र पचास वर्ष की थी। ग़रीब माता-पिता के घर उत्पन्न होकर अपने श्रेष्ठ गुणों से धीरे धीरे उन्नति करते करते यह महापुरुष १८५६ में अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए अपने देशवासियों के सामने आया। इस समय वह यूनाइटेड स्टेट्स़ का प्रेसीडेंट चुना गया।

पूर्व-सञ्चित पापों का प्रायश्चित अमरीकन जाति को ज़रूर करना था। १८६० में हब्शी गुलामों के कारण उत्तरी और दक्खिणी रियासतों में घोर युद्ध आरम्भ हुआ। इस युद्ध का वर्णन पाठ करने योग्य है। प्रेसीडेंट लिङ्कन ने सब से पहले इस बात के लिये सिर तोड़ कर कोशिश की कि बिना युद्ध के सब झगड़ों का निबटेरा हो जाय। मगर ऐसा कब हो सकता था। जब युद्ध आरम्भ हुआ और प्रेसीडेन्ट ने आदमियों के लिए अपील की, तब उसके देशवासियों ने उत्तर में कहा—"Father Abraham, we are coming" (पिता अब्राहम! हम आते हैं"। अमरीका स्वतन्त्र देश है; कोई आदमी ज़बरदस्ती फ़ौज में भरती नहीं किया जाता; दूसरे देशों की तरह "Standing Army" सजी सजाई सेना) भी यहाँ नहीं रक्खी जाती। यहाँ तो जब ज़रूरत पड़ती है तब लोग अपना घर बार छोड़ कर देश के झण्डे के नीचे आ खड़े होते हैं। बारह बार प्रेसीडेण्ट लिङ्कन ने आदमी मांगे। मांगे २७,६३,६७० आदमी थे; और आये २७,७२,४०८ आदमी! पांच साल युद्ध हुआ; सात लाख के क़रीब आदमी दोनों ओर से बलिदान हो गये; अर्बों रुपये की जायदाद नष्ट हो गई, तब कहीं जाकर गुलामी की प्रथा का अन्त हुआ। तीस लाख हब्शी गुलामी से छूट गये और पिता लिङ्कन

का गुण गाने लगे। महात्मा लिङ्कन का उद्देश पूरा हो गया और वे भी अपने देश की बीमारी दूर करके बलिदान हो गये।

अब हम एकआध उदाहरण देकर इस महापुरुष का महत्व दर्शाते हैं। युद्ध के समय जब सिपाहियों को किसी अपराध के कारण "कोर्ट मार्शल" की सज़ा मिलती थी तब अफ़सर लोग नियमानुसार उन फैसलों को प्रेसीडेंट के पास दस्तख़त के लिए भेजते थे। प्रेसीडेंट लिङ्कन हमेशा इस बात का यत्न करते थे कि कोई न कोई ऐसा नुक़ता मिल जाय जिससे अपराधी बच जाय। क्षमा और दया उनमें बेहद थी। फ़ौजी अफ़सर प्रेसीडेन्ट की इस दयालुता की सदा शिकायत किया करते थे। परन्तु महात्मा लिङ्कन कुछ ध्यान न देते थे। एक बार एक लड़के को (फ़ौज में बीस पच्चीस वर्ष के लड़के ही अधिक थे) मृत्यु-दण्ड की सज़ा मिली। उसका मुक़द्दमा प्रेसीडेंट के पास आया। लड़के का क़सूर यह था कि वह पहरे पर सो गया था। प्रेसीडेंट लिङ्कन ने उसको क्षमा कर दिया। अफ़सरों के कारण पूछने पर उन्होंने कहा—"मैं इस ग़रीब लड़के की हत्या अपने सिर लेकर सदा के लिए अपराधी नहीं बनना चाहता। यह लड़का खेतों पर पला और रहा है। आश्चर्य नहीं कि जिसको शाम ही से सोने की आदत हो वह रात को पहरा देते समय भूल से सो जाय। इस अपराध के लिए मैं इसको गोली नहीं मार सकता।" फ्रेडरिक्सबर्ग की लड़ाई में वह लड़का मारा गया। जब उस के मृत शरीर से कपड़े उतारे गये तब लोगों ने देखा कि वह अपने हृदय के ऊपर प्रेसीडेंट लिङ्कन की तस्वीर रक्खे हुए है। तसवीर पर लिखा है,—"God bless President Abra-

ham Lincoln !" परमेश्वर प्रेसीडेंट अब्राहम लिङ्कन का कल्याण करे।

एक और उदाहरण सुनिए। बोस्टन की रहनेवाली एक बिक्सबी नाम की मेम के पाँच लड़के थे। वे पाँचों ही युद्ध में मारे गये। इस पर प्रेसीडेंट लिङ्कन ने दुखी माता की सांत्वना के लिए यह पत्र लिखा—

"प्यारी मेडम, युद्ध-विभाग के काग़ज़ों की जांच पड़ताल करने से मुझे मालूम हुआ कि आपके पाँच पुत्र वीरता से लड़ते हुए देश के लिए मारे गये। उनकी मृत्यु से जो कष्ट आपको हुआ है उसको दूर करने का यत्न तो मेरी शक्ति में कहां ! परन्तु मैं इस प्रजा-सत्ताक-राज्य की ओर से, जिसकी रक्षा की ख़ातिर आपके पुत्रों ने प्राण दिये, आपको धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको शान्ति दे और आपके मृत पुत्रोंका पवित्र स्मारक सदा के लिए आपको शान्तिदायक हो।

स्वतन्त्रता रूपी यज्ञ में जो शुद्ध बलि आपने दी है उसका गौरव आपको सांत्वना देने वाला हो।

आपका

अब्राहम लिङ्कन।"

इस चिट्ठी ने उस पुण्यशीला माता को बहुत कुछ शान्ति दी और उसका नाम सदा के लिए अमर हो गया। जब तक अमरीकन जाति रहेगी और अमरीकन क़ौम का इतिहास बना रहेगा तब तक बिक्सबी का नाम स्थायी रहेगा। यह चिट्ठी लिङ्कनकी महनीयता का अच्छा परिचय देती है। यूनाइटेड स्टेटज़ का प्रेसीडेंट, भयङ्कर युद्ध का समय, भारी ज़िम्मेदारी का काम ! उस काम को करते हुए उन माताओं

भगनियों और स्त्रियों के दुःख दूर करने के लिए पत्र लिखना जिनके बन्धु युद्ध में मारे गये थे, यह वही कर सकता है जिसके प्रेम का दायरा बहुत बड़ा हो; जो दूसरों के दुःख को अपना समझता हो।

इस महात्मा के चरित्र का दूसरा पहलू देखिये। वे रियासतें जिन्होंने १८६० में प्रेसीडेंट लिङ्कन के विरुद्ध युद्ध किया था आज उसका जन्मोत्सव मनाती हैं। क्यों? कारण यह है कि प्रेसीडेंट लिङ्कन को बाग़ियों से द्वेष नहीं था। ज्योंही लड़ाई समाप्त हुई और युद्ध में प्रेसीडेंट लिङ्कन का दल जीत गया त्योंही इस महापुरुष ने परास्त दल को अपनाया, बहुत नरम शरतें करके उससे सन्धि कर ली और युद्ध का ख़ातमा कर दिया।

यही गुण हैं जिनके कारण लिङ्कनका शताब्दिक जन्मोत्सव इस धूमधाम से मनाया गया। केनटकी और इलोनाए रियासतों में उत्सव की तैयारियां कई महीने पहलेसे की गई और लाखों रुपये ख़र्च किये गये। लकड़ी के जिस घर में लिङ्कन पैदा हुए थे उसको सुरक्षित रखने और उस स्थान पर यादगार बनाने के लिए सभायें बनाई गईं। मतलब यह कि अमरीका वालों ने अपनी जाति के भूषण का हर तरह से सत्कार किया है। अन्त में हम उस गीत की नक़ल देते हैं जो अमरीका का क़ौमी गीत है और जो लिङ्कन के जन्मोत्सव के दिन सभी जगह गाया गया था। वह गीत यह है—

I.

My country !' tis of thee,
Sweet land of liberty,
Of thee I sing ;

Land, where my fathers died,
Land of the pilgrims pride,
From every mountain side
Let freedom ring!

2.

My native country thee,
Land of the noble free,
Thy name I love:
I love thy rocks and rills,
Thy woods and templed hills;
My heart with rapture thrills
Light that above.

3.

Let music sweet the breeze,
And ring from all the trees,
Sweet freedoms' song:
Let mortal tongue awake,
Let all that breathe partake,
Let rocks their silence break,
The sound prolong.

4.

Our father's God ! to thee,
Author of liberty,
To thee we sing:
Long may our land be bright,
With freedom's holy light;
Protect us with thy might,
Great God, our King.

अमरीका की स्त्रियां ।

यत्र नार्य्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राऽफलाः क्रियाः ॥ मनु

पाठक ! अपने यहां की स्त्रियों का हाल तो आप जानते ही हैं । कहां तक आप उन बेचारियों को लिखाते पढ़ाते हैं ? कहां तक आप उनकी शारीरिक अवस्था पर ध्यान देते हैं ? कहां तक आप उनके अधिकारों की रक्षा करते हैं ? आप से और मुझ से ये बातें छिपी नहीं । बाहर के लोगों से यह कह कर कि हम भी किसी समय सभ्य थे—नहीं नहीं सभ्यता के स्तम्भरूप थे—हम भले ही अपना पीछा छुड़ा लें; परन्तु क्या इस तरह भी हमारा सुधार हो सकता है? कदापि नहीं । हम बड़ी ही दीनावस्था में हैं । हमारा यह अभिमान, कि हम किसी काल में यह थे, वह थे, वृथा है । हम अब क्या हैं सो देखो । ज़रा आँखे खोलो। दुनिया हमारी वर्तमान दशा से हमें पहचानती है, बाप दादे को देख कर नहीं ।

एक विद्वान का कथन है कि, यदि तुम किसी देश की उन्नति का कारण जानना चाहो तो वहां की स्त्रियों की दशा की जांच करो । जिस देश में स्त्रियां मूर्खा हैं ; जिस देश में स्त्रियों की प्रतिष्ठा नहीं है ; जिस देश में स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा नहीं है ; वहां के लोग चाहे लाख टक्करें जाति के सुधार के लिये मारें, कभी उनको सफलता प्राप्त नहीं हो सकती । यह कथन कहां तक ठीक है, इसी का प्रमाण देने के

लिए मैं आज एक ऐसे देश की ललनाओं की जीवनचर्या आपके सामने रखता हूं, जो देश अपनी उन्नति के लिए संसार में विख्यात है। आप कृपा करके उनके कामों का अपनी मां-बहनों के कामों से मुक़ाबला कीजिए। यदि आप को मेरी बातें अच्छी लगें और लाभदायक जान पड़ें, तो जहां जहां आपकी पहुँच हो वहां वहां उनका ज़िक्र कर दीजिएगा। इसी से मैं समझ लूंगा कि मेरा परिश्रम व्यर्थ नहीं गया।

सब से पहले मैं यह बता देना उचित समझता हूं। कि मैं पाश्चात्य सभ्यता का अन्धा भक्त नहीं हूं। जिन्होंने मेरे लेख ध्यानपूर्वक पढ़े हैं वे ज़रूर ही इस बात को जान गये होंगे। हाँ, मैं सत्यप्रिय हूँ। अपने मतलब की कोई बात कहीं हो, उसे ग्रहण करना अपना धर्म समझता हूं। निर्दोष कोई भी जाति नहीं। मैं आप से अमरीका की स्त्रियों के दोष बताऊंगा, कम से कम उन्हें जिनको मैं दोष समझता हूं।

जब मैं भारतवर्ष से अमरीका के लिए चला था तब इस बात के जानने की मुझे बड़ी उत्कण्ठा थी कि अमरीका की स्त्रियां अपने पतियों से कैसा बर्ताव करती हैं; घरों में वे किस प्रकार रहती हैं; इनका आपस का बर्ताव कैसा है; पर एक दिन की मुलाक़ात में आदमी इन सब बातों को किसी तरह नहीं जान सकता।

कारणवश मुझको कुछ महीने मनीला में ठहरना पड़ा। मनीला फिलिपाइन द्वीप का एक बड़ा भारी शहर है; और फिलीपाइन द्वीप अमरीका वालों के अधीन है। इसलिए अमरीकन लोग यहां बहुत हैं। वे भिन्न भिन्न पेशे करते हैं। सौभाग्य से वहां पर मुझे एक बहुत अच्छा मौक़ा एक अमरीकन के साथ रहने का मिल गया। मिस्टर स्काट मनीला-शिक्षा-

विभाग में हेड क्लर्क थे। वेदान्त पर आप की बड़ी श्रद्धा थी। मुझ से उन्हों ने कहा कि आप हमारे ही मकान पर रहें और हमें संस्कृत पढ़ावें। मैंने स्वीकार कर लिया। "एक पन्थ दो काज"। उनकी स्त्री अच्छी सुशिक्षिता थी और एक स्कूल में अध्यापिका थी। कैसा प्रेम मैंने इस पति-पत्नी में देखा। फ़ुरसत के समय दोनों किसी अच्छे लेखक की पुस्तक उठा कर पढ़ा करते और जीवन का आनन्द लेते थे। मेरे लिए यह सब नई बात थी। हमारे देश में तो जिस लड़के का विवाह होने को होता है उसे इसका भी पता नहीं लगता कि जिसके साथ मुझे सारी उम्र काटनी है वह है कैसी? मूर्ख है या शिक्षिता। बाज़ों को तो यह भी पता नहीं लगता कि जिसके साथ विवाह होता है वह स्त्री है या पुरुष। रुपया देकर विवाह करनेवाले कई बेचारे इसी तरह धोखे में आकर रुपया खो बैठे हैं। वाह रे भारत, तेरी अद्भुत महिमा है!

मिस्टर स्काट से थोड़े ही दिनों में मेरा घना सम्बन्ध हो गया। जब उनकी स्त्री गरमियों की छुट्टियों में मनीला से अमरीका जाने लगी तब मुझ से हंसकर कहा—"देव! घर और मिस्टर स्काट की निगरानी आप के सुपुर्द है"। मैंने मुसकरा दिया। फिर उन्होंने पन्द्रह बीस बन्द लिफ़ाफ़े मुझे दिये। उन पर जुदा जुदा तारीख़ें पड़ी हुई थीं और मिस्टर स्काट का पता लिखा हुआ था। उन्हें देकर स्काट की पत्नी ने कहा—"कृपा करके इन चिट्ठियों को इन तारीखों के अनुसार मेरे पति को दे दीजियेगा। मैंने चिट्ठियां ले लीं और उनकी इच्छानुसार काम किया। चिट्ठियों के देने का कारण था। मनीला से अमरीका जाने में एक महीना लगता है, और एकही महीना आने में भी। इसलिए चिट्ठी आने में कम से

कम दो महीने लगते। इन दो महीनों में पति को वियोग-दुःख अधिक न सहना पड़े, इसी लिए स्काट की पत्नी ने ये चिट्ठियां दी थीं।

यह केवल एक ही उदाहरण पति-प्रेम का नहीं है। मुझे अपने मित्र द्वारा वहां कई एक अमरीकन गृहस्थों से जान पहिचान हो गई थी। उन कुटुम्बों में भी पति-पत्नी में अपूर्व प्रेम देखकर मुझे बड़ा ही आनन्द हुआ। कारण यह कि स्त्रियां सुशिक्षिता और सुयोग्या हैं।

शिकागो पहुंच मुझे बहुत कुछ देखने भालने का मौक़ा मिला। वहां स्त्रियों की दशा का ज्ञान प्राप्त करने के बहुत अवसर मेरे हाथ लगे। विद्यालय में जो लड़कियां मेरी सहाध्यायिनी थीं उनसे जब जब किसी विषय पर बात चीत करने का अवसर मिला, तबीयत खुश हो गई। गम्भीर से गम्भीर विषय को भी वे समझती हैं। लड़कों की तरह बहुत सी लड़कियां विद्यालय में ऐसी थीं जिनको अपनी शिक्षा के लिये आप रुपया कमाना पड़ता था। विद्या-प्राप्ति की धुनि में सब तरह के कष्ट सहकर वे पदवियां प्राप्त करती हैं।

एक दिन मैं एक लड़की के साथ मिशेगन झील पर सैर करने गया। रास्ते में अनेक विषयों पर बात चीत हुई। हम दोनों झील के किनारे जाकर बैठ गये। लड़की का नाम कुमारी पड़ी था। उसने मुझ से पूछा—

"अच्छा, आप बताइये कि आप को यह विद्यालय पसन्द आया या नहीं?"

मैं—"ईश्वर से यह चाहता हूं कि मेरे देश में भी ऐसे ही विद्यालय हो जायं।"

एड़ी हँसकर—

"आप लोग यत्न करें तो सब कुछ हो सकता है।"

मैं चुप हो रहा। एड़ी ने फिर पूछा—

"आप के यहां लड़कियों के लिये शिक्षा का क्या प्रबन्ध है ?"

"अभी नाम मात्र के लिये कहीं स्कूल खुले हैं।"

एड़ी—ठण्ढी सांस भर कर—

"जब मैं यह सोचती हूं कि ऐसे भी देश हैं जहां अबलायें बिलकुल ही अविद्यान्धकार में पड़ी हैं तब मुझे महा-शोक होता है। आप जैसे लोग जिस देश में हों वहां ऐसी दशा !"

मैं उत्तर नहीं दे सका मन ही मन मसोस कर रह गया।

कुमारी एड़ी ने यह देख कर कि मुझे अपने देश की दुर्दशा पर दुःख हो रहा है विषय बदल दिया और बोली—

"कल शनिवार है। आप मेरे साथ व्यायामशाला में चलिएगा। आप वहां देखेंगे कि यहां की लड़कियां कैसी अच्छी कसरत करती हैं।"

मैंने बड़ी ख़ुशी से कहा—"बहुत बेहतर।"

दूसरे दिन हम दोनों व्यायामशाला देखने गये। समय दोपहर का था। यह व्यायामशाला विद्यालय से कोई पन्द्रह मील दक्षिण है। इस शाला में जो अध्यापिका थी उससे मेरी बहुत अच्छी पहिचान थी; इस लिये मेरे आने से वह बहुत प्रसन्न हुई। उसने मुझे व्यायामशाला अच्छी तरह दिखला दी। जैसा सामान लड़कों के लिये होता है, अधिकांश उसी तरह का लड़कियों के लिये भी था। यद्यपि लड़कियों की कसरत के समय मर्दों के वहां जाने का निषेध है; परन्तु मुझे अध्यापिका ने कुछ फ़ासले पर खड़े होकर देख लेने की

आज्ञा दे दी। एक लड़की, जिसकी उम्र कोई तेरह चौदह वर्ष की होगी, ठीक मेरे सामने लोहे की छड़ पर कसरत कर रही थी। उसे कसरत करते देख क्या क्या भाव मेरे हृदय में उठे मैं नहीं लिख सकता। जिस देश में कन्याओं के आरोग्य और शारीरिक सुधार का ऐसा अच्छा प्रबन्ध हो उस देश को उन्नति के शिखर पर आरूढ़ होना ही चाहिये।

लड़कियों की बातें जाने दीजिये। अब अमरीका की स्त्रियों का कुछ हाल सुनिए।

अमरीका की स्त्रियां के फुरसत का समय बहुत करके क्लबों में जाता है। यह ज़रूरी नहीं कि इन सभाओं में जाने वाली स्त्रियाँ विवाहिता ही हों, क्वारी भी होती हैं। प्रत्येक शहर में स्त्रियों में क्लब हैं। क्लबों से मतलब सभाओं अथवा समाजों से है। ये क्लब भिन्न भिन्न उद्देश्यों की सिद्धि के लिये खोली जाती हैं। जैसे शेक्सपीयर-क्लब में केवल शेक्सपीयर के ग्रन्थ पढ़े जाते हैं और उनका मतलब अच्छी तरह समझा जाता है। ब्रौनिङ्ग-क्लब में महाकवि ब्रोनिङ्ग के ग्रंथों का अध्ययन किया जाता है। याद रखिये, यह सब मैं स्त्रियों की क्लबों का ज़िक्र कर रहा हूं। व्यायाम-क्लब में स्त्रियां आकर व्यायाम करती हैं। मातृ-क्लब (Mothers Club) में मातायें अपने लाभ के लिये, समय समय पर, अमरीका के प्रसिद्ध प्रसिद्ध डाक्टरों को बुलाकर उनके व्याख्यान सुनती हैं। व्याख्यानों में बीमारियों के इलाज, बच्चों के पालन पोषण का ढङ्ग, खाने पीने की विधि आदि उपयोगी विषयों की चर्चा रहती है।

एक बार मुझे एक स्त्री समाज में व्याख्यान देने जाना पड़ा। यह समाज विशेष करके धनी स्त्रियों का था। व्याख्यान के दिन दो सौ से अधिक स्त्रियां उपस्थित थीं। व्याख्यान के

बाद में कुछ काम के लिये थोड़ा देर ठहर गया। जिस दीवान ख़ाने में मैंने व्याख्यान दिया था उसके पास ही बाहर के कमरे में होटेल की तरह का सामान मैंने देखा। मैंने वहां की प्रधान स्त्री से पूछा कि क्या यहां होटेल भी है? उत्तर में वह देवी बोली—"हां, इस स्त्री-समाज की ओर से यहां होटेल भी है, जिसमें निर्धन स्त्रियां थोड़े ख़र्च से भोजन पाती हैं।" हमारे कोई कोई साधु पाठक शायद कहेंगे कि सदावर्त ही क्यों न खोल दिया जिसमें स्वर्ग जाने का रास्ता और भी सुगम हो जाता। उत्तर में हम निवेदन करेंगे कि अमरीकावासी हमारी तरह मूर्ख नहीं हैं। आप यदि सम्पत्ति शास्त्र पढ़ें तो आपको पता लगे कि जो लाखों करोड़ो रुपये हर साल आप अपने पुण्य-क्षेत्रों में सदाव ै द्वारा ख़र्च करते हैं वह व्यर्थ जाता है। देश में आलसी हट्टे कट्टे मूर्खों की संख्या बढ़ती हैं। उसी रुपये से यदि कारख़ाने खुलें तो हज़ारों आदमियों का पालन हो, और पुण्य के साथ देश-सेवा भी हो। अमरीका के निवासी सम्पत्तिशास्त्र के ज्ञाता हैं। वे आलसी भिखमंगों की वृद्धि करना महापाप समझते हैं।

इलोनाए (Illinois) रियासत में जितने स्त्री-समाज हैं सब की एक प्रधान सभा है। उस सभा में प्रत्येक समाज के प्रतिनिधि रहते हैं। १६०६ के नवम्बर में उसका वार्षिक अधिवेशन शिकागो विश्वविद्यालय में हुआ था। इस सभा के उद्देश आदि का संक्षिप्त वर्णन सुन लीजिए—

१—पहला उद्देश्य इस सभा का शिक्षा-सम्बन्धी है। गांव गांव में जो स्कूल रियासत की तरफ से खुले हुए हैं उनकी सहायता वह सभा करती है। वहां की पठन-पाठन-विधि की उन्नति का ध्यान रखती है। जो लोग निर्धनता के कारण थोड़ा

भी ख़र्च अपनी सन्तान की शिक्षा के लिए नहीं कर सकते, सभा उनकी सहायता करती है। जिस गांव में स्कूल तो है, पर अच्छा पुस्तकालय नहीं है, वहां यह सभा पुस्तकालय खोलने का यत्न करती है। १६०५ नवम्बर से १६०६ नवम्बर तक, एक साल में, इस सभा ने ५८ पुस्तकालय खोले थे; क़सबों में यह सभा ऐसे ऐसे समाज स्थापित करती है जिनके द्वारा बच्चों के माता पिता अपनी सन्तान के हित-साधन का विचार करते हैं।

२—दूसरा उद्देश्य दान सम्बन्धी है। दान का पात्र कौन है? इसका विचार सभा करती है। जिसे दान देना है वह सभा को भेज देता है; सभा उसको उचित और उपयोगी काम में ख़र्च करती है। भारतवर्ष की तरह नहीं, कि लाखों रुपये मन्दिर मसजिदों में फूंक दिये, या किसी पंडे पुजारी की भेंट कर दिये। पाठक आपही कहिये--काशी, प्रयाग और गया के पंडों को जो धन दिया जाता है क्या वह देशोपकार में ख़र्च होता है?

सभा के प्रतिनिधि, समय समय पर रियासत के जेलखानों अनाथालयों और हवालातों में जाते हैं। वहां की हालत देखते हैं। क़ैदियों की अवस्था कैसे सुधर सकती है? इसका विचार करते हैं। स्कूलों की ज़रूरत होती है तो क़ैदियों के लिए स्कूल खोलने का प्रबन्ध करते हैं। कैदियों के रिश्तेदार यदि दानपात्र हों तो सभा उनकी सहायता करती है।

यदि किसी को नौकरी या रोज़गार की ज़रूरत है तो सभा उसके लिए काम तलाश कर देती है; और जब तक रोज़गार न मिले उसके रहने और खाने पीने का प्रबन्ध करती है।

३--सभा का तीसरा उद्देश पागल, अन्धे, बहरे, मोहताज लोगों के लिए स्कूल स्थापित करना है। उनके रहने के लिए अच्छे हवादार मकान शहर शहर में बने हुए हैं। ऐसे मकानों में रहने वालों के आराम का बहुत ख़याल रक्खा जाता है। मान लीजिए कि कोई लङ्गड़ा है, चल फिर नहीं सकता। उस के लिए छोटी छोटी गाड़ियां रक्खी जाती हैं।*

४--चौथा उद्देश इस सभा का अच्छे साहित्य का प्रचार करना है। सभा की ओर से बांटने के लिए छोटी २ सचित्र पुस्तकें छपती हैं। वे मुफ़्त बांटी जाती हैं। सभा के आधीन जितने समाज हैं वे उनको प्रत्येक बालक के हाथ तक पहुंचाने का उपाय करते हैं। ऐसी पुस्तकों में प्रायः रोचक, परन्तु शिक्षाप्रद कथायें रहती हैं।

५--पांचवां उद्देश इस सभा का कला-कौशल की उन्नति करना है। रियासत में जहां कहीं शिल्पकला के स्कूलों की ज़रूरत होती है, सभा वहां उनके खुलवाने का यत्न करती है। जिस बालक या बालिका की प्रवृत्ति कला-कौशल की ओर होती है, धन से उसकी सहायता करके सभा उसके उत्साह को बढ़ाती है।

अमरीका की स्त्रियां ऐसे ही काम करती हैं। मैंने केवल उदाहरण के तौर पर इतनी बातें लिखीं। यदि आप यहां की स्त्रियों के सब काम देखें तो आपको भारत की स्त्री जाति की अधोगति का अच्छी तरह अन्दाज़ हो।

---

* शिकागो विश्वविद्यालय के पास ऐसा ही बहुत बड़ा मकान है, जहां लंगड़े लूले रहते हैं। उनके लिए गाड़ियां मौजूद हैं। ये गाड़ियां ऐसी हैं कि हाथ से कल घुमाने से चलती हैं। इस तरह अमरीका के लङ्गड़ों की भी ज़िन्दगी अच्छी तरह कटती है—लेखक।

अब ज़रा ग्रामीण- स्त्रियों का भी हाल सुनिये। शहरों की स्त्रियां तो अपने समय को देश और जाति के उपकार के लिये ख़र्च करती हैं, पर गावों की स्त्रियां क्या करती हैं? आप को यह जानने की अवश्य ही इच्छा होगी। मुझे खुद इस बात के जानने का बड़ा शौक़ था। कई साल गरमियों में मुझे शिकागो से बाहर दूसरी रियासतों में घूमने का अवसर हाथ लगा। वहां मुझे यह देख कर बड़ा ही आश्चर्य्य हुआ कि चार पांच सौ की आबादी तक के गांवों में स्त्रियों की सभायें हैं। ये सभायें अपने अपने गांव की ज़रूरतों को दूर करने के इरादे से खोली गई हैं। गाने बजाने के सामान सभी जगह है। यहां तक कि गांव में क़रीब क़रीब सब के घर में पियानो (Piano) बाजा है। पुस्तकालयों का तो कहना ही क्या है! ग़रीब से ग़रीब के यहां भी पचास साठ उमदा उमदा ग्रन्थ होंगे। शेक्सपियर, जार्ज इलियट, इमरसन आदि साहित्याचार्य्यों के नाम आप झोपड़ियों तक में सुनेंगे।

अन्त में मैं यहां की स्त्रियों के कुछ दोष भी बतला देना ज़रूरी समझता हूं। सब से बड़ा दोष अमरीका में यह है कि स्त्रियां हद से ज़्यादा स्वतन्त्र हैं। इस का परिणाम यह हो रहा है कि बड़े बड़े शहरों में व्यभिचार बढ़ता जाता है। एक बड़ा भारी सामाजिक दोष अमरीका में नाचना (Dancing-Ball) है। जहां जहां स्त्री और पुरूष मिलकर नाचते हैं कोई न कोई तार ढीली हो ही जाती है। इस प्रकार आपसमें नाचना प्रकृति के नियम विरूद्ध काम करना है। भारतवर्ष में तो अंगरेज़ हम लोगों को अपने नाच में आने ही नहीं देते, इसलिये हम लोग इसके दोष कम समझते हैं, पर शिकागो में मुझे दो चार बार ऐसे नाचों में जाना पड़ा था। वहां नाचा तो

क्या, जाकर बैठे बैठे तमाशा देखा किया। एक बार एक लड़की ने मुझे अपने साथ नाचने के लिये बहुत ज़ोर दिया। मैंने कहा--

"नाचना औरतों का काम है। मर्द नहीं नाचा करते।"

लड़की खिलखिला कर--

"तो यह सब लड़के आप की समझ में औरतें हैं!"

मैं मुसकरा कर--

"ख़ैर, यह दूसरी बात है।"

जब दो चार नाच हो चुका तब उस लड़की ने फिर मुझ से कहा कि मेरे साथ नाचिए।

मैं---"भला अनजान आदमी कैसे नाच सकता है?"

लड़की—"मैं आप को सिखलादूंगी।"

मैं हँसकर—"मैं बड़ा ही कुन्दज़हन हूं। कोई चीज़ जल्दी नहीं सीख सकता। आपको व्यर्थ कष्ट होगा।"

बस, पाठक, आप से जो कहना था उसे संक्षेप में मैं कह चुका। अब आप अमरीका की स्त्रिये के कामों का अपने यहां की स्त्रियों के कामों से मुकाबला कीजिए। अपने घरों की अमरीका के घरों से तुलना कीजिए। हमारे घर, घर नहीं हैं। हमारी स्त्रियां हमारे हृदय के भावों को नहीं समझ सकतीं। जिन विषयों को हमने स्कूलों और कालिजों में पढ़ा है उनका नाम तक वे नहीं जानतीं। पति बी० ए० है, पत्नी निरक्षर! आप खुद ही सोचें कि अज्ञान में पड़ी हुई हमारी मां-बहनें क्या हमारी उच्चाभिलाषाओं में सहायक हो सकती हैं? हमारा आधा अङ्ग बिलकुल ही निकम्मा है। यदि आप अपना, अपनी सन्तान का, अपने देश का कुछ भी उपकार करना चाहते हो तो स्त्रियों की शिक्षा आदि का प्रबन्ध कीजिए।

हर काम के करने का ढङ्ग होता है। हम लोग ढङ्ग नहीं जानते हमको ढङ्ग सीखना चाहिए। और जिस प्रकार हो सके देश में विद्या का प्रचार करना चाहिये।

अमरीका की स्त्रियों के दोष नहीं, गुण हमें ग्रहण करना चाहिए। जिस प्रकार वे परोपकार में रत हैं, जिस प्रकार वे समय को मूल्यवान् समझती हैं, जिस प्रकार वे अपने उद्देश में दत्तचित्त रहतीं हैं--क्या कभी ऐसा भी समय आवेगा जब भारत की स्त्रियां भी उन्हीं की तरह सब काम करेंगी? फल के देनेवाले तो विश्वनाथ हैं, संतोष और धैर्य्य से काम करना हमारा काम है।

अमरीका की प्रसिद्ध

राजधानी

वाशिङ्गटन शहर

आइये, नई दुनियां के नक़शे में यूनाइटेडस्टे-टस-अमरीका को ढूँढ़ें। मिला आप को? बस, यही मैदान का टुकड़ा नई दुनियां का शिरोमणि--संसार का सबसे धनाढ्य सम्पत्तिवान् देश—यूनाइटेड-स्टेटस आव् अमरिका नाम से प्रख्यात है। आज हमको केवल इसकी राजधानी की सैर करना है। कहां है इसकी राजधानी? न्यूयार्क शहर से २२८ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर। न्यूयार्क शहर तो आपको आसानी से मिल जावेगा। इसी के दक्षिण-पश्चिम की ओर देखिये। पहिले फिलेडलफिया, फिर बालटीमोर, फिर वाशिंगटन दिखाई पड़ेगा। यही यूनाइटेड-स्टेटस आव् अमरीका की प्रसिद्ध राजधानी है। यहीं पर इनका प्रेसीडेन्ट रहता है; अमरीकन जाति के प्रतिनिधि सत्ताक-राज्य का गढ़ यहीं पर है। आओ, पहिले इसके नाम तथा इतिहास की कथा जानें, फिर सैर करने में अधिक आनन्द आवेगा।

१७७६ में नई दुनियां की तेरह बस्तियों का इंगलिस्तान के साथ झगड़ा आरम्भ हुआ। इस झगड़े के मुख्य कारण इंगलैन्ड निवासी थे। इन तेरह बस्तियों के लीडरों ने, पहिले

अरज़ी परचे, सभा कांग्रेसों द्वारा इङ्गलिस्तान वालों से अपने अधिकार लेने की बहुत कोशिश की, आखिर 'तंग आयद बजंग आयद' वाली कहावत चरितार्थ हुई। उन तेरह बस्तिओं का अङ्गरेज़ों से घमासान युद्ध आरम्भ हुआ। यह युद्ध पांच वर्ष तक रहा और अन्त में—

"All goveroments derive their just powers from the consent of the governed."

"राज्य-शासकों को शासन के अधिकार प्रजा की स्वीकृति से मिलते हैं" इस सत्य सिद्धान्त की अक्षरशः जय हुई। तेरह बस्तियां आज़ाद हो गईं। तब से यूनाइटेड-स्टेटस आव् अमरीका का नाम संसार की जातियों की लिस्ट में लिखा गया।

इस नये स्वतन्त्र देश की राजधानी कहां होनी चाहिये? यह प्रश्न जाति के लिये बड़े महत्व का था। सभी कोई अपनी अपनी रियासत में राजधानी चुनने की सलाह देते थे। आखिर इस झगड़े का फैसला देशभक्त श्रीमान् जार्ज वाशिङ्गटन पर छोड़ा गया। इस वीर ने अपनी मातृभूमि की निष्काम सेवा की थी; अपना तन, मन, धन अपने प्यारे देश की आज़ादी के लिये कुरबान किया था, अपने रण कौशल से शत्रुओं के दान्त खट्टे किये थे, और सब से बढ़कर अपने निष्कलङ्क चरित्र तथा.........देश-प्रेम के कारण अपने देशवासियों से (Father of his country) (अपने देश का पिता) की पूज्य उपाधि ग्रहण की थी। ऐसे सर्वप्रिय पुरुष का फैसला सब को मान्य था। और होता भी क्यों न।

अपने देश बन्धुओं की आज्ञा पाकर देशभक्त जार्ज वाशिङ्गटन ने पोटोमक नदी के उत्तर-पूर्वीय भूमि को इस कार्य्य के

लिये चुना। मेरीलैण्ड तथा वरजिनिया रियासतों ने अपनी कुछ भूमि राजकार्य्य हेतु गवर्नमेंट को प्रदान की और इस ६९$\frac{1}{8}$ वर्गमील भूमि का नाम (District of Columbia) रक्खा गया। इसका राज्य शासन प्रबन्ध काँग्रेस के हाथ में आया। कोलम्बिया के इस ज़िले में राजधानी 'वाशिङ्गटन-शहर' की नींव डाली गई, और यह अमरीका वालों की वीरपूजा (Hero worship) का जीवित प्रमाण है। अपनी राजधानी का ऐसा नाम रख कर अमरीका वालों ने अपने परमपूज्य देशहितैषी वाशिङ्गटन को अमर बना दिया। आज उसी वाशिङ्गटन-कीर्तिस्तम्भ राजधानी की सैर करने हम लोग चलते हैं, और देखते हैं वहां क्या हो रहा है।

न्यूयार्क से घंटे घंटे बाद रेलगाड़ी वाशिङ्गटन शहर की ओर छूटती है। साधारणतया कई एक कम्पनियों की गाड़ियाँ जाती हैं, पर पेनसलवेनिया कम्पनी का प्रबन्ध जगत विख्यात है; उसका किराया भी औरों से अधिक है। आज मध्यान्ह एक बजे की गाड़ी में सवार होकर चलते हैं पाँच घण्टे आनन्द से बीत गये संध्या को गाड़ी वाशिङ्गटन शहर पहुंच गई। लीजिये हम थोड़े में ही आप को यहां ले आये।

यूनियन रेलवे स्टेशन* की इमारत को देख कर आप दंग क्या होते हैं? क्या आपने कभी लाहौर का स्टेशन नहीं देखा? हां, इतना ज़रूर है कि यहां पर लाहौर जैसे बेइन्साफ़ियां नहीं होतीं। मुसाफिरों को धक्के पर धक्के नहीं पड़ते; उनसे पशुओं का सा बर्ताव नहीं किया जाता। तीसरे दरजे के यात्रियों का हृदय विदारक दृश्य यहां नहीं है। ख़ैर

* यूनियन रेलवे स्टेशन बनाने में तीन करोड़ नब्बे लाख रुपये से अधिक ख़र्च हुआ है—लेखक।

महाशय, उस नज़ारे को कुछ देर के लिये भूल जाइये। इधर देखिये, ये रास्ता बाहर को जाता है।

यह बिजली की गाड़ी हम लोगों को शहर ले चलेगी और Lowa Centre आयोवा सेन्ट्र के निकट पहुंचा देगी। इसी में बैठ कर चलना ठीक होगा।

आप लोग अन्दर चल कर गाड़ी में बैठें, हम सब का भाड़ा चुकाये देते हैं।

ढाई आना फ़ी आदमी!

जी हां, पर किराया आप को बहुत इस लिये मालूम होता है कि आप भारतवासी हैं, जहां हर आदमी की आमदनी प्रायः तीन पैसे रोज़ है।

अब आप अमरीका में आ गये हैं। यहां का रँग ढँग देखिये।

कैसी चौड़ी गलियां इस शहर की हैं!

हां, हां आपने समझा क्या! यहां भी काशी थोड़ी ही है जो कुंज गलियों से गुज़ारा चल जावेगा! मालूम है आप को? यहां की गलियों की चौड़ाई ८० फ़ीट से १६० फ़ीट तक है।

अहा! कैसी सफ़ाई है!

क्यों न हो, यह कलकत्ता तो नहीं है जो ज़रा सी वृष्टि होने पर कीचड़ में लत पत हो जाता है। श्रीमान्, यह वाशिङ्गटन शहर है। यह अमरीका की राजधानी है, भारत की राजधानी दिल्ली नहीं।

देखिये महाशय, यह प्रकाश! मानो दिन चढ़ा है।

बेशक, क्यों न हो। अन्धकार का नाश करना ही मनुष्य का परम धर्म है। यह प्रकाश हम को बहुत कुछ शिक्षा देता

है। जहां जितना अन्धकार है वहां उतना अधिक अन्याय है। अन्याय को दूर करने का सीधा सादा उपाय प्रकाश का फैलाना है। भला, क्या इन विद्युत-प्रकाशित गलियों में चोर निर्भय घूम सक्ते हैं ?

हमारे शहरों और इस शहर में ऐसा भेद क्यों ?

क्या इस का उत्तर भी हमीं दें। कुछ तो बुद्धि आप लोग भी ख़र्च करिये। आइये हम लोगों को यहां उतरना है।

वह फ़र्श asphalt* का है, और यह सीमेण्ट का-उस पर गाड़ी, घोड़े चलते हैं और यहां पर आदमी। यह प्रबन्ध सभी शहरों में है। यह आयोवा सेन्ट्र है। यहां पर वेदान्त सोसाइटी की अधिष्ठात्री वेदमाता नाम्नी अमरीकन लेडी रहती है। रात को इसी बिल्डिङ्ग में कमरा ले कर रहते हैं, भोर होते ही राजधानी की सैर को चलेंगे। ढ़ाई रूपये के क़रीब एक रात का किराया फ़ी आदमी लगेगा, और भोजन पका पकाया अपने पास है ही; बस छुट्टी हुई।

उठिये महाशय, शीघ्रता कीजिये। सन्ध्यावन्दन से निपटिये। आज हम लोगों को बहुत कुछ देखना है सुस्ती से काम नहीं चलेगा। घड़ी में पौने सात बजे हैं और हम लोगों को साढ़े आठ बजे यहां से ज़रूर चलना चहिये। सबसे पहले (Washington Monument) वाशिङ्गटन कीर्ति स्तम्भ देखने चलेंगे। उसका द्वार नौ बजे से खुलता है।

तो क्या वह वाशिङ्गटन कीर्ति स्तम्भ है ? जी हां, वही सब से ऊंचा मीनार उस महान् पुरुष की कीर्ति का परिचय संसार को दे रहा है। वह कह रहा है—

*एक प्रकार का पत्थर।

"संसार में उसका जीवन धन्य है जिसने अपनी आयु को अपने देश, अपनी जाति की सेवा में लगाया हो। वह कौन है, जो नहीं मरेगा। मृत्यु सब के लिये है, पर वह जन्म सार्थक है जो जाति के दुःख दूर करने में व्यतीत हो। दुनियां के विषयों से ऊपर उठो; लोभ लालच को लात मारो; सम अधिकारों की दुन्दुभी बजाओ और मनुष्य जाति को न्याय की शिक्षा दो। स्मरण रक्खो, अन्त को सत्य की जय होगी—यदि इसके पालन में कष्ट आवे तो मत घबराओ। परमात्मा पर दृढ़ विश्वास रक्खो। वह उनकी सहायता करता है जो न्याय के पथ पर चलते हैं। अमरीका जाति ने १७७६ में न्याय हेतु युद्ध किया था, परमात्मा ने उनकी सहायता की। यदि अमरीकन लोग न्याय से विमुख हो जावेंगे तो परमात्मा उनको वैसा दण्ड भी देगा।"

बेशक, आप का कथन ठीक है। यह किर्ति स्तम्भ उसी सत्य सिद्धान्त की शिक्षा देता है।

अब तो हम लोग बहुत निकट आगये। देखिये, दरवाज़े के बाहर और भी दर्शक लोग खड़े हैं, जो स्तम्भ के ऊपर जाना चाहते हैं।

आहा! यहां भी खटोला है। यह बहुत अच्छा हुआ, नहीं तो लम्बी चढ़ाई चढ़नी पड़ती। यह अमरीका है, श्रीमान्! यहां लोग व्यर्थ दुःख नहीं उठाते। कोई न कोई तरकीब सोच ही लेते हैं। अपने देश के लोगों की भाँति क़िस्मत के भरोसे नहीं बैठे रहते।

चलिये खटोले के अन्दर।

सर-र-र-र-र-र-र करता हुआ खटोला ऊपर को उठा और थोड़ी देर में हम लोग झट ऊपर पहुंच गये।

आप के ख़्याल में इसकी ऊँचाई कितनी होगी? आइये, इस आदमी से पूछें। यह यहां का नौकर जान पड़ता है।

वह कहता है ५५५ फीट ६ इंच इस मीनार की ऊँचाई है और संसार के सब मीनारों से यह ऊंचा है। बाहर की इमारत मेरीलेण्ड के संगमरमर से बनाई गई है, और अन्य भाग न्यूइङ्गलेण्ड के (granite) ग्रेनिट पत्थर से। इस कीर्ति-स्तम्भ पर ३९ लाख रुपये से अधिक ख़र्च हुआ है।

वह यह भी कहता है कि यदि प्रत्येक छत के प्लेटफार्म पर उतर उतर कर देखो तो बहुत ही नायाब कुतबे पत्थर दिखाई पड़ेंगे। वह भिन्न भिन्न देशों से लाकर यहां दीवारों में जड़े गये हैं। चीन, स्याम, जापान आदि के तो चिन्ह यहां है पर भारत का कोई भी नहीं है। इसके पास देशहितैषी जार्ज वाशिङ्गटन की भेंट के लिये कोई वस्तु नहीं थी। हो भी कैसे?

आइये, इन खिड़कियों से नगर की शोभा देखें।

यह देखिये, दो दो खिड़कियां प्रत्येक भाग में हैं और सब मिल कर आठ खिड़कियां हैं।

इधर दृष्टि डालिये। वह सामने उत्तर की ओर जो श्वेत भवन दीख पड़ता है वही श्रीमान् प्रेसीडेंट महोदय का विशाल गृह है। आजकल इसमें प्रेसीडेंट टाफ़्ट विराजमान हैं।

यह पूर्व की ओर जो गुम्बदनुमा छतरी वाला वृहत भवन दिखाई देता है वही राजधानी की प्रधान इमारत है। इसको चल कर देखेंगे।

इन दो भवनों के बीच में दूर तक निगाह दौड़ाइये—कैसा अपूर्व दृश्य है। उद्यानों की छटा कैसी मनोहर है। और ज़रा अधिक दृष्टि दौड़ाने से सुन्दर पहाड़ियों का नज़ारा भी

देखिये। इधर नज़र डालिये, पोटोमेक नदी क्या चक्कर काटती हुई जाती है। मीलों इसकी धारा की शोभा देखिये।

ज़रा इस पश्चिम का रङ्ग भी लूटिये। वह दूर वरजिनियां के नीले पर्वतों की श्रेणियां क्या सौन्दर्य दिखा रही हैं। प्रकृति की शोभा क्या कहिये। आहा! प्रभु की लीला अपरम्पार है।

सत्य है संसार के विषयों से ऊपर उठ कर, उनको नीचे छोड़—बन्धन काट देने से ही—सच्चा आनन्द मिल सकता है। ऊपर उठने से हमारी दृष्टि का (scope) फैलाव बढ़ता है, तङ्गदिली दूर होती है। 'कूप मंडूक' के क्षुद्र विचार नष्ट हो जाते हैं।

महात्माओं के कीर्ति स्तम्भ इसीलिये बनाये जाते हैं। जार्ज वाशिङ्गटन की महान आत्मा यही शिक्षा देती है। उसके कीर्ति स्तम्भ पर चढ़ने से उस महान् पुरुष के कारनामों का अनुभव होता है।

देखिये, दस तो यहीं बज गये। चलिये जल्दी, अभी बहुत कुछ देखना है।

\+ \+ \+ \+ \+

अच्छा, आइये अमेरिका के प्रेसीडेंट का घर (White House) श्वेत-भवन देखने चलें। रास्ते में स्मिथ सोनियन शाला (Institution) है उसकी भी झांकी लगाते चलेंगे, जातीय अजायबघर भी पास ही है उसका दर्शन भी हो जावेगा।

शायद आप स्मिथसोनियन-शाला का व्यौरा जानने के उत्सुक होंगे; लीजिये हम पहिले वही बताते हैं।

स्मिथसन नामी एक भद्र अंग्रेज़ वैज्ञानिक विद्या प्रचार का बड़ा प्रेमी था। उसने अपनी सारी जायदाद, जो पन्द्रह लाख रुपये के क़रीब मिलक़ीयत की थी, अमेरिकन गवर्नमेंट के नाम वसीयत कर दी ताकि उससे वाशिंगटन नगर में एक वैज्ञानिकशाला खोली जावे। उस शाला द्वारा विज्ञान सम्बन्धी बातों का प्रचार सर्वसाधारण तक करने का उद्देश्य इस उदार अंगरेज़ का था। यह बात १८२६ की है। अमेरिकन गवर्मेंट ने इस रक़म में और मिलाकर १८४६ में इस वैज्ञानिक शाला की बुनियाद डाली और इसका नाम दानी के नाम पर 'स्मिथ-सोनियनशाला' रखा।

यह तो इस शाला का इतिहास हुआ। बाकी अन्दर चल कर देखते हैं।

यह देखिये अमेरिका के असली बाशिन्दों के नामोनिशान! यह सारा कमरा ऐसी ही प्राचीन वस्तुओं से भरा हुआ है। अमेरिका के रेड इण्डियनों के घरों के नमूने देखिये—पांच चार लकड़ियां खड़ी करके उसे वे कपड़े से ढक लेते थे—बस हो गया घर! इनके तीर कमान, इनके देवी देवता, इनके पूजने के स्थान, सभी बालकपन के खिलवाड़ समान हैं। सभ्यता की यह प्रारम्भवस्था है। बस ऐसी ही पुरानी चीज़ें यहां दिखलाई गई हैं।

जातीय अजायब घर भी वैसा ही समझिये, जैसा कि अजायब घर होता है। भांति भांति के परिन्दों, जानवरों, पशुओं, कीड़ों आदि के नमूने दिखाये गये हैं।

आइये, ज़रूर और असली बातें देखने चलें।

\+ + + + +

यही सफ़ेद खम्भों वाला भवन (White House) कह-लाता है। अमेरिकन जाति के प्रेसीडेंट श्रीमान् टाफ़्ट् यहीं बिराजते हैं। यह प्रेसीडेन्टों के रहने की जगह है। प्रत्येक चार वर्ष उपरान्त अमेरिकन लोग अपने प्रधान का चुनाव करते हैं। यही प्रधान इनके प्रेसीडेंट, राजा, महाराजा, सभी कुछ हैं। चार साल बाद फिर चुनाव होता है और सर्वप्रिय पुरुष प्रेसीडेन्ट बनाया जाता है।

इस 'श्वेत भवन' की नींव अक्तूबर १७९२ में पूज्यवर जार्ज वाशिङ्गटन ने रखी थी। १७९९ में यह भवन बनकर तय्यार हो गया था। यह इमारत विरजिनिया पत्थर की है। इसकी लम्बाई १७० फ़ीट है और चौड़ाई ८६ फ़ीट।

अच्छा चलिये, ज़रा अन्दर चल कर देखें।

दरबान से आज्ञा लेनी आवश्यक है। यह पौधे क्या सुन्दर दीख पड़ते हैं। गरमियों में यहां कैसी बहार होती होगी। इस दूसरे दरबान से पूछ कर अन्दर चलते हैं।

यहां प्रेसीडेंट भवन के चीनी के बर्तन हैं। यह बहुत क़ीमती हैं। समय समय पर इनको इस्तेमाल करते होंगे। दीवारों पर इन देवियों के जीते जागते चित्र देखिये। यह तैल चित्र हैं। कारीगरों के हस्त कौशल का नमूना है। यह चित्र देवी टायलर का है और यह श्रीमती रूज़वेल्ट का।

जब कभी कोई रङ्गरलियां होती है तो इस भवन के ऊपर के हाल में प्रेसीडेन्ट अपने मित्रों का स्वागत किया करते हैं।

इस हाल की सजावट अपूर्व है। इन मेज़ों पर सुनहला काम देखिये। वे सामने की दीवारों पर जो शीशे टंगे हैं उनकी क़ीमत बहुत अधिक जान पड़ती है। खिड़कियों के परदों की शोभा निराली है। छत में सोने का काम भी सराहनीय है।

कुछ ही हो, हमारे राजे महाराजाओं को ये नहीं पहुंचते। उनके भवनों का सौन्दर्य इनसे कई गुना बढ़कर होता है।

\+ + + + +

घड़ी में इस समय एक बज गया है। नाश्ता करके फिर राजधानी का वृहत् भवन देखने चलेंगे।

\+ + + + +

राजधानी के इस वृहत्भवन की शोभा सचमुच दर्शनीय है। इस इमारत की बनावट में महानता है। इसका बड़ा गुम्बद क्या कहता है? उस गुम्बद की लालटेन—और उस लालटेन के ऊपर! आहा! साक्षात् स्वतन्त्रता देवी की मूर्त्ति! यही देवी सर्वसिद्धियां दायिनी है। यही मोक्ष मातृ भगवती है। देवी के दाहिने हाथ में तलवार है और बायें हाथ में फूलों की माला। इस मूर्त्ति को देखने से मन में क्या पवित्र और उच्च भाव उठते हैं। लेखनी में वर्णन करने को शक्ति कहां!

देवी के सिर पर अमेरिकन झण्डे की चद्दर है। ख़ैर, यह तो अपनी अपनी श्रद्धा है।सूर्य वंशियों ने सूर्य्य चित्रित, चद्दर भेंट की; चन्द्रवंशियों ने चन्द्र चित्रित, और जिनके पास भेंट धरने को कुछ नहीं है उन्होंने अपनी आंहों से ही देवी के पैर चूमें।

देवी को नमस्कार करके अन्दर चलते हैं।

इस दरबान के साथ चल कर देखना ठीक होगा, क्योंकि इसके साथ चलने से कई नई बातों का पता लग जावेगा। मध्य के चक्कर से आरम्भ करते हैं।

गुम्बदनुमा इस बड़े चक्कर को राजधानी के वृहत्भवन का केन्द्र समझिये; बाक़ी सब कमरे इसके इर्द गिर्द हैं। इस गोलघर के गुम्बद पर 'अमेरिका देवी' की मूर्त्ति है। यह क्या

जना रही है? गौर से देखिये। इसके पांओं पर गिद्ध अपने पङ्ख फैलाये है; इस मूर्ति की ढाल 'यूनाइटेड स्टेट्स, इस नाम से अङ्कित है और यह ढाल एक वेदी पर आश्रित है। उस वेदी पर क्या खुदा है—

"July 4, 1776"

१७७६ सन् की चौथी जूलाई। उस दिन अमरीका (यूनाइटेड-स्टेट्स) का जन्म हुआ था। उस दिन अमेरिका के सच्चे पुत्रों ने (Declaration of Independence) स्वतन्त्रता की घोषणादी थी। यह दिन अमेरिका का पवित्र दिन है और प्रत्येक वर्ष इस दिन बड़ा उत्सव मनाया जाता है।

अमेरिका-देवी का ध्यान किस ओर है? देवी आशा-पूर्ण ध्यान से न्यायाश्रित सात सेपटेम्बर, १७८७, के नियमबद्ध व्यवस्था पत्र (Constitution) को सुन रही है।

यह मूर्ति बड़े पवित्र भाव उत्पन्न करती है। क्या हम उनका उल्लेख यहां पर कर सकते हैं?

इसका उत्तर हम नहीं देते। चलिये आगे बढ़ें, घड़ी में तो तीन से ऊपर हो गये हैं।

गोलघर की दीवारों पर के चित्रों पर दृष्टि डालिये। यह भी तैल चित्र हैं। पहिला चित्र भूगोलवेत्ता कोलम्बस की आमद का है। जब आप अक्तूबर १२, १४९२ को सेनसालवेडार में उतरे थे। दूसरे तीसरे चित्र न जाने किस के हैं। चौथा देखिये। यह (Pilgrims) यात्रियों का है जो इङ्गलिस्तान के अन्याय से भाग कर अमेरिका आ बसे थे। पांचवां चित्र 'घोषणापत्र, सम्बन्धी है जब अमरीकन बस्तियों के नेताओं ने इङ्गलिस्तान से पृथकता ग्रहण कर अपने आपको स्वतन्त्र किया था। छठा चित्र जनरल बरगायनी की अधी–

नता (हार मानने) का है। इस युद्ध में अंङ्गरेज़ी अफसर ने परास्त हो अपने हथियार अमेरिकनों को सौंपे थे। सातवां चित्र कार्नवालिस की परास्त का है। जनरल कार्नवालिस अङ्गरेज़ी फौजों के मुखिया थे। इनकी हार पर अमेरिकन युद्ध का अन्त हुआ था। आठवां चित्र उस समय का है जब जनरल वाशिंङ्गटन ने मातृभूमि की सेवा कर, उसके बन्धन काट, उसे स्वतन्त्र कर बाद में अपने आप को माता का एक साधारण पुत्र बनाया था। यह चित्र बड़े महत्व का है। "आत्म-समर्पण" का सच्चा उदाहरण है। फौजों की सारी शक्ति जनरल वाशिङ्गटन के हाथ में थी। वे चाहते तो नेपोलियन की भांति देश को अपने क़ाबू में कर लेते। मगर नहीं, उस वीर को माता का सच्चा प्रेम था।

\+ + + + +

आज कांग्रेस का इजलास हो रहा है। चलिये ज़रा उसकी ओर भी निगाह डालते चलें। यहां तो इतनी भीड़ है। बारी, बारी अन्दर गेलरियों में आने देते हैं। अपनी बारी पर हम लोग भी घुस चलेंगे।

हैं! यह क्या! नीचे हाल में तो थोड़े ही मेम्बर हैं। कुरसियां खाली हैं। एक सेनेटर व्याख्यान भी दे रहा है सुनने वाले, चार दस ही हैं। हां गेलरियों में स्त्री पुरुष भरे हैं। यह क्यों? इसका रहस्य बाद में मालूम होगा। यहां का वृत्तान्त किसी से पूछेंगे।

सेनेट का यह 'हाल' खासा बड़ा है। इसकी दीवारों की सजावट में सोने का काम बहुत है और चित्र विचित्रता का तो कहना क्या। छत, दीवार शीशा आदि सभी कलाकौशल के नमूना हैं। देश के महान पुरूषों को सभी जगह स्थान

दिया गया है; उनकी प्रतिष्ठा की गई है। हाल में कुरसियां अर्द्ध चन्द्राकार चुनी हुई हैं। प्रत्येक कुरसी के आगे एक एक डेस्क है। प्रेसीडेण्ट का डेस्क बीच में प्लेटफार्म पर है।

अब अधिक क्या देखना है। चलते हैं। सारा दिन घूमते फिरते थक गये। बाकी फिर कभी सही। आज इतनी ही सैर समझिये। यदि फिर किसी दिन छुट्टी हुई, तो बाकी भाग की भी सैर करवाएंगे। इससे अधिक यदि देखें भी तो मज़ा नहीं आवेगा, क्योंकि दिमाग़ थक गया है; अधिक ग्रहण नहीं करता।

शिकागो-विश्वविद्यालय ।

इस लेख में मेरा आशय केवल शिकागो-विश्वविद्यालय की बड़ी बड़ी इमारतों का वर्णन करना नहीं, किन्तु भारतवर्ष के विद्या प्रचार सम्बन्धी महत्व पूर्ण प्रश्न पर विचार करने का भी है। मुझे अमेरिका के शिकागो-विश्वविद्यालय के उदाहरण द्वारा यह दिखलाना है कि किस प्रकार भारत वर्ष के कालेज और पाठशालायें विश्वविद्यालय के रूप में होकर देश के लिये लाभकारी हो सकती हैं ? किस प्रकार अमरीका में नवयुवकों को आत्मसहाय की शिक्षा दी जाती है ? किस प्रकार अमेरिका के धनाढ्य पुरुष अपनी सम्पति को देश के उपकारार्थ अनेक प्रकार के विज्ञान-सम्बन्धी कालेज और स्कूल खोल कर ख़र्च करते हैं ? इस लेख के पढ़ने से यह भी ज्ञात होगा कि अमरीका के बच्चों की शिक्षा का सारा सम्बन्ध उन्हीं के माँ-बाप के हाथों में है। क्या ईसाई, क्या मुसलमान, क्या यहूदी क्या मारमन क्या थियासोफ़िस्ट, सभी विद्यार्थियों के पठन-पाठन का एक सा प्रबन्ध है।

यह नहीं कि लोग अपनी ढाई चावल की खिचड़ी अलग ही पकाते हों। सब कहीं प्रेम और एकता का अखंड राज्य है। एक दूसरे के अधिकारों के लिये एक सा ध्यान है। यही कारण है कि प्रशान्त महासागर से लेकर एटलांटिक महासागर तक सब अमेरिका निवासी अपनी जाति की उन्नति में

दत्त चित्त हैं और संसार की समृद्ध उनके सामने हाथ बांधे खड़ी है।

सबसे पहिले मैं उस धर्मात्मा, सदाचारी, विद्वान-शिरोमणि पुरुष का परिचय आप से कराता हूं, जिस के पुरुषार्थ से शिकागो-विश्वविद्यालय इस प्रसिद्धि को पहुंचा है। उस महा-पुरुष का नाम विलियम रेने हारपर है। आपने शहर निउ कनकार्ड (New Concord Ohio) के हाई स्कूल में विद्याध्ययन प्रारम्भ किया और मस्किङ्गम नामी कालेज से १४ वर्ष की उम्र में बी० ए० की पदवी प्राप्त की। इसके बाद आप तीन वर्ष तक भाषाओं का अध्ययन करते रहे। १८७३ में उन्होंने अमेरिका की प्रसिद्ध यूनीवर्सिटी येल (Yale) में पढ़कर Ph. D. (दर्शनशास्त्र के आचार्य्य) की पदवी पाई।

इसके उपरान्त कई विश्वविद्यालयों में आप अध्यापक तथा अधिष्ठाता रहे। १८९१ में शिकागो के पुराने विश्वविद्यालय के प्रेज़ीडण्ट नियत हुये; और १८९१ से लेकर १९०६ के जनवरी मास तक तन मन से उसकी सेवा करते हुए परलोकगामी हुये।

यह इन्हीं महाशय के परिश्रम, निःस्वार्थभाव और विशाल बुद्धि का प्रभाव था, जिससे शिकागो विश्वविद्यालय का नाम एक साधारण कालेज से १४ वर्ष के अन्दर संसार के बड़े बड़े विश्वविद्यालयों की गणना में आने लगा। इन्हीं के प्रभाव से अमेरिका के प्रसिद्ध धनी जान डी० राकफेलर ने इनके विद्यालय के लिये ३ करोड़ ३० लक्ष रुपया दिया। इनके वाक्य को कोई नहीं टालता था। जिससे जाकर कहते कि विश्वविद्यालय के लिये अमुक वस्तु की आवश्यकता है वह इनका वचन ज़रूर पूरा करता था।

एक बार इनको अपने विद्यालय के लिये एक दूरबीन दरकार हुई। आपने शिकागो के धनाढ्य पुरुष यरकस साहब से कहा। उन्होंने तत्काल इनकी बात मान ली और बड़ी दूरबीन मंगादी जो दुनियां भर में सब से बड़ी थी।

यद्यपि हमारे देश में भी ऐसे ऐसे महापुरुष हैं जिनकी इच्छा मात्र से विद्यालय खुल सकते हैं; परन्तु उन्होंने दान का उचित प्रयोग अभी तक करना ही नहीं सीखा। जिस दिन हमारे देश के सत्पुरुष जाति के उन्नति के मर्म को समझेंगे, उसी दिन कला-कौशल और विज्ञान शिक्षा का प्रबन्ध होने में देर न लगेगी।

१८८६ ई० में शिकागो नगरी के बेपटिस्ट सम्प्रदाय के धनाढ्य पुरुषों ने एक साधारण कालेज की स्थापना की। १८९१ ई० में, प्रेज़ीडेण्ट हारपर, कालेज के प्रधान नियत हुये। तब उन्होंने उसे विद्यालय का रूप देना चाहा, जिसका सम्बन्ध किसी ख़ास सम्प्रदाय या जन-समुदाय के साथ न हो; जिसमें सब तरह के स्वतन्त्र विचारवाले प्रोफ़ेसर शिक्षा दे सकें। मतलब यह कि किसी की विचार-स्वतन्त्रता में बाधा न आवे। प्रेज़िडेण्ट हारपर स्वयं बड़े स्वतन्त्र प्रकृति के मनुष्य थे। वह जानते थे कि जिस स्कूल या कालेज में विचार स्वतन्त्रता नहीं; जहां के प्रबन्धकर्ताओं के विचार संकीर्ण हैं, वहां के विद्यार्थी कभी उदाराशय नहीं हो सकते। वे जानते थे कि साम्प्रदायिक कालेजों के विद्यार्थियों के विचार अवश्य ही संकीर्ण होते हैं, इससे वे अपने भविष्य जीवन में जनसमाज को पूर्ण लाभ नहीं पहुँचा सकते। उनके इस विचार की यथार्थता हम अपने देश में देखते हैं। भारतवर्ष में पृथक् पृथक् मतों और सम्प्रदायों के कई कालेज और पाठशालाएँ हैं।

भारतनिवासियों की चेष्टा सदा अपनी अपनी झोपड़ी अलग बनाने की रहती है। यही कारण है कि एक कालेज वाले दूसरे से द्वेष रखते हैं। एक मत दूसरे को देख नहीं सकता। यदि ऐसी पाठशालाएँ और कालिज बनाने की चेष्टा की जाय जहां क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, क्या सिख, क्या बौद्ध, क्या जैनी क्या ईसाई सभी विद्यार्थियों के लिए एक सा प्रबन्ध हो, और हर एक विद्यार्थी को दूसरे के साथ उठने, बैठने, मिलने, और बातचीत करने का अवसर मिलता रहे, तो उनमें सहनशीलता ज़रूर आ जाय। वे दूसरे के विचार प्रेम से सुनने के आदी हो जायँ; और विचारों की भिन्नता होने पर भी द्वेष करना छोड़ दें। क्योंकि उन्नति बिना भिन्न विचारों के नहीं हो सकती। इस बात का विस्तृत विचार मिल साहब ने अपनी "स्वाधीनता" नामक पुस्तक में किया है।

प्रेज़िडेंट हारपर अपने विचार और उद्योग में सफल मनोरथ हुए। १० एकड़ भूमि मारशल फ़ील्ड ने दी। विश्व-विद्यालय की इमारतें बनना प्रारम्भ हुईं। १८९२ में मतलब भर के लिए इमारतें तैयार हो गईं। उस समय केवल ६०० विद्यार्थी थे, जिनके लिए ४ इमारतें काफ़ी हुईं। आज तक २८ इमारतें और बन गई हैं; और दस एकड़ भूमि से १४० एकड़ भूमि यूनिवर्सिटी के अधिकार में आ गई है। इस समय शिकागो-विश्वविद्यालय की जायदाद ५ करोड़ ४० लाख रुपए की है।

विश्वविद्यालय के नियमानुसार कालेज के विद्यार्थी दो विभागों में विभक्त हैं—Senior College Students (ऊंचे दरजे के विद्यार्थी) और Junior college Students (नीचे दरजे के विद्यार्थी)। नीचे दरजे के विद्यार्थियों के भी दो विभाग

हैं—Freshmen (नवीन) और Associates (सहचर या पुराने)। नवीन विद्यार्थी वे कहलाते हैं जो हाई-स्कूल में परीक्षोत्तीर्ण होकर कालेज में भरती होते हैं। उनको कालेज में भरती होने के लिए १५ "यूनिट" (एक "यूनिट" १५० घण्टे का होता है) का काम दिखलाना पड़ताहै। उनमें से तीन "यूनिट" अंगरेज़ी, २½ "यूनिट" गणित (जिसमें रेखागणित और बीजगणित भी शामिल हैं), तीन "यूनिट" यूनानी, लातिनी या जरमन भाषाएँ, दो "यूनिट" अमरीका और योरप का इतिहास। बाक़ी ४½ "यूनिट भिन्न भिन्न विषय। यथा—Botany (वनस्पति-विद्या), Zoology (प्राणिधर्म-विद्या) Physiology (दैहिकधर्म-विद्या) Chemistery (रसायन विद्या) Physics (भौतिकविद्या) Astronomy (ज्योतिःशास्त्र), Mecharics (यंत्रविद्या), Political Economy (सम्पत्ति-शास्त्र), Drawing (नक़शा-निवासी) आदि।

जिस विद्यार्थी ने किसी अच्छे हाई स्कूल में १५ "यूनिट" का काम न किया हो वह कालेज में भरती नहीं हो सकता। कालेज में दाख़िल होने के उपरान्त नौ "यूनिट" का काम पूरा करने पर उसे एसोसिएट की पदवी मिलती है। फिर वह Senior College (ऊंचे दरजे के कालेज) में प्रवेश पाने का अधिकारी होता है।

विश्वविद्यालय में A.B. (ए० बी०) Ph. B. (पी एच० बी०) (B. Lt.) (बी० एलटी०), (B, S.) (बी० एस०) Ed. B (ईडी० बी०), तथा A. M. (ए० एम०), Ph. D. (पी-एच० डी०), D. D. (डी० डी०) और LL. D, (एलएल० डी०) आदि की पदवियाँ दी जाती हैं।

विश्वविद्यालय का वर्ष जाड़ा, गरमी, वसन्त और पतझड़ के नाम से तीन तीन महीने के चार भागों या क्वारटरों में बँटा हुआ है। प्रत्येक भाग या क्वाटर १२ हफ़्ते का होता है। प्रत्येक हफ़्ते में ४ या ५ दिन पढ़ाई होती है। प्रत्येक विद्यार्थी तीन या चार विषयों से अधिक नहीं ले सकता। उदाहरण के तौर पर मैंने एक जोड़े के क्वारटर में अंगरेज़ी, सोसियालोजी (समाजशास्त्र) और पोलिटिकल सायँस (राजनीति विज्ञान) लिये थे। तीन घंटे रोज़ की पढ़ाई है, जिसके लिये ४० रुपये महीना फ़ीस है। यदि एक विषय और अधिक लिया जाय तो २० रुपये और देना पड़ता है। अर्थात् ४ विषय लेने वाला विद्यार्थी ६० रुपये महीना फ़ीस देता है।

एक क्वारटर की पढ़ाई का नाम एक मेजर है। जिस विद्यार्थी को बी० ए० की पदवी लेनी है उसको ऐसे ऐसे ३६ मेजर पूरे करने पड़ते हैं। दूसरी पदवियों के लिये अन्तर केवल विषयों में हैं। सायन्स (विज्ञान) की पदवी के लिये कुछ विषय जुदा हैं; और साहित्य के लिये भी। बाक़ी ३६ मेजर सब के लिये एक से हैं। विद्यार्थियों को व्यायाम और वक्तृता का भी अभ्यास करना पड़ता है, जिसके लिये जुदा प्रोफ़ेसर हैं।

यह आवश्यक नहीं की विद्यार्थी लगातार ही पढ़ने पर पदवी पा सकता है। कई वर्षों का अन्तर देकर विद्यार्थी अपनी पढ़ाई को पूरा करते हैं, और पदवियां पाते हैं। क्योंकि धन का अभाव होने से कोई कोई विद्यार्थी एक साल रुपया कमाते हैं, दूसरे साल पढ़ते हैं। वहां की परीक्षाएं हमारे देश की भांति नहीं हैं। आवश्यकता केवल नियमानुकूल

विद्यार्थी होने की है। जो विद्यार्थी कालेज में प्रोफ़ेसर के बतलाये कार्य्य को लगातार करता है उसको अवश्य ही पदवी मिल जाती है। यहां विद्या का अभिप्राय किताबी कीड़े बनाना नहीं, किन्तु उसका उद्देश्य व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त करना है।

यूनिवर्सिटी में विद्यार्थियों के रहने के लिये बड़े बड़े तीन हाल हैं। उसमें से हिचकाक हाल सब से अच्छा है। दूसरा स्नेल हाल। तीसरा डिविनिटी हाल। हिचकाक हाल में ४०, ५० रुपये मासिक तक के कमरे हैं, जहां प्रायः धनाढ्य विद्यार्थी रहते हैं। स्नेल हाल में २० रुपये महीने के कमरे हैं। डिविनिटी-हाल उन विद्यार्थियों के लिये है जो इञ्जील और अन्य धर्म-सम्बन्धी ग्रन्थ पढ़ते हैं, अर्थात् जिनका उद्देश अपने जीवन में धर्मसम्बन्धी कार्य्य करना है। वहां १५ रुपये मासिक तक के कमरे हैं। यह नहीं समझना चहिये कि कमरों की बना-वट या सफ़ाई आदि में न्यूनता होने से किराये में भेद है। नहीं। भेद है सामान और लम्बाई चौड़ाई के कारण।

काब लेकचर हाल में (Information Burean) है। वहां सब बातों का पता मिलता है। विद्यार्थी अध्यापक या विश्वविद्यालय संबन्धी जो पूछना चाहो वहां से पूछ सकते हैं। यहीं पर डाकख़ाना और अन्यान्य दफ़्तर हैं। यहां पर (Correspondence Burean) पत्र-व्यवहार महकमे का दफ़्तर है, जहां से देशों में बैठे हुए विद्यार्थी शिकागो विश्वविद्यालय से, पत्र व्यवहार द्वारा, पदवियाँ प्राप्त करते हैं। जिनको इस विषय में अधिक जानना हो वे इस दफ़्तर से सब बातें पुछ सकते हैं।

काब-हाल में भाषा शास्त्र सम्बन्धी अंगरेज़ी पुस्तकालय भी है। शिकागो विश्वविद्यालय के सभी विभागों के साथ अपना अपना पुस्तकालय है। इतिहास विभाग का पुस्तकालय पृथक् है। विज्ञान संबन्धी पुस्तकालय भी जुदा जुदा हैं। यहां विद्यार्थियों के लिए एक बेङ्क भी है। यदि कहीं से कोई चेक रसीद या हुण्डी किसी विद्यार्थी के नाम आवे तो उसको उसका रुपया विश्वविद्यालय में ही मिल जाता है। किसी और बेङ्क में जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

एजुकेशन स्कूल में वे विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं जिनको अपने भविष्यजीवन में अध्यापक बनना है। सब प्रकार की सामग्री उनके लिए यहां एकत्र है। किण्डरगारटन से लेकर पी एच० डी० (Ph. D.) तक की शिक्षा यहां पर दी जाती है। इसके साथ एक हाईस्कूल है। वहां वे विद्यार्थी पढ़ते हैं जिनको किसी ख़ास विषय की पूर्ति करके पदवी प्राप्त करनी है। जैसे कोई विद्यार्थी भारतवर्ष से वहां पढ़ने जावे। उसको ए० बी० (A. B.) की पदवी प्राप्त करनी है। परन्तु हाईस्कूल में उसने, यूनानी, लातिनी या जरमन, किसी भाषा की शिक्षा १५ "यूनिट" तक नहीं पाई, तो वह एक मुस्तसना विद्यार्थी (Unclassified Student) के तौर पर विश्वविद्यालय में दाख़िल होकर ए० बी० (A. B.) की पाठ्य पुस्तकादि पढ़ता रहेगा; वह अपनी कमी को उस हाईस्कूल में पूरा करेगा। जब उसके तीन "यूनिट" किसी भाषा में पूरे हो जावंगे तब ए० बी० (A. B.) का कोर्स पूरा करने पर उसे वह पदवी मिल जायगी।

हेस्कल ओरयण्टल म्यूज़ियम (अजायब घर) में प्रेज़िडेण्ट, हेनरी प्रेट जड़सन, का दफ़्तर है। वही आज कल

विश्वविद्यालय के अधिष्ठाता हैं। इनका दफ़्तर पहिली मंजिल पर है। दूसरी मंजिल पर बाईं तरफ़ पुस्तकालय है, जहां धर्मसम्बन्धी पुस्तकें रहती हैं। दाहिनी तरफ़ देश देशान्तरों के विचित्र पदार्थ हैं। तीसरी मंज़िल पर बाईं तरफ़ भारत के देवी देवता विराजमान हैं। जैनियों और बौद्धों की तसवीरें तथा पीतल की मूरतें भी हैं। इनके सिवा अन्य मतावलम्बियों के देवता भी यहां हैं। दाहिनी तरफ़ एशिया के अन्यान्य देशों के चित्र आदि हैं। यहां धर्माध्यक्ष पादरी (Missionaries) तैयार किये जाते हैं जो संसार में खीष्ट धर्म का प्रचार करते हैं।

यहां पर ऊंचे दरजे की वनस्पति विद्या की शिक्षा दी जाती है। इसके लिये एक आलीशान इमारत अलग है। इसकी सब से ऊँची छत पर एक २१०० वर्ग फ़ीट का एक सब्ज़-घर (Green house) है। उसके साथ "एलिवेटर" (खटोला) है जो ऊपर नीचे जाने आने का साधन है। प्रत्येक श्रेणी के विद्यार्थियों को इस सब्ज़ घर में, भाँति भाँति के पौधों और वनस्पतियोँ की प्रत्यक्ष पहिचान कराई जाती है और उनकी बनावट तथा वृद्धि आदि के नियम समझाये जाते हैं। इस इमारत में एक सब से बड़ी प्रयोगशाला नये विद्यार्थियों के लिये है। दूसरे विद्यार्थियों के लिये कई एक छोटी छोटी प्रयोगशालायें हैं। उनमें भिन्न भिन्न प्रकार के खोज और परीक्षा के काम होते हैं।

यहां की रासायनिक प्रयोगशाला व्याख्यानदाताओं और रसायन विद्या के छात्रों के लिए है। यह इमारत १८६२ में सिड़नी ए० केएट महाशय ने यूनिवर्सिटी को दान दी थी। उन्हीं के नाम से यह मशहूर है। १८६४ की १ जनवरी को, सात

लाख ११ हज़ार रुपया इसको इस अवस्था में लाने के लिये ख़र्च हो जाने पर, यह भवन छात्रों के उपयोग के लिये खोला गया था। इसमें तीन छतें हैं जिसमें रसायन सम्बन्धी सब काम करने के लिये जुदा जुदा कमरे हैं। जो विद्यार्थी अपनी सारी उम्र रसायन विद्या ही में लगाना चाहते हैं उनके लिये सब तरह की सामग्री इसमें है। इस केण्ट-भवन में एक नाट्यशाला (थियेटर) भी है जहां पर व्याख्यान, नाटक तथा रङ्गभूमि पर आने वाले को पूरी तरह से शिक्षा दी जाती है। व्याख्यानदाता प्रायः इसी भवन की नाट्यशाला में व्याख्यान, देते हैं। समर कार्टर (Summer Quarter) में जो व्याख्यान, बिना टिकट के, कालेज के छात्रों के लाभ के लिये दिलवाये जाते हैं वे यहीं पर होते हैं। अमरीका के प्रधान प्रधान विश्व-विद्यालयों के योग्य अध्यापक, शिकागो में आकर, यहां के विश्वविद्यालय की ओर से व्याख्यान देते हैं।

यहां पर जो "क्लब" है उसका नाम रेनल्ड क्लब है। यह "क्लब" विश्वविद्यालय के छात्रों के उठने, बैठने, मिलने और वार्त्तालाप आदि के लिये है। यहां दो तीन बड़े बड़े कमरों में "पियानो" बाजे रखे हैं जहां छात्र लोग, फुरसत के वक्त हँसते खेलते और गाते बजाते हैं। यहां सब प्रकार की सामयिक पुस्तकें और दैनिक, साप्ताहिक आदि पत्र आते हैं। खेलने के लिये जुदा जुदा कमरे हैं। यह क्लब विद्यार्थियों में प्रेमभाव और मित्रता उत्पन्न करने का अच्छा साधन है इस "क्लब" की दाहिनी तरफ़ विश्वविद्यालय का सब से बड़ा "हाल" है इसको मेंडल हाल कहते हैं। यहां रविवार को, तथा और और अवसरों पर भी, व्याख्यान और धार्मिक शिक्षा होती है। यह "हाल" अति विशाल और दर्शनीय है।

बाईं ओर भोजनशाला और रसोईघर हैं। सवेरे दोपहर और रात को विद्यार्थी यहां भोजन करते हैं। विद्यार्थी ही परोसने और पकाने वाले हैं। भोजन के समय यहां बड़ा आनन्द आता है। सब लोग प्रेम से एक दूसरे से वार्त्तालाप करते हुए भोजन करते हैं; किसी से घृणा नहीं। जो विद्यार्थी परोसते या पानी देते हैं उनके विषय में किसी के मन में ऊंच नीच का भाव नहीं। जो छात्र निर्धन होने के कारण, अपने श्रम से धन कमाकर विद्याभ्यास करते हैं उनको यहां कोई दुर्दृष्टि से नहीं देखता। जनसमाज में उलटा उनकी अधिक प्रतिष्ठा होती है। यही कारण है कि अमरीका में निर्धन माता पिता का पुत्र संयुक्त राज्यों का प्रेसीडेंड हो सकता है। विपरीत इसके भारतवर्ष के धन सम्पन्न लोग अपने निर्धन देशभाइयों से घृणा करते हैं। उनके उपकार के लिये वे बहुत कम दत्तचित्त होते हैं। भला जब अपने ही देशवासियों से लोग प्रेम नहीं रखते; जब उन्हीं के विषय में ऊंच नीच भाव रखते हैं, तब कैसे उन्नति हो सकती है?

रीयरसन साहब का बनाया हुआ भौतिक परीक्षागृह (Physical Laboratory) भी यहां देखने योग्य है। इसे देख कर मालूम होता है कि विद्या के प्रेमी किस प्रकार वैज्ञानिक उन्नति के लिये धन व्यय करते हैं। इसकी बनावट ऐसी है जिससे सूक्ष्म से सूक्ष्म प्रयोग करने में कोई विघ्न न हो। दीवारों और छतों में आवश्यकतानुसार नलियों के ले जाने के लिये सूराख़ हैं। दूसरी छत पर परीक्षा और प्रयोग्य करने वालों के लिये सब तरह का सामान है। यहां पर विद्यार्थियों का एक कारख़ाना भी है जिस यन्त्र की आवश्यकता होती है वह यहां तत्काल बना लिया जाता है। सब से नीचे के

तहखाने में तीन Dvnamos (डाइनामोज़=यन्त्रविशेष) और एक यंजिन गरमी पहुंचाने के लिए है।

क़ानूनी शिक्षा के स्कूल की बनावट केम्ब्रिज (इंगलैंड) के प्रसिद्ध किंग्ज़ कालेज (King's College) की ऐसी है। जिसने उस कालिज को देखा है वही समझ सकता है कि यह स्कूल कितना रमणीक और विशाल होगा। इसके साथ एक बहुत बड़ा पुस्तकालय है। एक बड़ा "हाल" विद्यार्थियों के अभ्यास के लिए भी है। जुदा जुदा मेज़ों पर प्रायः चुपचाप बैठे हुए छात्र अपने अपने पाठ में मग्न देख पड़ते हैं। पुस्तकें सामने की भीतों से सटी हुई अलमारियों में रखी रहती हैं। जिस पुस्तक की आवश्यकता हो, फ़ौरन वहाँ से मिल सकती है; यहाँ ऐसा सुप्रबन्ध है कि पठन पाठन में ज़रा भी विघ्न नहीं होता।

अमरीका और योरप में स्त्रियों का बड़ा आदर है। उनके विद्याभ्यास और शारीरिक तथा मानसिक उन्नति का वैसा ही अच्छा प्रबन्ध है जैसा कि पुरुषों के लिए। स्त्री. पुरुष का आधा अङ्ग है — यह बात विशेष करके इन्हीं देशों में देख पड़ती है। शिकागो विश्वविद्यालय में क्या स्त्री, क्या पुरुष, सभी विद्याभ्यास करते हैं। कालेज में स्त्री अध्यापिकायें भी हैं। पुरुषों के रहने के लिए कई बड़े बड़े घर तो हैं ही, स्त्रियों के लिए भी एक विशाल भवन है। स्त्रियों के क्लब भी जुदा हैं; भोजन-शालायें जुदा हैं; व्यायाम-शालायें जुदा हैं। व्यायाम-शालाओं में उन्हें सब प्रकार के खेल सिखलाये जाते हैं। उनके तैरने के लिए सुन्दर स्वच्छ जल का एक तालाब है। समाज की शारीरिक, मानसिक,

और आत्मिक उन्नति तभी हो सकती है जब हमारी मातायें, हमारी बहनें, हमारी कन्यायें भी सब कामों में उन्नति करें। भारतवर्ष में स्त्री शिक्षा के अभाव को देखकर दुःख होता है। क्या वह जाति कभी उन्नति के शिखर पर पहुंच सकती है जहां स्त्रियों की अधोगति हो? अकेले पुरुषों के किये देशोद्धार नहीं हो सकता। इसे सच मानिये।

इनके सिवा यहां के विश्वविद्यालय की बहुत सी और भी इमारतें हैं। खेल कूद कसरत के लिए एक बहुत बड़ा "जिमनैज़ियम" (Gymnasium) है। फुटबाल खेलने के लिए एक चौड़ा मैदान है, जहां प्रत्येक शनिवार को सैकड़ों स्त्री पुरुषों की भीड़ खेल देखने के लिये एकत्र होती है। एक सर्वसाधारण पुस्तकालय है जो सवेरे ८½ बजे से शाम के ५½ बजे तक खुला रहता है। तीन लाख रुपया खर्च करके विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने एक बहुत बड़ा पुस्तकालय बनवाया है, पुस्तकालय के पास एक भौतिकशक्ति-गृह (Power House) है जहाँ से भाफ बड़े बड़े नलों में होती हुई विश्वविद्यालय की सब इमारतों के कमरों में पहुंचती है। बिजली का एक यन्त्रालय (Electric Plant) है, जिससे सब कमरों में बिजली का प्रकाश पहुंचता है। पौष के महीने में, गलियों और मकानों पर कई फुट बर्फ जमी रहती है। कमरे में बैठे हुए लोगों को जाड़ा नहीं लगता। उष्ण भाफ के यन्त्र कमरे को गरम रखते हैं। बाहर १० या १५ दरजे शून्य से नीचे तापमान (Temperature) हो, परन्तु कमरे में ७० दरजे की गरमी होती है। विश्वविद्यालय की सड़कों के नीचे भाफ के बड़े बड़े नल लगे हैं जो सड़कों की बर्फ को पिघला देते हैं इससे विद्यार्थियों को आराम रहता है।

अब, अन्त में, मुझे इस बात का विचार करना है कि शिकागो-विश्वविद्यालय विद्यार्थियों के लिये क्यों अधिक लाभकारी है ? शिकागो व्यापार की बहुत बड़ी मण्डी है। हज़ारों कारख़ाने, गोदाम और बड़े बड़े व्यापारियों के कारोबार यहां हैं। यहां ऐसे ऐसे कारखाने हैं जहां आदमियों की सदैव आवश्यकता रहती है। इसलिए बहुत से विद्यार्थी, जो धन के अभाव से और कहीं कालेज में नहीं पढ़ सकते, यहां चले आते हैं। विश्वविद्यालय में नौकरी दिलाने का भी एक महकमा है उसका सम्बन्ध सभी बड़े बड़े कारख़ानों से है। विद्यार्थी जैसा काम कर सकता हो वही काम तीन चार घंटे करके वह अपने ख़र्च के लिए रुपया पैदा कर सकता है। सैकड़ों विद्यार्थी इसी तरह यहां पढ़ते हैं। विश्वविद्यालय ने एक कम्पनी भी ऐसी बना रक्खी है जो होनहार निर्धन विद्यार्थियों को १००० रुपये वार्षिक तक क़र्ज़ देती है, पर उन्हीं को जो तीन चार वर्ष के अन्दर विना सूद के रुपया अदा करने का प्रण करते हैं। यहां एक और भी महकमा है जहां कोई १७५ विद्यार्थी विश्वविद्यालय के प्रबन्ध सम्बन्धी काम करके अपनी फ़ीस का रुपया कमा लेते हैं। ४० या ५० छात्र भोजन-शाला में दो घण्टे रोज़ काम करके अपने भोजन का ख़र्च निकाल लेते हैं। इस विश्वविद्यालय के अध्यापक बहुत योग्य, उदार और सुशील हैं। इसलिए अमरीका के प्रत्येक प्रान्त के विद्यार्थी यहां पढ़ने आते हैं।

यहां के विश्वविद्यालय की इमारतें शहर के बाहर, मिशेगन नामकी झील के दूसरी तरफ़ हैं। उनके इर्द गिर्द सुन्दर सुन्दर बाग़ और पुष्पवाटिकायें हैं। इससे इमारतों की शोभा दूनी

हो गई है। यही कारण है जो शिकागो-विश्वविद्यालय दूर दूर के विद्यार्थियों को आकर्षित कर लेता है। यहां विद्यार्थियों को सब तरह की स्वतन्त्रता है। जहां चाहें जायं; जहां चाहें घूमें। किसी प्रकार की रोक टोक नहीं।

प्यारे पाठक! मैंने आपको, संक्षेप से, अमरीका के एक बड़े भारी बिश्वविद्यालय का वृतान्त सुनाया और उसकी शिक्षा-प्रणाली का भी कुछ वर्णन किया। अब आप सोचिये कि क्या भारत वर्ष के जुदा जुदा कालेज एक यूनिवर्सिटी—एक विश्वविद्यालय—के रूप में नहीं लाये जा सकते? मैं तो कोई रुकावट इसमें नहीं देखता। यदि हिन्दू कालेज, अलीगढ़ कालेज, खालसा कालेज, डी० ए० वी० कालेज अमरीका का यूनिवर्सिटियों की भाँति हो जाय और अपने विद्यार्थियों को सरकारी परीक्षाओं के पचड़े से निकाल, नियमानुकूल विद्याभ्यास करने पर, उन्हें पदवियां दें तो विद्यार्थियों को इस बात का अनुभव हो जायगा कि हम भी स्वतन्त्रता से अपना प्रबन्ध करने योग्य हैं। यह आवश्यक नहीं है कि दूसरों पर अवलम्बन करके ही हम उन विद्याओं को प्राप्त करें। इसके सिवा विद्यार्थियों को किताबी कीड़े न बना कर उपयोगी और उपकारी विद्या और कला-कौशल की शिक्षा देनी चाहिये। यह भी स्मरण रहे कि जिस प्रकार अमरीका के धनाढ्य पुरुष अपनी सम्पत्ति को जाति के उपकार के लिए अर्पण करते हैं, उसी प्रकार, हमें भी अपने धन का सदुपयोग करना चाहिये। बिना उसके भारत का कल्याण नहीं हो सकता।

एक बड़ी भारी शिक्षा जो हमको अमरीका से मिलती है वह आपस का प्रेम है। जैसे अमरीका में भिन्न भिन्न मतों के

विद्यार्थी एक ही कालेज में लिखते पढ़ते उठते बैठते और मिलते-जुलते हैं वैसेही हमारे देशमें भी होना चाहिए। प्रत्येक के हृदय में दूसरे के विचारों के लिए सन्मान होना उचित है, यदि कोई किसी बात में हमसे भिन्न मत रखता है तो उससे घृणा न करके, जिसमें हम और वह सहमत हैं, उसमें उसके साथ मिल कर काम करना चाहिए।

इति शुभम्

शुभ-समाचार

स्वामी सत्यदेव रचित पुस्तकों के प्रेमी यह जान करबड़े प्रसन्न होंगे कि स्वामी जी की सभी पुस्तकों का प्रकाशन साहित्योदय-कार्यालय प्रयाग से हो रहा है। गो कि और जगह से भी स्वामी जी की एकाध पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं लेकिन हमारे यहाँ सब से अधिक अर्थात् लगभग १० पुस्तकें तक प्रकाशित हो चुकी हैं। और आशा है कि शीघ्र उनकी पुस्तकों का संपूर्ण प्रकाशन हमारे यहां से हो जायगा। हम चाहते हैं कि स्वामी जी रचित सभी पुस्तकें एक जगह से मिलें ताकि ग्राहकों को मँगाने में सुभीता हो जाय। स्वामी सत्यदेव जी की पुस्तकों के अतिरिक्त और पुस्तकें भी हमारे यहाँ से मिलती हैं।

निवेदक

भवानीप्रसाद गुप्त

साहित्योदय-कार्यालय

प्रयाग।

स्वामी सत्यदेव रचित पुस्तकें।

हिन्दी का संदेश	१ आना
जातीय शिक्षा	१ आना
राष्ट्रीय संध्या	३ पैसा
वेदान्त का विजय मंत्र	१॥ आना
मनुष्य के अधिकार	८ आना
अमरीका-पथ-प्रदर्शक	८ आना
अमरीका के विद्यार्थी	४ आना
लेखन कला	१२ आना
अमरीका दिग्दर्शन	१ रुपया

यह उपर्युक्त पुस्तकें हमारे यहाँ से प्रकाशित हो चुकी हैं। इसके अतिरिक्त स्वामी जी रचित और पुस्तकें भी हमारे यहाँ से मिलती हैं। सूची पत्र मुफ़्त मँगाकर देखिये।

पता:—

मैनेजर

साहित्योदय-कार्यालय,

प्रयाग।